BAED- N- 101

Semester- I

शिक्षा और समाज

Education and Society

शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

अध्ययन बोर्ड			
प्रोफेसर मनोज कुमार सक्सेना (सदस्य) शिक्षा संकाय केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला हिमाचल प्रदेश	प्रोफेसर अरविन्द कुमार झा (सदस्य) शिक्षा संकाय इग्नू दिल्ली	प्रोफेसर रजनी रंजन सिंह (सदस्य) शिक्षा संकाय डॉ शकुन्तला मिसरा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ	डॉ डिगर सिंह फर्सवान (सदस्य) सह प्रोफेसर शिक्षा संकाय उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
डॉ0 दिनेश कुमार (सदस्य) सह प्रोफेसर शिक्षा संकाय उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	सुश्री ममता कुमारी (सदस्य) सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 कल्पना पाटनी लखेड़ा (सदस्य) सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ देबकी सिरोला (सदस्य) सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
डॉ सिद्धार्थ पोखरियाल सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड			

पाठ्यक्रम संयोजक एवं संपादक	इकाई संयोजक एवं संपादक
डॉ0 दिनेश कुमार सह प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 दिनेश कुमार सह प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड

इकाई लेखन	ईकाई संख्या	इकाई लेखन	ईकाई संख्या
डॉ0 दिनेश कुमार सह प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	6,7,8,9,10,11,12,13,14.	डॉ0 कल्पना पाटनी लखेड़ा सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	15
सुश्री ममता कुमारी सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी उत्तराखण्ड	4.	डॉ देबकी सिरोला सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	16
डॉ0 दीप्ती जौहरी विभागाध्यक्ष (शिक्षा) बरेली कालेज बरेली	1, 2, 3	डॉ दिनेश चन्द्र कांडपाल सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	17
प्रोफेसर के. बी. बुधोरी विभागाध्यक्ष (शिक्षा विभाग) एस. जी. आर. आर.पी.जी. कालेज देहरादून उत्तराखण्ड	5		

ISBN-13-978-93-84632-55-7

समस्त लेखों/पाठों से सम्बंधित किसी भी विवाद के लिए सम्बंधित लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा।

कापीराइट: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय प्रकाशन वर्ष: 2014 पुन: मुद्रण 2023

संस्करण: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति

प्रकाशक: एम0पी0डी0डी0,उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139, (नैनीताल)

शिक्षा और समाज
Education and Society
BAED- N-101
Semester- I

इकाई सं०	इकाई का नाम	पृष्ठ सं०
01	शिक्षा: अर्थ, कार्य एवं क्षेत्र (Education: Meaning, Function and Scope)	1-17
02	शिक्षा एक प्रणाली, प्रक्रिया एवं अनुशासन के रूप में (Education as a system, education as a process and education as a discipline)	18-27
03	शिक्षा के उद्देश्य- वैयक्तिक उद्देश्य, सामाजिक उद्देश्य एवं प्रजातांत्रिक उद्देश्य (Aims of Education- Individual Aims and Social Aims including Democratic Aims)	28-41
04	शिक्षा सम्बंधी संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provisions with Regard to Education)	42-54
05	विद्यालयः समाज का लघु रूप (School as a miniature society)	55-68
06	शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन Education and Social Change	69-79
07	शिक्षा के साधन : औपचारिक, अनौपचारिक एवं निरौपचारिक (Agencies of Education: Formal, Informal and Non-formal)	80-92
08	दर्शन का अर्थ और भारतीय दर्शन, अध्यापक के लिय शिक्षा का महत्व (Meaning of Philosophy and Educational Philosophy, Importance of Education for Teacher)	93-105
09	आदर्शवाद और शिक्षा : उद्देश्य, प्रक्रिया, पाठ्यक्रम, अनुशासन व अध्यापक की भूमिका (Idealism and Education: Aims, Process, Curriculum, Discipline and Role of Teacher)	106-120
10	प्रकृतिवाद और शिक्षा: उद्देश्य, प्रक्रिया, पाठयक्रम, अनुशासन, अध्यापक की भूमिका (Naturalism and Education: Aims, Progress, Curriculum, Discipline, Role/place of Teacher)	121-134
11	प्रयोजनवाद और शिक्षा : उद्देश्य, प्रक्रिया, पाठ्यक्रम, अनुशासन, अध्यापक की भूमिका (Pragmatism and Education: Aims, Process, Curriculum, Discipline, Role of Teacher)	135-150
12	क्षेत्रीय विकास और राष्ट्रीय एकता में शिक्षा की भूमिका (Role of Education for	151-162

	Regional Development and National Integration)	
13	शिक्षा द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय एकता में सम्बर्धन (Enhancement of International Integration Through Education)	163-177
14	शिक्षा द्वारा मानव संसाधन विकास, शिक्षा और रोजगार (Education for Human Resource Development, Education and Employment)	178-189
15	नई शिक्षा नीति का आधारभूत ढ़ाचा (5+3+3+4) (Structure of National System of Education (5+3+3+4)	190-206
16	प्रारम्भिक शिक्षा का सारभौमिकरण (Universalization of Elementary Education)	207-230
17	बेसिक शिक्षा व प्रारम्भिक शिक्षा की समस्याएँ, समस्याओं के निदान हेतु उपचार व सुझाव (Problems of Basic & Elementary Education, Remedies and Suggestions for Diagnosing Problems)	231-244

इकाई-1-शिक्षा:अर्थ,कार्य एवं क्षेत्र (Education: Meaning, Function and Scope)

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 शिक्षा का अर्थ
1.3.1 शिक्षा का विश्लेषणात्मक व दार्शनिक अर्थ
1.3.2 शिक्षा का समाजशास्त्रीय व राजनैतिक अर्थ
1.3.3 शिक्षा का आर्थिक व मनोवैज्ञानिक अर्थ
1.3.4 शिक्षा का समग्र एवं वास्तविक अर्थ
1.4 शिक्षा के कार्य
1.4.1 शिक्षा के सामान्य कार्य
1.4.2 मानवीय जीवन में शिक्षा के कार्य
1.4.3 सामाजिक जीवन में शिक्षा के कार्य
1.4.4 राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा में कार्य
1.5 शिक्षा का विषय क्षेत्र
1.5.1 शैक्षिक समस्याएं
1.5.2 अध्ययन के विशिष्ट क्षेत्र
1.6 सारांश
1.7 शब्दावली
1.8 अभ्यास
1.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मानव प्रकृति की सर्वोत्तम रचना है जो अपने साथ कुछ जन्मजात शक्तियाँ लेकर पैदा होता है। शिक्षा के द्वारा मानव की इन जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। यह कार्य मानव के जन्म से ही उसके परिवार द्वारा अनौपचारिक रूप से तत्पश्चात विद्यालय भेजकर औपचारिक रूप से प्रारम्भ कर दिया जाता है। विद्यालय के साथ-साथ उसे परिवार एवं समुदाय में भी कुछ-न कुछ सिखाया जाता रहा है और सीखने - सिखाने का यह क्रम विद्यालय छोड़ने के बाद भी चलता रहता है और जीवन भर चलता है। अपने वास्तविक अर्थ में किसी समाज में सदैव चलने वाली सीखने सिखाने की यह सप्रयोजन प्रक्रिया ही शिक्षा है। इस इकाई में आप शिक्षा के विभिन्न अर्थ यथा-शाब्दिक, संकुचित, व्यापक, विश्लेषणात्मक, समग्र एवं व्यापक अर्थ से अवगत हो सकेंगे साथ ही इन अर्थ को परिभाषित करने वाले विभिन्न दृष्टिकोणों के बारे में जान सकेगें।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि आप-

i. शिक्षा के संकुचित एवं व्यापक अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
ii. शिक्षा के अर्थ को भारतीय दृष्टिकोण एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण के आधार पर स्पष्ट कर सकेंगे।
iii. शिक्षा के सामान्य, मानवीय, सामाजिक, राष्ट्रीय जीवन में कार्य को परिभाषित कर सकेंगे।
iv. शिक्षा के विषय विस्तार के आधार पर शिक्षा की प्रक्रिया एवं स्वरूप को समझ सकेंगे।

भाग एक

1.3 शिक्षा का अर्थ-

भारतीय दृष्टिकोण में शिक्षा शब्द संस्कृत भाषा की शिक्ष् धातु में अ प्रत्यय लगने से बना है। शिक्ष् का अर्थ है सीखना और सिखाना। इसलिये शिक्षा का अर्थ हुआ- सीखने - सिखाने की प्रक्रिया। यदि हम शिक्षा के लिये प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द एजूकेशन पर विचार करें तो उसका भी यही अर्थ निकलता है। एजूकेशन शब्द लैटिन भाषा के एजूकेटम (Educatom) शब्द से बना है और एजूकेटम शब्द उसी भाषा के (E) तथा ड्यूको (Duco) शब्दों से मिलकर बना है। ए का अर्थ है अन्दर से और ड्यूको का अर्थ है आगे बढ़ाना। इसलिये एजूकेशन शब्द का अर्थ हुआ- बच्चे की आन्तरिक शक्तियों को बाहर की ओर प्रकट करना। इस प्रकार शिक्षा शब्द का समग्र रूप से अर्थ बालक की जन्मजात शक्तियों का सर्वांगीण विकास है।

शिक्षा का व्यापक अर्थ - प्रत्येक प्राणी जन्म के बाद सर्वप्रथम पहला पाठ मां की गोद में पढ़ता है तत्पश्चात अपने घरेलू वातावरण तथा आस-पास के पर्यावरण जिसके भी संपर्क में आता है, उससे कुछ-न-कुछ सीखता रहता है। इस सीखने व अनुभव का परिणाम यह होता है कि वह धीरे-धीरे विभिन्न प्रकार से अपने भौतिक , सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण से अपना सामंजस्य स्थापित करता है। इस प्रकार वस्तुतः सीखने -सिखाने की यह प्रक्रिया जीवन जीवनपर्यन्त चलती रहती है। शिक्षा के व्यापक अर्थ को प्रकट करने में कहा जा सकता है कि शिक्षा किसी समाज में सदैव चलने वाली वह सोद्देश्य समाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियो का विकास, उसके ज्ञान एवं कला-कौशल में वृद्वि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते है।

विद्वान जे.एस. मैकेन्जी के शब्दों में:- व्यापक दृष्टि से शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है और जीवन के प्रत्येक अनुभव के द्वारा इसका विकास होता है।

शिक्षा का संकुचित अर्थ:- शिक्षा के संकुचित या सीमित अर्थ के अनुसार शिक्षा का अभिप्राय, बालक को विद्यालय में दी जाने वाली शिक्षा से है। दूसरे शब्दों में संकुचित अर्थ में शिक्षा किसी समाज में एक निश्चित समय तथा निश्चित स्थान (विद्यालय) में सुनियोजित ढंग से चलने वाली वह सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला - कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है, और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते हैं।

विद्वान जे0एस0 मेंकेंजी के अनुसार- संकुचित अर्थ में शिक्षा का अभिप्राय -हमारी शक्तियों के विकास एवं उन्नति के लिये चेतनापूर्वक किये गये किसी भी प्रयास से हो सकता है।

1.3.1 शिक्षा का विश्लेषणात्मक व दार्शनिक अर्थ :-

शिक्षा का विश्लेषणात्मक:- शिक्षा के विश्लेषणात्मकअर्थ को स्पष्ट करने के लिये मूल भूमिका दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों , राजनीतिशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों एवं वैज्ञानिकों ने अदा की है और इन सबने शिक्षा का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर इनकेद्वारा उद्धाटित तथ्यों के आधार पर शिक्षा के स्वरूप केा समझने एवं परिभाषित करने का प्रयत्न करेंगे।

शिक्षा का दार्शनिक अर्थ:- दार्शनिकों की दृष्टि से शिक्षा मनुष्य जीवन के अन्तिम उद्देश्य की प्राप्ति का साधन होती है। और चूंकि मनुष्य जीवन के अन्तिम उद्देश्य के सम्बन्ध में दार्शनिकों में मतैक्य नहीं है अतः निम्नलिखित विभिन्न परिभाषायें शिक्षा के सम्बन्ध में दी गयी हैं।

जगतगुरू शंकराचार्य की दृष्टि से -

शिक्षा वह है जो मुक्ति दिलाये। (सः विद्या या विमुक्तये)

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार -

मनुष्य की अर्न्तनिहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।

यूनानी दार्शनिक प्लेटो शरीर व आत्मा दोनों के महत्व को स्वीकार करते हैं तथा कहते हैं शिक्षा का कार्य मनुष्य के शरीर और आत्मा को वह पूर्णता प्रदान करता है जिसके कि वे योग्य हैं।

युगपुरूष महात्मा गॉधी ने शरीर, मन और आत्मा, तीनो के विकास पर समान रूप से बल देते हुये कहा है -

शिक्षा से मेंरा अभिप्राय बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है।

प्रकृतिवादी दार्शनिक हरबर्ट स्पेन्सर के अनुसार -

शिक्षा का अर्थ अन्तःशक्तियों का बाह्य जीवन से समन्वय स्थापित करना है।

प्रयोजनवादी मनुष्य को सामाजिक प्राणी मानते हैं और यह मानते हैं कि शिक्षा के द्वारा मनुष्य में वर्तमान में अनुकूलन करने एवं भविष्य के समाज का निर्माण करने की क्षमता का विकास करना चाहिये। प्रयोजनवादी दार्शनिक जॉन डीवी के शब्दों में -

शिक्षा व्यक्ति की उन सब योग्यताओं का विकास है जो उसमें अपने पर्यावरण पर नियन्त्रण रखने तथा अपनी सम्भावनाओं को पूर्ण करने की सामर्थ्य प्रदान करें।

1.3.2 शिक्षा का समाजशास्त्रीय व राजनैतिक अर्थ –

शिक्षा का समाजशास्त्रीय अर्थ:- समाजशास्त्रियों के मतानुसार शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया मानी जाती है क्योकि इनके अनुसार समाज के अस्तित्व पर ही शिक्षा का अस्तित्व निर्भर करता है इस दृष्टि से शिक्षा की निम्नलिखित परिभाषायें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं यथा -

(1) शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण एवं समायोजनपूर्ण प्रक्रिया है।

(2) शिक्षा एक विकासात्मक प्रक्रिया है।

(3) शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है।

(4) शिक्षा एक द्विध्रुवीय प्रक्रिया है।

(5) शिक्षा एक त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है।

(6) शिक्षा सांस्कृतिकरण है।

(7) शिक्षा एक अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है।

शिक्षा का राजनैतिक अर्थ - शिक्षा के राजनैतिक दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा, राष्ट्र निर्माण का साधन है। राष्ट्र का निर्माण , श्रेष्ठ नागरिकों के निर्माण से ही संभव है जिसके लिये शिक्षा से यह अपेक्षा की जाती है कि वह व्यक्ति के अन्दर राष्ट्रप्रेम उत्पन्न करे।

1.3.3 शिक्षा का आर्थिक व मनोवैज्ञानिक अर्थ –

शिक्षा का आर्थिक अर्थ –

अर्थशास्त्रियों के विचार में शिक्षा एक उत्पादक प्रक्रिया है जिसमें शिक्षा का वह आर्थिक निवेश है जिसके द्वारा व्यक्ति में उत्पादन एवं सगंठन के कौशलों का विकास किया जाता है और इस प्रकार व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की उत्पादन क्षमता बढ़ाई जाती है और इनका आर्थिक विकास किया जाता है।

शिक्षा का मनोवैज्ञानिक अर्थ - मनोवैज्ञानिकों के विचार में मनुष्य एक मनोशारीरिक प्राणी है जो जन्म से कुछ शक्तियां लेकर पैदा होता है अतः शिक्षा के द्वारा सर्वप्रथम इन शक्तियों का विकास होना चाहिये। जर्मन शिक्षाशास्त्री पैस्टालॉजी के शब्दों में इसे निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है –"शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक, समरस एवं प्रगतिशील विकास है।"

फ्रोबेल के अनुसार –"शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक अपनी आन्तरिक शक्तियों को बाहर कीओर प्रकट करता है।"

1.3.4 शिक्षा का समग्र एवं वास्तविक अर्थ-

शिक्षा के विषय में दार्शनिको, समाजशास्त्रियों, राजनीतिशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों और वैज्ञानिकों के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोंण हैं। उपरोक्त सभी दृष्टिकोणों से शिक्षा की प्रकृति के विषय में ये तथ्य उजागर होते हैं कि शिक्षा एक सोद्देश्य, अविरल, गतिशील, व विकास की प्रक्रिया है। उपर्युक्त दी गई सभी परिभाषाओं को यदि सार रूप में प्रस्तुत किया जाये तो इसे निम्न रूप में परिभाषित करना चाहिये -

शिक्षा किसी समाज में सदैव चलने वाली वह सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान, एवं कला - कौशल में वृद्धि तथा व्यवहार में परिवर्तन

किया जाता है और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते हैं।

शिक्षा की उपरोक्त परिभाषा अपने आप में पूर्ण एवं समन्वित दृष्टिकोंण समाहित किये हुये हैं तथा शिक्षा के अर्थ को पर्याप्त रूप से स्पष्ट करती है।

अपनी उन्नति जानिए ((Check your Progress))

रिक्त स्थनो की पूर्ति कीजिए।

प्रश्न 1 प्रत्येक प्राणी जन्म के बाद सर्वप्रथम पहला पाठ .....की गोद में पढ़ता है।
प्रश्न 2 शिक्षा के द्वारा व्यक्ति एवं समाज दोनों निरन्तर विकास करते है।

प्रश्न 3 शिक्षा के द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला-कौशल में वृद्धि एवं .....परिवर्तन किया जाता है,

1.4 शिक्षा के कार्य

शिक्षा एक बहुमुखी प्रक्रिया है। कोई व्यक्ति, समाज अथवा राज्य शिक्षा के द्वारा जो प्राप्त करना चाहता है वे ही शिक्षा के उद्देश्य होते है और इन उद्देश्यों की पूर्ति करना ही शिक्षा के कार्य होते हैं। अनेक शिक्षाविदों ने मानव एवं समाज दोनों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर शिक्षा के विभिन्न कार्य निर्धारित किये हैं। जान डीवी के अनुसार शिक्षा का कार्य -असहाय प्राणी के विकास में सहायता पहुचाना है, ताकि वह सुखी, नैतिक और कुशल मानव बन सके।

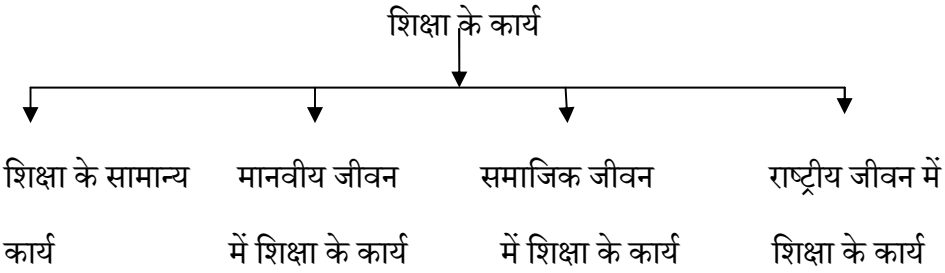

1.4.1 शिक्षा के सामान्य कार्य-

शिक्षा के कुछ सामान्य कार्य निम्नलिखित है:

(1) जन्मजात शक्तियों का प्रगतिशील विकास- बालक कुछ अर्न्तनिहित शक्तियों जैसे - प्रेम, जिज्ञासा, तर्क, कल्पना, एवं आत्म सम्मान आदि को लेकर जन्म लेता है। शिक्षा इन अर्न्तनिहित शक्तियों का विकास करती है। पेस्टलॉजी के विचार से इसको बल मिलता है -

शिक्षा मनुष्य की अर्न्तनिहित शक्तियो का स्वभाविक, सामंजस्यपूर्ण एवं प्रगतिशील विकास है।

(2) भाषा, ज्ञान, मानसिक शक्तियों का विकास- शिक्षा द्वारा व्यक्तित्व के निर्माण के लिए बालक के शारीरिक, मानसिक, नैतिक आध्यात्मिक एवं संवेगात्मक आदि पक्षों का विकास किया जाना चाहिए।

टी0पी0नन के अनुसार -शिक्षा, वैयक्तिकता का पूर्ण विकास है, जिससें कि व्यक्ति अपनी पूर्ण योग्यता अनुसार मानव जीवन को योग दे सके।

(3) नैतिक एवं चारित्रिक विकास एवं मूल्य शिक्षा- चरित्र का अर्थ है - आन्तरिक दृढ़ता और व्यक्तित्व की एकता। शिक्षा का उद्देश्य - ज्ञानार्जन करना और शारीरिक शक्ति बढ़ाना ही नही वरन् उत्तम चरित्र का निर्माण करना भी है।

जर्मन शिक्षाशास्त्री हरबार्ट के अनुसार - अच्छे नैतिक चरित्र का विकास ही शिक्षा है।

(4) संस्कृति का संरक्षण, हस्तान्तरण एवं विकास- किसी समाज की संस्कृति एवं सभ्यता का संरक्षण, आने वाली पीढ़ी को हस्तान्तरण एवं सांस्कृतिक विकास का कार्य करने में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

ओटावे के अनुसार- शिक्षा का एक कार्य समाज के सांस्कृतिक मूल्यों और व्यवहार के प्रतिमानों को अपने तरूण और कार्यशील सदस्यों को प्रदान करना है।

(5) वयस्क जीवन की तैयारी - शिक्षा बालक को वयस्क जीवन के लिए तैयार करती है। शिक्षा के इस पहलू पर बल देते हुये मिल्टन ने लिखा है - मैं उसी को पूर्ण शिक्षा कहता हू जो मनुष्य को शांति और युद्व के समय व्यक्तिगत और सार्वजनिक - दोनों प्रकार के सब कार्यों को उचित रूप से करने के योग्य बनाती है।

(6) उत्तम नागरिकों का निर्माण- उत्तम नागरिक, उत्तम राज्य का आधार स्तम्भ हैं। यही कारण है कि प्रत्येक राज्य आशा करता है कि उसके नागरिक-ईमानदार, परिश्रमी, देशभक्त और कर्तव्य तथा दायित्वों को भली प्रकार समझते हों तथा इन गुणो का विकास शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है।

(7) सामाजिक परिवर्तन, सुधार, व उन्नति- समाज द्वारा बालक की शिक्षा का आयोजन इसलिए किया जाता है, ताकि बालक को न केवल समाज के अनुकूल बनाये, वरन समाज के नियमों और

सिद्वान्तो का ज्ञान प्राप्त करके उसका सुधार करें और उसे उचित दिशा में आगे बढ़ायें। डीवी के शब्दों में -शिक्षा में अति निश्चित और अल्पतम साधनों द्वारा सामाजिक औरसंस्थागत उद्देश्यों के साथ-साथ समाज के कल्याण, प्रगति और सुधार में रूचि का पुष्पित होना पाया जाता है।

उपरोक्त पंक्तियों में शिक्षा के कुछ कार्यों का वर्णन किया गया है परन्तु शिक्षा का कार्य क्षेत्र अति व्यापक है। शिक्षा की प्रक्रिया स्थिर न होकर सदैव चलने वाली है अतः शिक्षा का कार्य निर्धारित करना आसान नही है।डा0 जाकिर हुसैन के अनुसार शिक्षा का प्रमुख कार्य यह है - शिक्षा का कार्य बालक के मस्तिष्क को शुद्व, नैतिक और बौद्विक मूल्यों को अनुभव करने में इस प्रकार सहायता देना है कि वह इन मूल्यों से प्रेरित होकर, इनको सर्वोत्तम प्रकार से अपने कार्य और जीवन में प्राप्त करे।

1.4.2 मानव जीवन में शिक्षा के कार्य-

महान दार्शनिक डा0 राधा कृष्णन के अनुसार- शिक्षा को मानवीय होना चाहिए। इसमें मात्र बौद्विक प्रशिक्षण का ही स्थान नहीं होना चाहिए वरन् आत्मानुशासन तथा हृदय की पवित्रता पर भी बल दिया जाना चाहिए।भारतीय समाज की वर्तमान आवश्यकताओं, मूल्यों, गुणो, समस्याओं तथा उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुये मानव जीवन के निम्न कार्य हैं -

(1) मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति - मानव जीवन में शिक्षा के कार्य का महत्व बताते हुये स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है - शिक्षा का कार्य यह पता लगाना है कि जीवन की समस्याओं को किस प्रकार हल किया जाय और आधुनिक सभ्य समाज का गम्भीर ध्यान इसी बात में लगा हुआ है। शिक्षा का कार्य व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति करने के अतिरिक्त उसे समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने में मदद देना तथा ऐसे अवसर प्रदान करना है जिससे कि वह उन्नति कर सके।

(2) आत्मनिर्भरता की प्राप्ति- शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कार्य व्यक्ति को अपना जीवन-यापान कर पाने में सक्षम बनाना हैं। स्वामी विवेकानन्द के अनुसारहमें उस शिक्षा की आवश्यकता हैं जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता हैं मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्वि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।

(3) व्यावसायिक कुशलता की प्राप्ति- मानव जीवन में शिक्षा का एक कार्य, छात्रों को व्यावसायिक कुशलता की प्राप्ति में सहायता प्रदान करना है। इससे राष्ट्रीय आय और उत्पादकता में वृद्वि होती है।

(4) वातावरण से समायोजन एवं परिवर्तन- शिक्षा, व्यक्ति को वातावरण के साथ समायोजन करना सिखती है तथा वातावरण को परिवर्तन योग्य बनाती है।

जॉन डीवी के अनुसार -शिक्षा व्यक्ति में उन क्षमताओ का विकास है जो उसको अपने वातावरण को नियंत्रित तथा अपनी भावी सम्भावनाओं को पूर्ण करने के योग्य बनायेगी।

(5) जीवन के लिए तैयारी - शिक्षा जीवन के संघर्षो से निपटने के लिए तैयार करती हैं विलमॉट का कथन है -'' शिक्षा जीवन की तैयारी है।'' अब यदि शिक्षा-जीवन की तैयारी है, तो शिक्षा का कार्य है - बच्चो को जीवन की कठिनाई व संघर्षो का सामना करने हेतु तैयार करना। शिक्षा के इस कार्य पर अपने विचार व्यक्त करते हुये स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है -'' यदि कोई मनुष्य केवल कुछ परीक्षायें पास कर सकता हैं। और अच्छे व्याख्यान दे सकता हो तो आप उसको शिक्षित समझते हैं। क्या वह शिक्षा-शिक्षा कहलाने के योग्य है, जो सामान्य जनसमूह को जीवन के संघर्ष के लिए अपने आप को तैयार करने में सहायता नही देती है, और उनमें शेर का सा साहस उत्पन्न नही करती है।''

(6) कार्य का व्यावहारिक ज्ञान - शिक्षा का अन्तिम और महत्वपूर्ण कार्य है - बालकों को विभिन्न कार्य क्षेत्रों का व्यवहारिक ज्ञान देना। हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था में सिद्धांत पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाता है फलतः बालक को जीवन के किसी भी कार्य-क्षेत्र का व्यावहारिक ज्ञान नही प्राप्त होता है।

अन्ततः हम कह सकते है कि मानव जीवन में शिक्षा का कार्य समाज के सदस्यों की उन सब शक्तियों, क्षमताओं व गुणों का विकास करना है, जो उनमें है, जिससे कि वे निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर बढ़ सकें।

1.4.3 सामाजिक जीवन में शिक्षा के कार्य -

चूंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अतः समाज के साथ निर्वाह करने के लिए शिक्षा को अनेक कार्य करने पड़ते हैं। जिसमें सें कुछ कार्य मुख्यतः निम्नलिखित है -

(1) समाज के साथ अनुकूलन

(2) सामाजिक कुशलता की उन्नति एवं सुधार

(3) सामाजिक कर्तव्यों की पूर्ति

(4) संस्कृति और सभ्यता का विकास

(5) व्यक्तिगत हित को सामाजिक हित से दूर रखना।

(6) सामाजिक भावना की जागृति

(7) सामाजिक गुणो का विकास

प्रत्येक व्यक्ति समाज में ही जन्म लेता है, समाज में ही पल्लवित होकर जीवन व्यतीत करता है और समाज में ही उसकी जीवन लीला समाप्त हो जाती है ऐसी स्थिति में शिक्षा का महत्वपूर्ण कर्तव्य हो जाता है कि बालकों में सामाजिक भावना जागृत करें, उनमें दया, परोपकार, सहनशीलता, सौहर्द, सहानुभूति, अनुशासन इत्यादि सामाजिक गुणों का विकास करें।

एच0गार्डन के अनुसार- शिक्षा को यह जानने की आवश्यकता नही है कि वह सामाजिक प्रक्रिया को उन व्यक्तियों के सम्मुख लाने की दिशा में आगे बढ़े जो इसके लिए अयोग्य है।शिक्षा समाज को दिशा देती है। ओटावे के अनुसार- यह निःसंदेह सत्य है कि सामाजिक परिवर्तन में शिक्षा को एक महत्वपूर्ण कार्य करना पड़ता है।

1.4.4 राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्य -

किसी राष्ट्र का उत्थान एवं पतन उसके व्यक्तियों की श्रेष्ठता व हीनता से निर्धारित होता है।

मैकाइवर एवं पेज के अनुसार- '' राष्ट्र का गुण, उसकी सामाजिक इकाइयों का गुण है, अर्थात सामाजिक इकाइयों का सामूहिक जीवन ही राष्ट्रीय जीवन है। यदि ईंधन ही खराब है तो ज्योति कैसे तेज हो सकती है - अर्थात यदि सामाजिक इकाइयॉ निर्बल है, तो राष्ट्र कैसे दैदीप्यमान हो सकता है।''

राष्ट्र की उन्नति तभी हो सकती है, जब उसके नागरिक श्रेष्ठ हों। उनको ऐसा बनाना ही राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का कार्य है।

(1) नेतृत्व के लिए प्रशिक्षण - राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का मुख्य कार्य है - व्यक्तियों को इस प्रकार प्रशिक्षित करना है कि वे सामाजिक, राजनीतिक, औद्योगिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में नेतृत्व का कार्य कर सकें।

(2) कुशल श्रमिकों की पूर्ति - राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का कार्य - कुशल श्रमिकों की पूर्ति करना है। ऐसे श्रमिक व्यापार और उद्योग के उत्पादन को बढ़ायेंगे। फलतः राष्ट्रीय सम्पत्ति में वृद्वि होगी।

हुमायू, कबीरके अनुसार -'' शिक्षित श्रमिक अधिक उत्पादन में योग देंगे और इस प्रकार उद्योग तथा व्यवसाय - दोनों की अधिक उन्नति होगी।''

(3) राष्ट्रीय एकता का विकास - शिक्षा का कार्य राष्ट्रीय एकता का विकास करना है। शिक्षित व्यक्ति के सोचने का क्षेत्र व्यापक हो पाता है वह जातीवाद, साम्प्रदायिकता, अन्धविश्वास, क्षेत्रीयता आदि में विश्वास नहीं करता है तथा वह एक दूसरे के साथ भाई-चारे का व्यवहार करता है तथा देश के हित को सर्वोपरि समझता है।

जवाहरलाल नेहरू के अनुसार - राष्ट्रीयता एकता के प्रश्न में जीवन की प्रत्येक वस्तु आ जाती है। शिक्षा का स्थान सबसे ऊपर है और यही आधारशिला है।

(4) भावात्मक एकता का विकास - देश में राष्ट्रीय एकता स्थापित करने के लिए देशवासियों में भावात्मक एकता का विकास करना बहुत आवश्यक है। शिक्षा हमारे चारों ओर भावात्मक एकता का वातावरण निर्मित करती हैं। नागरिकों में उचित संवेगो एवं एकता का विकास करती हैं।

(5) सांस्कृतिक विरासत से सम्पर्क - राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का प्रमुख कार्य बालक को राष्ट्र की संस्कृति के सम्पर्क में लाना है। शिक्षा बालकों को उनके राष्ट्र की संस्कृति का ज्ञान कराती है तथा देश की संस्कृति की विकास प्रक्रिया से अवगत कराती है।

डा0 जाकिर हुसैन के अनुसार - ''केवल संस्कृति की सामग्री द्वारा ही शिक्षा की प्रक्रिया को गति दी जा सकती है। केवल इसी सामग्री से मानव-मस्तिष्क का विकास हो सकता है।''

(6) व्यक्तिगत हित को सार्वजनिक हित से निम्न रखना- राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कार्य है कि वह लोगों को ऐसा प्रशिक्षण दे कि अपने हितों को अपने समूह, समाज, देश व राष्ट्र के हितो से निम्न समझे।

मनुष्य को इस प्रकार प्रशिक्षित करना है कि वह अनुशासित रहे व हर प्रकार का बलिदान करने के लिए तैयार रहे, तभी वह सार्वजनिक हित में योग देकर देश का कल्याण कर सकता है।

(7) योग्य नागरिक का निर्माण करना - शिक्षा का कार्य प्रत्येक नागरिक में उचित नागरिकता का विकास करना है। शिक्षा द्वारा प्रत्येक बालक में देशभक्ति, अधिकारों और कर्तव्यों को समझने और निभाने की क्षमता, देश की बागडोर सम्भालने की योग्यता इत्यादि को उत्पन्न किया जाता है।डा0 जाकिर हुसैन के अनुसार -''प्रजातान्त्रिक समाज में यह आवश्यक है कि व्यक्ति नैतिक और भौतिक दोनों प्रकार से समाज के जीवन को उत्तम बनाने के सम्मिलित उत्तरदायित्वो को सहर्ष स्वीकार करे।''

अतः स्पष्ट है कि शिक्षा मानवीय, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन में अपने विभिन्न कार्यों को सम्पन्न करती है। ये सभी एक दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते है। इस संदर्भ में बोसिंग जीका विचार है कि- '' शिक्षा का कार्य व्यक्ति और समाज के बीच ऐसा सामजस्य स्थापित करना है जिसमें व्यक्ति अपने को मोड़ सके और परिस्थतियों को पुर्नव्यवस्थित कर ले जिससे दोनों को अधिकाधिक स्थाई सन्तोष प्राप्त हो सकें।''

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

ये परिभाषाये किस विद्धान की है।

प्रश्न 4 "शिक्षा का कार्य -असहाय प्राणी के विकास में सहायता पहुचाना है, ताकि वह सुखी, नैतिक और कुशल मानव बन सके।"

प्रश्न 5 "शिक्षा मनुष्य की अर्न्तनिहित शक्तियो का स्वभाविक, सामंजस्यपूर्ण एवं प्रगतिशील विकास है।"

प्रश्न 6 '' शैक्षिक समाजशास़्त्र शिक्षा और समाजशास्त्र के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन है।''

प्रश्न 7 '' शैक्षिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र के सिद्धान्तों को शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया पर क्रियान्वित करता है। ''

1.5 शिक्षा का विषय विस्तार-

शिक्षाशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसमें शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप एवं उसके विभिन्न अंगों तथा समस्याओं का दार्शनिक, समाजशास्त्रीय, राजनैतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोणों से अध्ययन किया जाता है। जहॉ तक शिक्षाशास्त्र के अध्ययन क्षेत्र की बात है, वह बड़ा व्यापक है, परन्तु इस व्यापक क्षेत्र में हमने अब तक जो कुछ सोचा विचारा है, वह उसकी विषयवस्तु है। शिक्षाशास्त्र के अध्ययनक्षेत्र एवं विषयवस्तु को सामान्यतः निम्नलिखित भागों में बाँटा जाता है -

शिक्षा दर्शन- मानव जीवन बड़ा रहस्यमय है, जब तक हम उसके रहस्य को नहीं समझते तब तक हम यह निश्चित नहीं कर सकते कि हमें क्या सीखना है और क्या सिखाना है। इसलिए शिक्षाशास्त्र के अन्तर्गत जीवन के प्रति जो विभिन्न दृष्टिकोण है, उनका और उनके आधार पर शिक्षा के स्वरूप, शिक्षा के उद्देश्य और शिक्षा की पाठ्यचर्या आदि का अध्ययन किया जाता है। शिक्षाशास्त्र के इस भाग को शिक्षादर्शन कहते हैं।

शैक्षिक समाजशास्त्र- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह जो कुछ भी सीखता है समाज के बीच रहकर सीखता है उसके आचार-विचार को प्रभावित करने में समाज और सामाजिक संगठनों का विशेष हाथ रहता है। 'दूसरी ओर शिक्षा समाज पर नियन्त्रण रखती है और उसका विकास करती है। शिक्षाशास्त्र के अन्तर्गत समाज के स्वरूप, समाज और शिक्षा के आपसी सम्बन्ध, विभिन्न सामाजिक संगठनों एवं शिक्षा की प्रक्रिया में उनके कार्यों, समाज और विद्यालयों के सम्बन्धों, शिक्षा के सामाजिक कार्यों और शिक्षा तथा सामाजिक परिवर्तन के आपसी सम्बन्ध आदि का अध्ययन किया जाता है। इस अध्ययन क्षेत्र को शैक्षिक समाजशास्त्र कहते हैं।

जैसा कि ब्राउन ने कहा है -

'' शैक्षिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र के सिद्धान्तों को शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया पर क्रियान्वित करता है। ''

ओटावे ने शैक्षिक समाजशास्त्र को परिभाषित करते हुए कहा है:-

'' शैक्षिक समाजशास्त्र शिक्षा और समाजशास्त्र के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन है।''

शिक्षा मनोविज्ञान - आज शिक्षा की प्रक्रिया में बालक को बड़ा महत्व दिया जाता है। उसके शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एंव सामाजिक विकास के आधार पर ही उसकी शिक्षा व्यवस्था की जाती है। इन सबको समझने के लिए हमें मनोविज्ञान का सहारा लेना पड़ता है। मनोविज्ञान का वह भाग जिसमें बालक के विकासक्रम, सीखने की प्रक्रिया और अन्य शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है, उसे शिक्षा मनोविज्ञान कहते हैं। इसके अर्न्तगत बच्चों की प्रकृतिय उनकी योग्यता, रूचियों और अभिरूचियों तथा स्मृति, विस्तृति, चिन्तन और कल्पना आदि शक्तियों का अध्ययन किया जाता है। और शिक्षा की प्रक्रिया में उनके उपयोग की सीमा निश्चित की जाती है। शिक्षा मनोविज्ञान में बच्चो की बुद्धि और उनके व्यक्तित्व के विकास की विधियॉ एवं उनके मापने की विधियाँ तथा सीखने की प्रक्रिया के स्वरूप, विधियों एवं दशाओं का भी विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

कोलेसनिक महोदय के अनुसार-

'शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षा के क्षेत्र में मनोविज्ञान की खोजों और सिद्धान्तों का प्रयोग है।'

स्किनर के अनुसार -

'शिक्षा मनोविज्ञान मानवीय व्यवहार का शैक्षिक परिस्थितियों में अध्ययन है।'

लिण्डग्रेन के अनुसार -

शिक्षा मनोवैज्ञानिकों का सम्बन्ध तीन केन्द्र बिन्दुओं से है और वह हैं -

(1) शिक्षार्थी

(2) सीखने का प्रक्रम

(3) सीखने की परिस्थितियाँ

शिक्षा का इतिहास - वर्तमान की रचना अतीत की उपलब्धियों के आधार पर ही जाती है इसलिए अतीत का अध्ययन आवश्यक होता है। शिक्षाशास्त्र के अन्तर्गत हम शिक्षा के इतिहास का अध्ययन

इसी दृष्टि से करते हैं। जब तक हम आदि काल से लेकर अब तक शिक्षा का जो स्वरूप रहा है, उसकी जो व्यवस्था रही हैं और उसके जो परिणाम रहे हैं, उस सबका विस्तृत अध्ययन नहीं करते तब तक हम अपने लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था नहीं कर सकते। अतः शिक्षाशास्त्र में इस सबका अध्ययन भी किया जाता है।

तुलनात्मक शिक्षा- आज मनुष्य केवल अपनी जाति के अनुभवों से ही लाभ नहीं उठाता अपितु दूसरे देशों और राष्ट्रों के लोगों के अनुभवों से भी लाभ उठाता है। शिक्षाशास्त्र के क्षेत्र में भी विभिन्न देशों की शिक्षा प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है और उनके गुणदोषों का विवेचन किया जाता है। इससे हम अपनी परिस्थितियों में अपने उपयोग की शिक्षा व्यवस्था का निर्माण करने में सफल होते हैं।

1.5.1 शैक्षिक समस्याएँ:-

इसके अन्तर्गत देश की वर्तमान शैक्षिक समस्याओं पर विचार किया जाता है और उनके समाधान के तरीके ढूंढे जाते हैं। आज हमारे देश में मुख्य शैक्षिक समस्याएँ हैं -देश के सभी क्षेत्रों में शिक्षा की समान सुविधाएँ उपलब्ध कराना, शिक्षा को व्यवसायिक स्वरूप प्रदान करना, धर्मनिरपेक्ष राज्य में धार्मिक और नैतिक शिक्षा का विधान करना तथा शिक्षा का राष्ट्रीयकरण करना आदि। जब तक शिक्षाशास्त्र के अन्तर्गत वर्तमान समस्याओं का अध्ययन कर उनके समाधान के तरीके नहीं सोचे जाते जब तक इसे विकासशील नहीं कहा जा सकता।

शैक्षिक प्रशासन एवं संगठन- नियमित शिक्षा की व्यवस्था विद्यालयों में होती है, इसलिए शिक्षाशास्त्र में इन विद्यालयों के संगठन और संचालन की विधियों का अध्ययन भी किया जाता है। इसके अन्तर्गत जिन तथ्यों का अध्ययन किया जाता है उनमें से मुख्य हैं –

शिक्षा का संचालन किसके हाथ में है, राज्य का इसमें किस प्रकार सहयोग हैय समाज किस प्रकार सहयोग कर रहा है, विद्यालयों का निर्माण कैसे करना चाहिए, विद्यालयो में विभिन्न शैक्षिक (पाठ्यचारी एवं सहपाठ्यचारी) क्रियाओं का संगठन किन सिद्धान्तों के आधार पर किया जाए कि उनसे अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सके, प्रधानाध्यापकों एवं अध्यापकों के गुण एवं कर्तव्यों और उनके आपसी सम्बन्धों को सुमधुर बनाने के उपाय, बच्चों में अनुशासन उत्पन्न करने के उपाय, बच्चों का प्रवेश, उनका वर्गीकरण औरउनकी उपलब्धियों का मूल्यांकन और कक्षोन्नति, विद्यालयों में बच्चों के स्वास्थ्य की रक्षा के उपाय और शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन। इन सबके अध्ययन से हम शिक्षा की प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने में समर्थ होते हैं।

शिक्षण कला एवं तकनीकी- शिक्षण प्रक्रिया में सीखना और सिखाना दोनों क्रियाएँ आती हैं। सीखना क्या है, इसकी विधियॉ कौन-कौन सी हैं, उत्तम सीखना कब सम्भव होता हैय इन सब प्रश्नों

के उत्तर हमें मनोविज्ञान देता है और उसके आधार पर भिन्न-भिन्न स्तरों के बच्चों को भिन्न-भिन्न विषयों को पढ़ाने की कौन-कौन सी विधियों का निर्माण हुआ है, उनमें कौन सी विधियॉ उपयोगी हैं। और इन विधियों को अपनाते समय क्या सावधानियाँ बरतनी चाहिए? इन सबकी चर्चा शिक्षण कला एवं तकनीकी के अन्तर्गत की जाती है। अतः शिक्षाशास्त्र में इस सबका अध्ययन भी किया जाता है। नियोजित शिक्षा को चलाने के लिए हमें इस सबका अध्ययन करना ही होता है।

1.5.2 अध्ययन के विशिष्ट क्षेत्र:-

शिक्षाशास्त्र के क्षेत्र में अब नए-नए विषयों का विकास हो रहा है और उनका अध्ययन भी आवश्यक समझा जाता हैय जैसे - शिशु शिक्षा, बालशिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, स्त्रीशिक्षा, व्यवसायिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, शिक्षक शिक्षा, पुस्तकालय संगठन, शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन, शिक्षण में दृश्य -श्रव्य सामग्री का प्रयोग, शैक्षिक तकनीकी, शैक्षिक नियोजन, शैक्षिक वित्त, शैक्षिक मापन और मूल्यांकन, शैक्षिक सांख्यिकी और शिक्षा में अनुसंधान आदि। इस संदर्भ में हम यह स्पष्ट कर देना आवश्यक समझते हैं कि आज से कुछ वर्ष पहले तक इन सबका अध्ययन शिक्षा के इतिहास, शैक्षिक प्रशासन, शिक्षा मनोविज्ञान और शैक्षिक तकनीकी के अन्तर्गत ही किया जाता था, परन्तु अब से अलग-अलग विषयों के रूप में विकसित हो रहे हैं।

अपनी उन्नतिजानिए(Check your Progress)

प्रश्न 8. एजुकेशन शब्द लैटिन भाषा के ..... के शब्द से बना हैं।

प्रश्न 9. शिक्षा वह है जो ..... दिलाये। (जगदगुरू शंकराचार्य)

प्रश्न 10. ..... के अनुसार, शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक अपनी आंतरिक शक्तियों को बाहर की ओर प्रकट करता है।

प्रश्न 11. शिक्षा मनोविज्ञान मानवीय व्यवहार का ..... परिस्थितियों में अध्ययन है।

1.6 सारांश

i. शिक्षा, समाज में चलने वाली सीखने-सिखाने की सप्रयोजन प्रक्रिया है।

ii. शिक्षा के अर्थ को विभिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर समझा जा सकता है जिनमें से प्रमुख हैं- शाब्दिक अर्थ, संकुचित अर्थ, व्यापक अर्थ, विश्लेष्णात्मक एवं समग्र अर्थ।

iii. शिक्षा का कार्य मानव एवं समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निर्धारित होता है।

iv. शिक्षा के इस प्रकार चार प्रमुख कार्य हैं-सामान्य, मानवीय, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन में कार्य।

v. शिक्षाशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसमें शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप एवं उसके विभिन्न अंगों तथा समस्याओं का दार्शनिक, समाजशास्त्रीय, राजनैतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोणों से अध्ययन किया जाता है।

1.7 शब्दावली (Vocavolary)

प्रौढ़ शिक्षा:- प्रौढ़ शिक्षा उन लोगो के लिय चलाया गया एक अभियान था जो किसी कारण से शिक्षा से वंचित रह गये है इसमें उम्र की सीमा का कोई बन्धन नहीं था।

तुलनात्मक शिक्षा- शिक्षाशास्त्र के क्षेत्र में भी विभिन्न देशों की शिक्षा प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है और उनके गुणदोषों का विवेचन किया जाता है। इससे हम अपनी परिस्थितियों में अपने उपयोग की शिक्षा व्यवस्था का निर्माण करने में सफल होते हैं।

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- Answer of Practice Question|

उत्तर 1 मां। उत्तर 2 व्यक्ति । उत्तर 3 व्यवहार में।

उत्तर 4 जान डीवी के अनुसार। उत्तर 5 पेस्टलॉजी के अनुसार। उत्तर 6 ओटावे के अनुसार। उत्तर 7 ब्राउन के अनुसार। उत्तर 8. एडूकेटम उत्तर 9. मुक्ति
उत्तर 10. फ्रोबेल उत्तर 11. शैक्षिक

1.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. ए0के0चक्रवर्ती,प्रिसीपल एण्ड प्रैक्टिस ऑफ एजुकेशन- आर0लाल बुक डिपो मेंरठ।

2. पाल (डा0), गुप्त एवं मदन मोहन. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार,- न्यू कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद

3. त्यागी एवं पाठक, शिक्षा के सिद्धांत, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।

4. चौबे एस0पी0 (डा0) एवं अखिलेश चौबे फिलोसोफिकल एण्ड सोशोलाजिकल फाउण्डेशन्स ऑफ एजुकेशन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न-

1. शिक्षा से आप क्या समझते हैं ? शिक्षा के संकुचित एवं व्यापक अर्थ को स्पष्ट करें।

2. शिक्षा के भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण का उल्लेख करते हुए अंतर स्पष्ट करें ?

3. शिक्षा के विभिन्न कार्यों का विवेचन कीजिए।

4. शिक्षा के विषय विस्तार की रूप रेखा प्रस्तुत करें।

5. इनमें से प्रत्येक पर 100 शब्द लिखें-

(i) शिक्षा का शाब्दिक अर्थ। (ii) शिक्षा के सामाजिक जीवन में कार्य।

(iii) शिक्षा मनोविज्ञान की विषयवस्तु। (iv) शैक्षिक प्रशासन एवं संगठन।

इकाई-2- शिक्षा एक प्रणाली, प्रक्रिया एवं अनुशासन के रूप में (Education as a system, education as a process and education as a discipline)

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 शिक्षा प्रक्रिया के रूप में
2.3.1 शिक्षा एक आजीवन प्रक्रिया
2.3.2 शिक्षा विकास की प्रक्रिया
2.3.3 शिक्षा संश्लिष्ट प्रक्रिया
2. 4 शिक्षा एक द्वि घ्रुवीय प्रक्रिया
2.4.1 शिक्षा एक त्रि ध्रुवीय प्रक्रिया
2.3.2 शिक्षा एक सचेतन एवं सप्रयोजन प्रक्रिया
2.4.3 शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया
2.3.4 शिक्षा एक समाजीकरण प्रक्रिया
2.5.1 शिक्षा एक अनुशासन के रूप में
2.5.2 शाब्दिक अर्थ के आधार पर
2.4.2 परिभाषा के आधार पर
2.5.3 अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर
2.6 सारांश
2.7 शब्दावली
28 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

मनुष्य की इस संसार में जन्म के साथ ही वातावरण से अनुकूलन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। इस प्रक्रिया में मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों तथा प्रकृति प्रदत्त क्षमताओं में विकास होता है। इस

प्रक्रिया को ही शिक्षा कहते है। व्यत्पत्ति की दृष्टि से शिक्षा सीखने-सिखाने, मानव की आन्तरिक शक्तियों को सन्तुलित रूप से बाहर निकालने और बाहय शक्तियों का सुधार करने की सकारात्मक प्रक्रिया है। प्लेटो एवं अरविन्द जैसे दार्शनिक शिक्षा को उन्मीलन प्रक्रिया के रूप में देखते है। सुविख्यात टी0 रेमान्ट की दृष्टि में शिक्षा बालक के भौतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक परिवेश में विकास की प्रक्रिया हैं। भारतीय मनीषियों ने शिक्षा को विद्या का पर्याय मानते हुये कहा है:- 'सा विद्या या विमुक्तये' विद्या वही है जो हमें मुक्ति के मार्ग पर ले जाये। इस प्रकार शिक्षा के अर्थ और आयाम विषयक विभिन्न धारणायें है। वस्तुतः शिक्षा ही विकास का साधन है। शिक्षा द्वारा न केवल व्यक्ति का वैयक्तिक विकास ही होता है। बल्कि सामाजिक विकास भी शिक्षा के ऊपर निर्भर करता है।

इस प्रकार शिक्षा एक व्यापक बहुआयामी अवधारणा है। जहॉ एक ओर यह अनुभव-आधारित ज्ञान का अक्षय भण्डार है वहॉ दूसरी ओर वह एक सकारात्मक प्रक्रिया, सामाजिक परिवर्तन का सशक्त साधन तथा सुविकसित सुव्यवस्थित शास्त्र है।

इस इकाई में आप समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर शिक्षा को एक प्रक्रिया के रूप में समझने का प्रयास करेंगे साथ ही साथ शिक्षा को एक अनुशासन के रूप में भी जान सकेंगे।

2.2 उद्देश्य-

इस इकाई को पढने के पश्चात आप इस योग्य हो जायेंगे कि आप-

a. शिक्षा को एक प्रक्रिया के रूप में स्पष्ट कर सकेंगे।
b. शिक्षा में सन्निहित विभिन्न प्रक्रियाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित कर सकेंगे।
c. शिक्षा को एक अनुशासन के रूप में समझ सकेंगे।
d. शिक्षा के उद्देश्यों के प्रकाश में, एक अनुशासन के रूप में बता पाने में सक्षम हो सकेंगे।

2.3 शिक्षा प्रक्रिया के रूप में -

शिक्षा एक प्रक्रिया है। प्रक्रिया का तात्पर्य एक विशेष प्रकार की क्रिया अथवा ऐसी क्रिया से हैं, जिससे व्यक्ति के भीतर कुछ विशेषतायें आ जाये। व्यक्ति के भीतर नैसर्गिक रूप से कुछ शक्तियॉ होती है। ये शक्तियॉ उसे जन्म से प्राप्त होती हैं इसके अलावा बाहय प्रकृति से भी कुछ शक्तियॉ- भौतिक एवं सामाजिक शक्तियॉ उसे प्राप्त होती है। इन्हीं दोनों शक्तियॉ के प्रतिक्रिया-स्वरूप व्यक्ति आगे बढ़ता है। इसी प्रक्रिया को हम शिक्षा की प्रक्रिया कह सकते है। परिभाषा के तौर पर कहा जा सकता है कि शिक्षा व्यक्ति की नैसर्गिक शक्तियॉ एवं भौतिक और सामाजिक शक्तियॉ के बीच होने

वाली विशेष क्रिया है जो आनुवांशिकता व पर्यावरण की शक्तियॉ के बीच होती है जिससे व्यक्ति ज्ञान एवं अनुभव प्राप्त करके सफल होता है। अतः ज्ञान-अनुभव प्राप्त करने की प्रक्रिया को ही शिक्षा कहते है। ऐसी प्रक्रिया की कुछ विशेषतायें है, जो निम्न प्रकार है

2.3.1 शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है:-

डीवी के विचार में शिक्षा और जीवन एक है। तात्पर्य यह है कि प्राणी जन्म से लेकर मृत्युपर्यनत कुछ-न-कुछ करता ही रहता है। इसके फलस्वरूप वह कुछ नये अनुभव, नित्य ग्रहण करता रहता है और नये अनुभव न भी ग्रहण करे, तो भी पुराने अनुभवों में सुधार एवं परिष्कार करता रहता है, जिससे जीवन की परिस्थितियों में वह अधिक सफलता प्राप्त कर सके। इस प्रकार वह शिक्षा प्राप्त करता रहता है, जो समस्त जीवन से चलती रहती है। एडलर का कहना है कि ''शिक्षा मनुष्य के शारीरिक और मानसिक दृष्टि से विकसित, स्वतंत्र और सचेतन मानव की ईश्वर के प्रति उत्कृष्ट अनुकूलन की निरन्तर प्रक्रिया ही शिक्षा है जो मनुष्य के बौद्धिक, भावात्मक एवं इच्छा शक्ति से सम्बन्धित वातावरण में अभिव्यक्त होती है। सम्पूर्ण जीवन से सम्बन्धित क्रिया है, यह केवल छोटे बालकों से ही सम्बन्धित नहीं होती। यह तो जन्म से आरम्भ होती है और मृत्यु तक चलती रहती है।''

2.3.2 शिक्षा विकास की प्रक्रिया है:-

शिक्षा वह प्रक्रि्रया है जिसके द्वारा व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक शक्तियों का विकास वातावरण और परिस्थितियों के अनुसार होता है। हार्न के अनुसारः- ''शिक्षा अन्दर से विकास होने को कहते हैं न कि बाहर से संचय को, वह तो स्वाभाविक मूलप्रवृत्तियों और रूचियों की क्रिया से होती है न कि बाहय शक्तियों के प्रति अनुक्रिया स्वरूप।''

2.3.3 शिक्षा एक संश्लिष्ट प्रक्रिया है:-

आधुनिक विचारको के अनुसार शिक्षा के द्वारा सभी पक्षों का समग्र विकास होता है न कि अलग-अलग। शिक्षा एक संश्लिष्ट प्रक्रिया है, जो शरीर, मन, संवेग और की समरूप वृद्धि का लक्ष्य रखती है। इसलिये एक उचित शिक्षा योजना में एक साथ और अन्तराव लम्बित वृद्धि के चारों पक्षों को होना चाहिये, तथ्यतः ये सब एक प्रणाली में ऐसे संश्लिष्ट होकर मिले हैं, जो एक-दूसरे से उपेक्षित या अलग नहीं किये जा सकते। स्पष्टत एक मनुष्य प्राणी के रूप में शरीर, मन, आत्मा, संवेगों एवं भावों का ऐसा मिश्रण है, जिसमें से किसी एक को दूसरे से अलग करना असम्भव है। अत-एवं शिक्षा मनुष्य के वृद्धि एवं विकास की प्रक्रिया होने के नाते एक संश्लिष्ट प्रक्रिया होगी, यह पूर्णतया सत्य है।

2. 4 शिक्षा एक द्विध्रुवीय प्रक्रिया है:-

जॉन ऐडम्स का विचार है कि शिक्षा के दो ध्रुव होते है:- एक ओर विद्यार्थी तथा एक ओर शिक्षिका इस प्रक्रिया में विद्यार्थी सीखने वाला तथा शिक्षक सिखाने वाला होता है तथा दोनों ही इस प्रक्रिया में भाग लेते है। जॉन डीवी ने भी शिक्षा के दो ध्रुव माने है एक मनोवैज्ञानिक तथा दूसरा सामाजिक। मनोवैज्ञानिक अंग से उनका तात्पर्य सीखने वाले की रूचि, रूझान और शक्ति से है और सामाजिक अंग से उनका तात्पर्य सामाजिक पर्यावरण से है। रॉस का भी मत है कि ''शिक्षा में चुम्बक के समान दो ध्रुवों का होना आवश्यक है इसीलिये यह द्विध्रुवीय प्रक्रिया।''

2..4.1 शिक्षा एक त्रि-ध्रुवीय प्रक्रिया है:-

जॉन डीवी शिक्षा को त्रिध्रुवीय प्रक्रिया बताते हुये इस प्रक्रिया के मनोवैज्ञानिक पक्ष को स्वीकारते है तथा वह समाज से अलग शिक्षा प्रक्रिया की कल्पना नहीं कर सकते। उनके मतानुसार इसमें तीन घटक काम करते है:- बालक, अध्यापक एवं सामाजिक शक्तियॉ।जॉन डीवी के शब्दों में,- प्रजाति की सामाजिक चेतना में भाग लेने से सभी तरह की शिक्षा प्राप्त होती है।

शिक्षा की त्रिधुरवीय प्रक्रिया में तीन ध्रुव होते हैं इसे निम्न प्रकार दर्शाया जा सकता है:-

बालक को किन विषयों को पढ़ना है, उसे कौन-कौन से कौशल सिखाने है, किस प्रकार के विचार एवं अनुभव उसे प्रदान करने है:- इन सब का निर्णय समाज करता है। इस दृष्टि से पाठ्यचर्या की रचना करते समय समाज की आवश्यकताओं और मॉगो को ध्यान में रखा जाता है, इसलिये कुछ शिक्षाविद शिक्षा की इस त्रिधुरवीय प्रक्रिया में बालक, अध्यापक एवं पाठ्यचर्या को तीन ध्रुव पर रखते है। उनके मतानुसार, पाठ्यचर्या बालक और अध्यापक को एक-दूसरे के सम्पर्क में लाने का कार्य करती है इसे निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता है:-

2.4.2 शिक्षा एक सचेतन एवं सप्रयोजन प्रक्रिया है:-

शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया उद्देश्य पूर्ण होती है। बासिंग के अनुसार:- ''शिक्षा का कार्य व्यक्ति को उसके वातावरण से इस उद्देश्य से समायोजित करना है कि, जिससे कि व्यक्ति तथा समाज दोनों को

अत्यधिक और दीर्धकालीन संतुष्टि प्राप्त हो सके।'' जिसमें व्यक्ति एवं समाज दोनों का ध्यान रखा जायेगा, तो अवश्य ही शिक्षा सचेतन एवं सप्रंयोजन होगी।

ब्राउन के अनुसार:- शिक्षा सचेतन रूप में नियंत्रित प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन लाये जाते है और व्यक्ति के द्वारा समाज में परिवर्तन लाये जाते है।''

जॉन ऐडम्स के मतानुसार:- ''शिक्षा एक सचेतन एंव विचार पूर्ण प्रक्रिया है, जिसमें एक व्यक्तित्व दूसरे पर इसलिये प्रभाव डालता है कि दूसरे का विकास और परिवर्तन हो सके।''

इस विकास व परिवर्तन से व्यक्ति व समाज दोनों को लाभ होता है तथा इस प्रकार के लाभ को व्यक्ति और समाज ध्यान में रखते हैं व इसके प्रति सचेत रहते है।

2.4.3 शिक्षा गतिशील प्रक्रिया है:-

शिक्षा के द्वारा मनुष्य अपनी सभ्यता एवं संस्कृति में निरन्तर विकास करता है तथा इस विकास के लिये उसकी एक पीढ़ी अपने ज्ञान एवं कला-कौशल आदि को दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करती है तथा इस प्रक्रिया के लिये प्रत्येक समाज विद्यालयी शिक्षा की व्यवस्था करता है इसीलिये समय विशेष की विद्यालयी शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यचर्या एवं शिक्षण विधियॉ आदि सब निश्चित होते है तथा समाज में जैसे-जैसे परिवर्तन होते है, उसी प्रकार शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यचर्या तथा शिक्षण विधियों आदि में आवश्यकतानुसार परिवर्तन होता रहता है। यही शिक्षा की गतिशीलता है। बी0एन0 झा के अनुसार:- ''शिक्षा एक प्रक्रिया है और एक सामाजिक कार्य हे जो कोई समाज अपने हित के लिये करता है।''

शिक्षा केवल जीवन की तैयारी मात्र नहीं है,- ''शिक्षा स्वयं ही जीवन है, जीवन का अर्थ विकास से है। विकास से गतिशीलता की भावना प्रकट होती है। अत-एवं शिक्षा स्वयंमेंव गतिशील होगी अन्यथा व्यक्ति तथा समाज भी प्रगति नहीं कर सकते।''

शिक्षा की गतिशीलता टी0 रेमान्ट के शब्दों से भी स्पष्ट होती है:-

''शिक्षा विकास का वह प्रक्रम है, जिसमें व्यक्ति के शैशव से प्रौढ़ता तक की वह प्रक्रिया निहित है, जिसके द्वारा वह अपने को धीरे-धीरे विभिन्न विधियों से अपने भौतिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक वातावरण के अनुकूल बनाता हैं।''

2.4.4 शिक्षा समाजीकरण की प्रक्रिया है:-

समाजीकरण से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा बालक की प्राकृतिक क्षमताओं को सम्यके विकास होता है तथा उसे सामाजिक जीवन के विविध आयामों से अवगत कराया जाता है।

हैंविग हर्स्ट एवं न्यू गार्टन के अनुसार:- ''समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से बालक अपने समाज की स्वीकृत विधाओं को सीखते हैं तथा इन विधाओं (तौर-तरीकों) को अपने व्यक्तित्व का अंग बना लेते है।''

शिक्षा बालक-बालिकाओं के विकास में सहायक होती है वस्तुतः यह समाजीकरण की सशक्त प्रक्रिया है। समाज के अभाव में हम न तो भाषा सीख सकते हैं और न विचार करना। शिक्षा की औपचारिक तथा अनौपचारिक विधायें और घटक समाजीकरण की प्रक्रिया में अपना योग देते हैं। किंबल यंग के अनुसार समाजीकरण के प्रमुख घटक निम्नलिखित है:- 01. परिवार, 02. क्रीड़ा-समूह, 03. पड़ोस, 04. जाति और वर्ग, 05. विद्यालय तथा अन्य, 06 प्रासंशिक समूह आदि।

अन्त में हम कह सकते हैं कि शिक्षा आजीवन चलने वाली एक ऐसी विचारपूर्ण प्रक्रिया, जिसके द्वारा व्यक्ति का शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक, सामाजिक, आध्यात्मिक आदि विकास सभ्यक रीति से होता है। इसके फलस्वरूप व्यक्ति अपने व्यवहार में परिवर्तन और परिवर्द्वन लाता है, जिससे व्यक्ति, जाति, समाज और राष्ट्र तथा विश्व सभी का हित होता है।

2.5 शिक्षा एक अनुशासन के रूप में:-

मानव ने सदैव ही अपने अनुभवों को विभिन्न विषयों ;कपेबपचसपदमेंद्ध में बद्ध किया। इस प्रकार विज्ञान, दर्शन, कला ओर अन्य विषय बने। इन सबका अध्ययन 'शिक्षा' कहलाया। आधुनिक युग में शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, विधियॉ, मूल्यॉकन एवं कार्यों इत्यादि की विस्तृत व्याख्या करने व उसकी समस्याओं के समाधान खोजने के लिये एक नया प्रयत्न शुरू हुआ, इस नये प्रयत्न ने नये अनुशासन को जन्म दिया जिसे शिक्षाशास्त्र कहते हैं। पहले यह सब कार्य दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र द्वारा होता था परन्तु आज यह एक स्वतन्त्र विषय के रूप में जाना जाता था। शिक्षाशास्त्र में उन सब विचारों एवं प्रयोगों का वर्णन होता है। जिन्होंने समय-समय पर शिक्षा को प्रभावित किया।

2.5.1 शब्दिक अर्थ के आधार पर:-

शिक्षाशास्त्र के शब्दिक अर्थ को देखा जाये तो स्पष्ट है कि शिक्षाशास्त्र दो शब्दों के योग से बना है शिक्षा और शास्त्र। शिक्षा का अर्थ बालक की अर्न्तनिहित शक्तियॉ को आगे बढ़ाना, चूकि आगे बढ़ने की प्रक्रिया सीखने के द्वारा ही सम्भव है अतः शिक्षा को सीखने की प्रक्रिया कहा जा सकता है, शास्त्र का तात्पर्य विज्ञान से है क्योंकि शास्त्र विज्ञान का समानार्थी शब्द है और विज्ञान का अर्थ है किसी विषय या वस्तु का नियमबद्ध या क्रमबद्ध अध्ययन करना शास्त्र कहलाता है। शास्त्र शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'शास' धातु से हुई जिसका अर्थ है। शासन करना या नियंत्रण करना या नियमबद्ध करना । इस प्रकार शिक्षाशास्त्र एक ऐसा विषय है जिसमें सीखने एवं सिखाने से

सम्बन्धित बातों का व्यवस्थित रूप से नियमपूर्वक अध्ययन किया जाता है। साथ ही इसमें शिक्षा की प्रक्रिया, स्वरूप, अंगों एवं समस्याओं का दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय, वैज्ञानिक, आर्थिक तथा राजनैतिक दृष्टिकोणों से अध्ययन किया जाता है।

2.5.2 परिभाषा के आधार पर:-

चूकि शिक्षाशास्त्र एक नवीन नव-विकसित विज्ञान है अतः अभी तक इसकी कोई निश्चित परिभाषा नहीं की जा सकी फिर भी कुछ विद्वानों ने शिक्षाशास्त्र को निम्न प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया:-''शिक्षाशास्त्र जीवन लक्ष्यों की ओर समुचित ढंग से समायोजित जीवन के लिये निर्देशित, मनुष्य के सीखने-सिखाने तथा इसके संगठन की औपचारिक और अनौपचारिक क्रियाओं और प्रयत्नों का जैविक, शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, दार्शनिक, धार्मिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक तथा व्यावसायिक संदर्भो के साथ व्यवस्थित अध्ययन है।''

इस प्रकार की परिभाषा में 'शिक्षा' का मूल और तात्विक अभिप्राय मिलता है, जिसके विचार से इसका सम्बन्ध मनुश्य की शारीरिक, भावात्मक, बौद्धिक क्षमताओं और सूजनात्मक क्रियाओं से होता है, जो कि मनुष्य प्राकृतिक और सामाजिक वातावरण और स्थितियों में क्रिया-प्रतिक्रिया स्वरूप करता है और इसके परिणामस्वरूप वैयक्तिक एवं सामाजिक दृष्टि से जीवन के विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति करता है।

2.5.3 शिक्षाशास्त्र के अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर:-

शिक्षाशास्त्र के निम्नांकित उद्देश्य परिलक्षित होते है:-

1. मानव प्रकृति, रचना, तत्सम्बन्धी वृद्धि एवं विकास की ओर इनसे सम्बन्धित सभी समस्याओं को समझना तथा उपयुक्त उपागमों का पता लगाना, उन्हें प्रयोग करना, जिससे की समस्याओं का समाधान हो और अच्छे ढंग का समायोजन हो।
2. मानव के आत्म को जानना तथा उसे अपनी विभिन्न शक्तियों को जानने-पहचानने और विभिन्न प्रकार की क्रियाशीलताओं में प्रयोग करने में सहायता करना।
3. मानव को अन्य मानवों के साथ रहते हुए सभी सम्बन्धों को सार्थक ढंग से समझने में सहायता देना। तद्रूप समूह निर्माण के लिए तैयार करना।
4. व्यक्ति और समाज के सम्बन्धों को जानकर उचित रूप से सम्बन्धों का परिचालन करना तथा उन सम्बन्धो के आधार पर अनुकूल व्यवहार करने की क्षमता प्राप्त करना।

5. समाज के सम्बन्धों की प्रकृति, सामाजिक संरचना और उसके संगठन को समझना, जिससे कि समाज के सदस्यों में सांमजस्य और समरसता की वृद्धि हो।
6. मानव को उसके समूह की संस्कृति से तथा उसे प्राप्त करने, ग्रहण और धारण करने, भूत और वर्तमान काल में उसके अनुकूल जीवन यापन करने में तथा भविष्य में दूसरे के लिए विरासत रूप में छोड़ने में किये गए प्रयत्नों से परिचित कराना।
7. प्रगतिवान समय और युग की मॉग के अनुसार आवश्यक मानवीय मूल्यों, सद्गुणों विशेषताओं आदि को समझना, परखना, निर्धारित करना तथा स्थापित करने में प्रयत्नशील होना।
8. भूत और वर्तमान काल में विभिन्न देशों की शैक्षिक प्रणलियों तथा ऐतिहासिक दृष्टि से होने वाली शैक्षिक प्रगति के विकास को जानना तथा जनसाधारण और युग की मॉगों को पूरा करना, इसे करने के लिए उत्तम परिणामों के हेतु, सुधार एवं संशोधन के लिए प्रयत्न करना।

उपर्युक्त उद्देश्यों को उन परिप्रेक्ष्यों के साथ बताया गया है, जिसकी ओर शिक्षाशास्त्र की परिभाषा में संकेत किया जाता है। इस विचार से शिक्षाशास्त्र का अध्ययन जैविक, शारीरिक, बौद्धिक, शिक्षा बालक-बालिकाओं के विकास में सहायक होती हैं वस्तुतः यह समाजीकरण की सशक्त प्रक्रिया है। समाज के अभाव में हम न तो भाषा सीख सकते है और न विचार करना। शिक्षा की औपचारिक तथा अनौपचारिक विधायें और घटक समाजीकरण की प्रक्रिया में अपना योग देते है। किंबल यंग के अनुसार समाजीकरण के प्रमुख घटक निम्नलिखित है:- 01 परिवार, 02 क्रीडा-समूह, 03 पड़ोस, 04 जाति और वर्ग, 05 विद्यालय तथा अन्य, 06 प्रासंगिक समूह आदि।

अन्त में हम कह सकते है कि शिक्षा आजीवन चलने वाली एक ऐसी विचारपूर्ण प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति का शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक, सामाजिक, आध्यात्मिक आदि विकास सभ्यक रीति से होता है। इसके फलस्वरूप व्यक्ति अपने व्यवहार में परिवर्तन और परिवर्द्धन लाता है, जिससे व्यक्ति, समाज और राष्ट्र तथा विश्व सभी का हित होता है।

अभ्यास प्रश्न

1. शिक्षा..... से प्रारम्भ होती है और ..... तक चलती रहती है
2. डीवी के अनुसार, शिक्षा एक..... प्रक्रिया है।
3. शिक्षा केवल ..... की तैयारी मात्र नहीं है।
4. शिक्षा अन्य विषयों की भांति ही एक ..... है

2.6 सारांश:-

i. शिक्षा, सीखने-सिखाने, मानव की आंतरिक शक्तियों को संतुलित रूप से बाहर निकालने और बाह्य शक्तियों का सुधार करने की सकारात्मक प्रक्रिया है।

ii. शिक्षा की द्वि ध्रुवीय प्रक्रिया में विद्यार्थी एवं शिक्षक सम्मिलित हैं वहीं जॉन डीवी के शब्दों में शिक्षा को त्रि धुरवीय प्रक्रिया मानते हुए तीसरे ध्रुव के रूप में समाज को स्वीकारते है।

iii. कुछ शिक्षाविदों के अनुसार शिक्षा की त्रि ध्रुवीय प्रक्रिया में बालक, अध्यापक एवं पाठ्यचर्या को तीन ध्रुव पर रखते है।

iv. शिक्षा को एक समाजीकरण की प्रक्रिया मानते हुए यह स्पष्ट करते हैं कि इसके द्वारा बालक की प्राकृतिक क्षमताओं का सम्यक विकास होता है तथा उसे सामाजिक जीवन के विविध आयामों से अवगत कराया जाता है।

v. आधुनिक युग में शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, विधियॉ, मूल्यॉकन एवं कार्यों इत्यादि की विस्तृत व्याख्या करने व उसकी समस्याओं के समाधान खोजने के लिये एक नया प्रयत्न शुरू हुआ, इस नये प्रयत्न ने नये अनुशासन को जन्म दिया जिसे शिक्षाशास्त्र कहते हैं।

2.7 शब्दावली :-

शिक्षा गतिशील प्रक्रिया है:- शिक्षा के द्वारा मनुष्य अपनी सभ्यता एवं संस्कृति में निरन्तर विकास करता है तथा इस विकास के लिये उसकी एक पीढ़ी अपने ज्ञान एवं कला-कौशल आदि को दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करती है

समाजीकरण:- ''समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से बालक अपने समाज की स्वीकृत विधाओं को सीखते हैं तथा इन विधाओं (तौर-तरीकों) को अपने व्यक्तित्व का अंग बना लेते है।''

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

1.	जन्म, मृत्यु	2.	त्रि ध्रुरुवीय
3.	जीवन	4.	अनुशासन,

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. चक्रवर्ती, ए0के0.प्रिसीपल एण्ड प्रैक्टिस ऑफ एजुकेशन- आर0लाल बुक डिपो मेंरठ।

2. पाल, गुप्त (डॉ) एवं मदन मोहन शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार,- न्यू कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद

3. त्यागी एवं पाठक, शिक्षा के सिद्धांत, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।

4. चौबे,एस.पी.(डॉ) एवं अखिलेश चौबे, फिलोसोफिकल एण्ड सोशोलाजिकल फाउण्डेशन्स ऑफ एजुकेशन- विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न-

1. "शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो जीवन भर चलती रहती है'' इस कथन की उदाहरण सहित विवेचना कीजिए।

2.शिक्षा की द्विध्रुवीय प्रक्रिया एवं त्रिध्रुवीय प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।

3 "शिक्षा केवल जीवन की तैयारी मात्र नहीं है'' इस कथन को व्याख्यायित कीजिए।

4.शिक्षा को एक अनुशासन के रूप में परिभाषित कीजिए ?

5.इनमें से प्रत्येक पर लगभग 100 शब्द लिखें-

1. शिक्षा एक संश्लिष्ट प्रक्रिया
2. शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया
3. शिक्षा एक अनुशासन
4. शिक्षा के उद्देश्य

इकाई-3- शिक्षा के उद्देश्य- वैयक्तिक उद्देश्य, सामाजिक उद्देश्य एवं प्रजातांत्रिक उद्देश्य (Aims of Education- Individual Aims and Social Aims including Democratic Aims)

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 शिक्षा के उद्देश्यों की आवश्यकता
3.3.1 शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य
3.4 शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य
3.4.1 वैयक्तिक एवं सामाजिक उद्देश्य में समन्वय
3.4.2 भारतवर्ष की शैक्षिक आवश्यकतायें
3.5 आधुनिक प्रजातांत्रिक भारत के शैक्षिक उद्देश्य
3.5.1 प्रजातंत्रीय भारत के समाज सम्बन्धी शैक्षिक उद्देश्य
3..5.2 लोकतंत्रीय भारत के राष्ट्र सम्बन्धी शैक्षिक उद्देश्य
3.6 सारांश
3.7 शब्दावली
3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना :-

शिक्षा' समाज की आधारशिला है। समाज में जिस प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था होगी, उसी प्रकार के समाज का निर्माण होगा। अतः इस बात का सदैव प्रयत्न किया गया है कि शिक्षा के उद्देश्य समाज के उद्देश्यों केअनुकूल हों। परन्तु केवल सामाजिक कारक ही शिक्षा के लक्ष्यों या उद्देश्यों को प्रभावित नहीं करते। व्यक्ति भी चेतन या अचेतन रूप से शिक्षा के उद्देश्यों को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक समाज में शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण दार्शनिक सिद्धान्तों के साथ-साथ व्यक्ति तथा समाज की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं, मूल्यों आदि को आधार बनाकर किया जाता है। व्यक्ति व समाज में अपेक्षाकृत कौन अधिक महत्वपूर्ण है यह एक विवादग्रस्त विषय है। कुछ विद्वानों के अनुसार व्यक्ति ने समाज की रचना अपने कल्याण के लिये की है इसलिये समाज को व्यक्ति के विकास में सहायक होना चाहिये। इसके विपरीत कुछ विद्वान निःसमाज व्यक्ति की कल्पना ही नहीं

करते। उनका कहना है कि समाज से अलग व्यक्ति का कोई मूल्य नहीं होता, प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह समाज के लिये अपने आपको न्यौछावर करे। इस इकाई को पढने के बाद आप शिक्षा के वैयक्तिक एवं सामाजिक उद्देश्यों, तथा उनकी परस्पर निर्भरता के बारे में जान सकेंगे, साथ ही हमारे प्रजातांत्रिक देश की शिक्षा के स्वरूप से भी भली-भांति अवगत हो सकेंगे।

3.2 उद्देश्य:-

इस इकाई को पढने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि आप-

1 शिक्षा के वैयक्तिक एवं सामाजिक उद्देश्यों को स्पष्ट कर सकेंगे।

2. शिक्षा के वैयक्तिक एवं सामाजिक उद्देश्य परस्पर समन्वित हैं, बता सकेंगे।

3. वर्तमान शिक्षा को प्रजातांत्रिक समाज की आवश्यकता के आलोक में व्याख्यायित कर पाने में समर्थ हो सकेंगे।

4. वर्तमान शिक्षा में अपेक्षित सुधारात्मक उपाय सुझा पाने में सक्षम हो सकेंगे।

3.3 शिक्षा के उद्देश्यों की आवश्यकता :-

शैक्षिक उद्देश्य आदर्श या वांछित दिशा की ओर संकेत मात्र हैं।

जान डी.वी. के अनुसार -'' उद्देश्य एक पूर्व दर्शित लक्ष्य है जो किसी क्रिया केा संचालित करता है अथवा व्यवहार को प्रेरित करताहै।''

अच्छा उद्देश्य वह है जो जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से सम्बन्धित होता है। शिक्षा जीवन पर्यंत चलने बाली प्रक्रिया है अच्छे उद्देश्य गतिशील होते हैं ताकि वह जीवन की बदलती हुई परिस्थिति के अनुकूल उनमें परिवर्तित किये जा सकें। जीवन की बदलती परिस्थिति में शिक्षा के द्वारा सामंजसय बनाकर उद्देश्यो की पुर्ति की जाती है।

शिक्षा के उद्देश्यों का वर्गीकरण -शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण करने से शिक्षा लक्ष्यहीन होने से बच जाती है।उद्देश्य ही शिक्षण -विधि, पाठ्य सामग्री आदि के निर्धारण करने में सहायक सिद्ध होते हैं। युग की अपेक्षाओं व आवश्यकताओं के अनुसार उद्देश्य एवं लक्ष्यों का निर्धारण किया जाना चाहिर्ये शिक्षा का उद्देष्य केवल विद्या ग्रहण करने से ही नहीं है बल्कि उसका सम्बन्ध बालक के व्यक्तिगत, सामाजिक व राष्ट्रीय जीवन से है। शिक्षा के उद्देश्यों के अन्तर्गत निम्नलिखित उद्देश्यों का निर्धारण किया गया है -

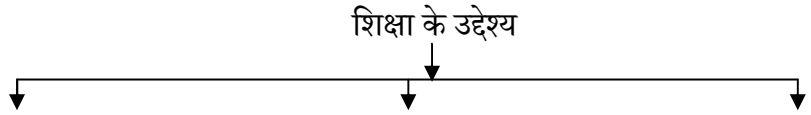

3.3.1 शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य-

आधुनिक मनोविज्ञान की प्रगति के साथ ही शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य पर विशेष रूप से बल दिया जाने लगा है। इसके समर्थकों में रूसों, फ्राबेल, पेस्टालाजी व नन आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। नन के अनुसार -'' शिक्षा को ऐसी दशायें उत्पन्न करनी चाहिये, जिनसे वैयक्तिकता का पूर्ण विकास हो सके और व्यक्ति, मानव जीवन को अपना मौलिक योगदान दे सके।''

रॉस के अनुसार '' शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य का अर्थ जो हमारे स्वीकारने के योग्य है, वह केवल यह है - महत्वपूर्ण व्यक्तित्व तथा आध्यात्मिक वैयक्तिकता का विकास।शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य के दो रूप हैं पहला आत्मभिव्यक्ति तथा दूसरा आत्मानुभूति।

1. आत्माभिव्यक्ति का उद्देश्य - यदि वैयक्तिक विकास को ही अतिवादी रूप से देखें तो शिक्षा का उद्देश्य आत्माभिव्यक्ति है। वे आत्मप्रकाशन पर मुख्य रूप से बल देते हैं चाहे इससे दूसरों को फायदा न ही पहुंचता हो। एक पक्ष से आत्मप्रकाशन से स्वतन्त्र रूप से विकसित होने का अवसर मिलता है परन्तु इससे पाशविक प्रवृत्तियो के विकसित होने की सम्भावना रहती है।

2. आत्मानुभूति का उद्देश्य- यह उद्देश्य आत्माभिव्यक्ति से भिन्न है। इसमें 'स्व' का अभिप्राय है ''जैसा मैं उसका होना चाहता हूॅ।'' आत्माभिव्यक्ति में 'स्व' व्यक्ति का 'मूर्त स्व' है जबकि आत्मानूभुति में 'स्व' वह 'आदर्श स्व' है।

एडम्स के अनुसार-''आत्मानुभूति के आदर्श में 'स्व' समाज विरोधी व्यवहार करके अपनी अनुभूति नहीं कर सकता है।''

इस प्रकार आत्मानुभूति के उद्देश्य में समाज व सामाजिक वातावरण के महत्व को स्वीकार किया जाता है।

3. वैयक्तिक उद्देश्य के पक्ष में तर्कः- इस उद्देश्य के पक्ष में निन्नोकित तर्क दिये जा सकते है:-

i. प्रजातन्त्र, व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर बल देता है, इससिलये शिक्षा का उद्देश्य - व्यक्ति का विकास होना चाहिये।

ii. मनुष्य के स्वतन्त्र प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप ही समाज में उत्कृष्ट जन्म लेता हैं। अतः शिक्षा का उद्देश्य - मनुष्य का हित एवं विकास होना चाहिऐ।

iii. प्रत्येक समाज की सभ्यता व संस्कृति को उन्नति की ओर व्यक्ति ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढी तक ले जाते है। अतः शिक्ष में वैयक्तिक विकास को महत्व देना चाहिये।

iv. समाज का निर्माण, व्यक्ति अपने हित के लिये करते हैं। अतः शिक्षा का उद्देश्य - व्यक्ति का विकास होना चाहिये।

v. मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, व्यक्ति की मूल प्रवृत्तियों को महत्व देना चाहिये न कि उस पर समाज के आदर्शों को लादना चाहिये।

नन के अनुसार:-''वैयक्तिकता जीवन का आदर्श है।शिक्षा की किसी भी योजना का महत्व उसकी उच्चतम वैयक्तिक श्रेष्ठता का विकास करने की सफलता से ऑका जाना चाहिये।''

4. वैयक्तिक उद्देश्य के विपक्ष में तर्क:- आत्मानुभूति के रूप में शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य उचित प्रतीत होता है परन्तु केवल आत्माभिव्यक्ति को बढ़ावा देने पर निम्न प्रकार के दोषों के होने की सम्भावना बनती है:-

i. व्यक्तिवाद को प्रोत्साहन:-शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य, व्यक्तिवाद को प्रोत्साहन देते हैं। जिसके फलस्वरूप, समाज को कई दुष्परिणाम झेलने पड़ते है।

ii. समाजवाद का शत्रु:-व्यक्तिवाद, समाजवाद का विपरीत है जिसके कारण हमारे देश में शिक्षा के इस अतिवादी दृष्टिकोण को अपनाना सम्भव नहीं है।

iii. सामाजिक विघटन:-वैयक्तिक उद्देश्य व्यक्ति को प्रत्येक प्रकार की स्वतन्त्रता देने के पक्ष में है जिससे सामाजिक उद्देश्यों की अनदेखी सम्भव है जिससे सामाजिक विघटन की सम्भावना है।

iv. वास्तविक जीवन के लिये अव्यवहारिक:-यह सम्भव नहीं है कि वैयक्तिक उद्देश्य को महत्व देते हुये प्रत्येक छात्र के वैयक्तिक विकास के लिये विशेष प्रकार के पाठ्यक्रम एवं विशेष स्कूल की व्यवस्था की जाये।

v. नैतिक गुणों की उपेक्षा -शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य आत्म-प्रदर्शन की धारणा पर आधारित है जिसकें नीत्शे के अनुसार व्यक्ति को अपनी इच्छाशक्ति के अलावा और किसी भी नैतिकता को स्वीकार किये बिना अपने अधिकारों के लिये संघर्ष करना चाहिये। ऐसी दशा में प्रेम, दया, सहानुभूति, बलिदान आदि नैतिक गुणों की उपेक्षा होना आवश्यक है।

vi. मनुष्य के समाजिक स्वरूप की उपेक्षा -यह बात सही है कि व्यक्ति ने समाज का निर्माण अपने हित के लिये किया है और समाज को उसके वैयक्तिक विकास में सहायक होना चाहिये पर इस सम्बन्ध में विचारणीय है कि समाज तो एक अदृश्य विचार है उसके प्रत्यक्ष अंग व्यक्ति ही है और जब तक इन व्यक्तियों में सामाजिक भावना (प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, दया, क्षमा, सहनशीलता आदि) नहीं होगी तब तक समाज से व्यक्ति को कोई लाभ नहीं हो सकता।

रॉस के अनुसार -'' सामाजिक पर्यावरण से अलग वैयक्तिकता का कोई मूल्य नहीं है और व्यक्तित्व अर्थहीन शब्द है, क्योकि इसी में इसको विकसित और कुशल बनाया जाता है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि वैयक्तिकता का विकास -एक उत्तम उद्देश्य है परन्तु शिक्षा को वैयक्तिक विकास केसाथ-साथ सामाजिक विकास का उद्देश्य भी रखना चाहिये।

3.4 शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य:-

शिक्षा के सामाजिक - उद्देश्य के अनुसार समाज या राज्य का स्थान व्यक्ति से बहुत ऊँचा है। समाज के हित में ही व्यक्ति का हित है। समाज में रह कर ही व्यक्ति अपनी आवश्यकतायें पूर्ण कर सकता है, अपना विकास कर सकता है तथा उन्नति के पथ पर आगे बढ़ सकता है। अतः व्यक्ति को अपने हित का ध्यान न रखकर समाज के हित का ध्यान रखना चाहिये तथा आवश्यकता पड़ने पर समाज के लिये हर प्रकार के बलिदान को तैयार रहना चाहिये।

प्रो0 बागले एवं डीवी सामाजिक विकास से तात्पर्य सामाजिक कुशलता से लेते हैं जिसके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य - प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक रूप से कुशल बनाना है जिसके कारण वह स्वयं का जीवनयापन कर पाने में सक्षम होता है तथा अच्छे नागरिक के गुणो का निर्वाह करता है जिससे वह देश व समाज की समस्याओं को समझकर सामूहिक क्रियाओं में अपना योगदान दे पान में सक्षम होता है।

1. शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य का सामान्य रूप - इसके अन्तर्गत सामाजिकता व सहयोग की भावना को बल मिलता है जो जीवन को सुखपूर्वक व्यतीत करने के लिये आवश्यक है। रेमाण्ट के अनुसार - '' समाज विहीन व्यक्ति कोरी कल्पना है।''

व्यक्ति को एक समाजिक प्राणी बने रहने हेतु अपनी वैयक्तिकता को कुछ सीमा तक सामाजिक आवश्यकताओं के अधीन रखना पड़ता है तथा स्वयं में कुछ परिवर्तन लाने पड़ते हैं जिनसे चेतन एवं अचेतन रूप से उसकी वैयक्तिकता का दमन होता ही है।

2.शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य का अतिवादी रूप- इसके समर्थकों के अनुसार राज्य, व्यक्ति एवं उसकी आकांक्षाओं से बहुत श्रेष्ठ है अतः राज्य को व्यक्ति से सम्बन्धित सभी बातों पर अधिकार होना चाहिये।

अतः यह निश्चय करना कि व्यक्ति की शिक्षा के विषय व विधियॉ क्या हो या यह राज्य का कार्य है तथा ऐसा करते समय राज्य की आवश्यकताओं का ध्यान रखना जाना चाहिये।

3. शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य का उदार रूप - इस प्रकार की शिक्षा के विचार में सामाजिक हित का ध्यान रखा जाता है तथा विभिन्न विषयो एवं सामाजिक कार्यों द्वारा छात्रों को नागरिकता की शिक्षा दी जाती है।

शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य के पक्ष में तर्क -

i. मनुष्य का जन्म, विकास व पोषण समाज में होता है तथा समाज ही उसकी सब आवश्यकताओं को पूर्ण करता है। समाज से अलग उसका जीवन असम्भव है अतः उसे समाज के लिये सब कुछ न्यौछावर के लिये तैयार रहना चाहिये।
ii. समाज सभ्यता व संस्कृति को जन्म देता है व उसका पोषण करता है तथा मानव की पाशविक प्रवृत्तियों का दमन कर सामाजिक पर्यावरण के अनुकूल बनाता है अतः शिक्षा में सामाजिक हित पर बल दिया जाना आवश्यक है।
iii. समाज में रहकर मनुष्य अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में आकर एक-दूसरे से विचारों एवं भावनाओं का आदान-प्रदान करता है जिसके फलस्वरूप उसकी विभिन्न शक्तियो का विकास होता है।
iv. समाज, मनुष्य को एकाकी जीवन से सामूहिकता की ओर अग्रसर करके उसे नई-2 खोजें एवं अविष्कार है का अवसर प्रदान करता है जिससे कि उसका जीवन उत्तम बनता है अतः उसे समाज के कल्याण की भावना से सराबोर होना चाहिये।

शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य के विपक्ष में तर्क-

i. अमनोवैज्ञानिक आधार - इस उद्देश्य में बालको की व्यक्तिगत रूचियों, प्रवृत्तियों व योग्यताओं के लिये कोई स्थान नहीं है बल्कि यह समस्त प्राणियों को एक ही सांचे में ढालना चाहते हैं जिससे उनका स्वाभाविक विकास कुंठित हो सकता है।
ii. मनुष्य -साध्य को प्राप्त करने का साधन - शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य के अनुसार मनुष्य केवल साधन मात्र है जिसके प्रयोग से सामज के साध्य को प्राप्त किया जाता है। इसमें यदि

सामाजिकता का अर्थ व्यक्ति को राष्ट्र के लिये तैयार करने से लिया जाये तो वह केवल राजनैतिक दृष्टि से ही तैयार होता है व अन्य दृष्टियों से पीछे रह जाता है।

iii. एकांगी शिक्षा - सामाजिक उद्देश्य जिस शिक्षा का समर्थन करता है, वह एकांगी है। इस शिक्षा में नागरिकता और समाज सेवा की शिक्षा के लिये कोई स्थान नही है। य उनको केवल आज्ञाकारी व्यक्तियों के रूप में राजनीतिक क्षेत्र के लिये तैयार करती है। परिणामतः उनका मानसिक, सौन्दर्यात्मक, चारित्रिक, एवं आध्यात्मिक विकास नहीं हो पाता है।

iv. व्यावसायिकों का निर्माण - शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य, सामाजिक हितों का ध्यान रखकर व्यक्तियों को विभिन्न व्यवसायो की शिक्षा देना है इससे समाज की आवश्यकताये तो पूरी हो जाती हैं पर मनुष्य के व्यक्तित्व का धार्मिक, आध्यात्मिक, कलात्मक और सौन्दर्यात्मिक विकास नहीं हो पाता। हार्न का कथन है -''ऐसी शिक्षा अन्ततः कुशल व्यावसायिकों को निर्माण करती हैयह शिक्षा धार्मिक व आध्यात्मिक अनुभव को कोई महत्व नहीं देती है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य केा उग्र रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। व्यक्ति का जीवन केवल समाज, देश या राष्ट्र के लिये ही नहीं वरन् अपने लिये भी है।

3.4.1 वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्यों में समन्वय -

शिक्षा के वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्यों के बारे में विवाद का कारण वह विचारधारा है, जिसके अनुसार व्यक्ति व समाज को एक दूसरे- का विरोधी माना गया है। इस विचारधारा की अतिवादिता से समाज व व्यक्ति दोनों को ही समय-समय पर हानि उठानी पड़ती है।

इसका निदान करने लिये आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा के वैयक्तिक एवं समाजिक उद्देश्यों का समन्वय किया जाये क्योंकि यह दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं क्योंकि व्यक्ति एवं समाज दोनों अपनी प्रगति के लिये एक दूसरे के सहारे पर निर्भर हैं। न ही व्यक्ति-विहीन समाज की कल्पना की जा सकती है नही समाज -विहीन व्यक्ति की। रॉस के कथनानुसार- यह स्पष्ट है कि मनुष्य की वैयक्तिकता और व्यक्तित्व का विकास केवल समाज में ही हो सकताहै उससे अलग रहकर नहीं। मेंकाइवर का कहना है कि ''समाजीकरण और वैयक्तिकरण - एक ही प्रक्रिया के दो पहलू हैं। ''

अतः यह स्पष्ट ही है कि शिक्षा के वैयक्तिक एवं सामाजिक उद्देश्यों में विरोध नहीं बल्कि समन्वय ही है अतः प्रश्न यह उठता है कि समन्वय के अनुसार शिक्षा का रूप कैसा होना चाहिये? हमें ऐसी शिक्षा व्यवस्था करनी चाहिये जिसमें न तो समाज व्यक्ति को अपना दास बना सके और न ही

व्यक्ति इतना स्वतन्त्र हो सके कि वह सामाजिक नियमों को ठुकरा कर अपनी मनमानी कर सके। इस शिक्षा व्यवस्था में व्यक्ति और समाज की स्वतन्त्रता ऐसी सीमाओं में रहनी चाहिये, जिससे दोनों का विकास व कल्याण हो सके।

3.4.2 भारतवर्ष की शैक्षिक आवश्यकतायें-

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त भारत ने अपने को 'गणराज्य' में परिवर्तित किया और अपना ध्येय 'एक समाजवादी राज्य' की स्थापना रखा है। उक्त आदर्श की प्राप्ति के संदर्भ में देश में प्रदान की जाने वाली शिक्षा का उद्देश्य भी इसी के अनुरूप होना चाहिऐ। भारतवर्ष की मुख्य रूप से शैक्षिक आवश्यकतायें निम्नलिखित हैः-

1.शिक्षा द्वारा नागरिकों में ऐसी आदतों, अभिरूचियों और चारित्रिक गुणों का विकास किया जाये, जिससे वे अपने उत्तरदायित्वों को भली प्रकार निभा सकें व उन प्रवृत्तियों को रोक सकें, जो राष्ट्रीयता व धर्मनिरपेक्षता के लिये बाधक है।

2.भारत साधन सम्पन्न है परन्तु अधिकांश जनसंख्या दरिद्रता की स्थिति में है। अतः आवश्यक है कि शिक्षा द्वारा लोगों की उत्पादन शक्ति का विकास किया जाये। राष्ट्रीय सम्पत्ति में वृद्वि की जाये व इस प्रकार लोगों के रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठाया जाये।

3.भारत में अधिकांश जनसंख्या अशिक्षित तथा जीविकोपार्जन की समस्या से ग्रसित है जिसके कारण सांस्कृतिक विकास की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा पद्धति में इस प्रकार सुधार किया जाये कि वह सांस्कृतिक पुनरूत्थान में योगदास दे सके।

3.5 आधुनिक प्रजातान्त्रिक भारत के शैक्षिक उद्देश्य

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में कई शिक्षा आयोगों ने जनतन्त्रायी भारत के लिये शिक्षा के उद्देश्य बताये हैं जोकि निम्न प्रकार है:-

01. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अनुसारः- ''स्वयं प्रजातन्त्र का जीवन सामान्य, व्यवसायिक और जीविकोपार्जन सम्बन्धी शिक्षा के सवोच्च स्तर पर निर्भर है अतः हमारे समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये विष्वविद्यालयों का कार्य होना चाहिये-विवेक का विस्तार, नये ज्ञान के लिये अधिक इच्छा, जीवन के अर्थ को जानने के लिये अधिक प्रयास और व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था।''

माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसारः- ''शिक्षा व्यवस्था को आदतो, दृष्तिकोणों और चरित्र के गुणों के विकास में योग देना पड़ेगा, जिससे कि नागरिक जनतन्त्रीय नागरिकता के दायित्वों का

योग्यता से निर्वाह करें और उन ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों का विरोध कर सकें, जो व्यापक और राष्ट्रीय धर्म-निरपेक्ष दृष्टिकोण के विकास में बाधक है।''

शिक्षा आयोग के अनुसार:-''प्रजातन्त्र में व्यक्ति स्वयं साम्य है और इसलिये शिक्षा का प्रमुख कार्य-उसको अपनी शक्तियो के पूर्ण विकास के लिये अधिक से अधिक अवलर प्रदान करना है।''

आधुनिक लोकतन्त्रीय भारत में व्यक्ति से सम्बन्ध रखने वाले शिक्षा के निम्न उद्देश्य हो सकते है:-

(1) शारीरिक विकास का उद्देश्य

(2) मानसिक विकास का उद्देश्य

(3) चारित्रिक विकास का उद्देश्य

(4) आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य

(5) सांस्कृतिक विकास का उद्देश्य

(6) व्यक्तित्व विकास का उद्देश्य

(7) व्यवसायिक कुशलता की उन्नति एवं जीवन यापन की कला में दीक्षा

उपरोक्त उद्देश्यों का विशद वर्णन प्रश्न संख्या (1) में किया जा चुका है। उपरोक्त उद्देश्यों के सम्बन्ध में डा0 राधाकृष्णन ने लिखा हैं:- ''हमें युवकों को यथासम्भव सर्वोत्तम प्रकार के सर्वकार्यकुशल उन्हें शिष्टाचार और सम्मान के अलिखित नियमों को अपनी इच्छा से मानना सीखना चाहिये।''

3.5.1 प्रजातन्त्रीय भारत के समाज-सम्बन्धी शैक्षिक उद्देश्य:-

तत्कालीन भारत का आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक वातावरण अनाचार अविश्वास, असहिष्णुता, भ्रष्टाचार और अनेक कुरीतियों का शिकार है। ऐसी स्थिति में समाजवादी राज्य की स्थापना का स्वप्न तभी साकार हो जाता है। जब शिक्षा द्वारा निम्नलिखित सामाजिक परिवर्तन किये जायें।

1. समाजवादी समाज की स्थापना:- भारत वर्ष का अन्तिम उद्देश्य देश में समाजवादी शासन की स्थापना करना है ऐसे समाज की विशेषतायें होती है असमान्ता की भावना का अभाव, स्वस्थ और सुखी जीवन व्यतीत करने के अवसर, शारीरिक एवं आर्थिक सुरक्षा आदि।

उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति में शिक्षा उल्लेखनीय भूमिका निभा सकती हैं तथा व्यक्तियों में समाजवाद की भावना को स्थायी रूप प्रदान कर सकती है। इस सम्बन्ध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुये

जवाहर लाल नेहरू ने लिखा है:- ''मैं समाजवादी राज्य में विश्वास करता हूँ और मैं चाहता हूँ कि शिक्षा का इस उद्देश्य की ओर विकास किया जाये।''

2. सामाजिक बुराइयों का अन्त:-भारतीय समाज में उपस्थित विभिन्न बुराइयों जैसे - जाति प्रथा, जनसंख्या वृद्धि आदि का अन्त शिक्षा द्वारा ही सम्भव है।

3. सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का समावेश:- व्यक्तियों को सबके साथ मिलकर सामाजिक जीवन को नैतिक व भौतिक दृष्टिकोण से अधिक अच्छा बनाने का उत्तरदायित्व लेना चाहिये इस उद्देश्य की प्राप्ति स्कूलों को सामुदायिक जीवन की इकाइयॉ बनाकर किया जा सकता है।

4. जन-शिक्षा की व्यवस्था:-शिक्षित व्यक्ति ही उचित प्रतिनिधियों को चुनकर देश की प्रगति में योग दे सकता है। परन्तु जिस देश में इतनी अशिक्षा है। वहॉ किस प्रकार जनतन्त्र सफलतापूर्वक कार्य कर सकता है।

अतः शिक्षा को सभी जन-जन एवं घर-घर में उचित व्यवस्था की जानी चाहिये।

5. नेतृत्व के गुणों का विकास:-लोकतन्त्र का अर्थ है:- ''सबसे बुद्धिमान निर्वाचित नागरिकों के नेतृत्व में सबकी प्रगति।'' अतः शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य, व्यक्तियों में नेतृत्व के गुणों का विकास करना है।

6. लोकतन्त्रीय नागरिकता का विकास :-लोकतन्त्र में नागरिकता हेतु-विभिन्न मानसिक, सामाजिक एवं नैतिक गुणों की आवश्यकता होती है। इनका प्रशिक्षण शिक्षा द्वारा किया जा सके। इस सम्बन्ध में प्रथम आवश्यकता यह है कि नागरिक में स्पष्ट रूप से विचार करने की क्षमता हो जिससे वह सत्य-असत्य में अन्तर कर सके, धमन्धितापूर्ण बातों को अस्वीकार कर सके, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रयोग कर सके। स्वतन्त्र वाद-विवाद और शन्तिपूर्ण विचार विनिमय-प्रजातन्त्र के आधार है। अतः नागरिकों में शिक्षा द्वारा उक्त गुणों का विकास किया जाना चाहिये।

7. अन्तर-सांस्कृतिक भावना का विकास:- जवाहर लाल नेहरू के कथा कथनानुसार ''प्राचीन संसार बदल गया है और प्रार्थना बाधा में समाप्त होती जा रही है, जीवन अधिक अन्तर्राष्ट्रीय होता जा रहा है।'' हमें आने वाली अन्तर्राष्ट्रीयता में अपनी भूमिका अदा करनी है तथा इस कार्य के लिये संसार से सम्पर्क अनिवार्य है।

आज का संसार विश्वबन्धुत्व की ओर बढ़ रहा है अतः दूसरे देशों से सम्बन्ध एवं सम्पर्क स्थापित करने हेतु हमें शिक्षा का सहारा लेना होगा। दूसरे शब्दों में- शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य-अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान की वृद्धि करना है।

3.5.2 लोकतन्त्रीय भारत के राष्ट्र-सम्बन्धी शैक्षिक उद्देश्य-

भारतीय राष्ट्र की कुछ प्रमुख समस्यायें है जैसे कि खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भरता की समस्या, गरीबी एवं बेरोजगारी, सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिक तनाव एवं उपद्रव तथा राजनैतिक अस्थिरता आदि। उपर्युक्त समस्याओं के हल के लिये स्पष्ट दृष्टि, गहरी सूझ-बूझ, सामुदायिक अनुशासन एवं कठोर श्रम तथा त्यागपूर्ण नेतृत्व की आवश्यकता हैं। इसके लिये शैक्षिक क्रान्ति की आवश्यकता है जिस हेतु हमें निम्नलिखित शैक्षिक उद्देश्यों की आवश्यकता है:-

1. उत्पादकता में वृद्धि करना:- भारत को खाद्यान्नों के उत्पादन में आत्मनिर्धरता प्राप्त करने की आवश्यकता है। जिसके लिये शिक्षा व उत्पादकता में सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है। शिक्षा व उत्पादकता में सम्बन्ध स्थापित करने के लिये विज्ञान को शिक्षा व संस्कृति के मूल अंग के रूप में ग्रहण किया जाये, कार्य अनुभव को सामान्य शिक्षा का एक अभिन्न अंग बनाना, उद्योग, कृषि तथा व्यापार की आवश्यकता की पूर्ति हेतु माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण किया जाना सम्मिलित है।

2. सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति:- इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये 'कोठारी आयोग' ने सुझाव दिया है कि किसी-न-किसी प्रकार की सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा को सभी छात्रों के लिये अनिवार्य बनाया जाना चाहिये। इस सेवा के द्वारा चरित्र निर्माण, अनुशासन में सुधार, शारीरिक श्रम की महत्ता एवं सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित की जा सकती है।

3. आधुनिकीकरण की प्रक्रिया की गति तीव्र करना:- आधुनिक, विज्ञान-आधारित तकनीकी ने उत्पादन को चमत्कारिक ढंग से बढ़ाया है साथ ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन को भी प्रभावित किया है इस कारण ऐसे मूलभूत सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन हुये हैं, जिन्हें सामान्य रूप से 'आधुनिकीकरण' कहा जाता है। आधुनिकीकरण को तीव्र बनाने के लिये शिक्षा का विस्तार कर शिक्षित तथा कुशल नागरिक तैयार किये जाने चाहिये।

4. सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करना:- आधुनिकीकारण के साथ-साथ सामाजिक नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाना चाहिये।

अन्ततः हम हुमॉयू कबीर के शब्दों में कह सकते है:-

''भारत में शिक्षा द्वारा लोकतन्त्रीय चेतनात्र, वैज्ञानिक खोज और दार्शनिक सहिष्णुता का निर्माण किया जाना चाहिए। केवल तभी हम उन परम्पराओं के उचित उत्तराधिकारी होंगे जिनका निर्माण इस देश में अतीत में हुआ है। केवल तभी हम इस आधुनिक विरासत में अपना भाग पाने के अधिकारी होंगे, जो विश्व के समस्त राष्ट्रों की विरासतों को एक करने का प्रयत्न करती है।''

अभ्यास प्रश्न

1. शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य में दो रूप हैं पहला..... तथा दूसरा.....
2. ..... विहीन व्यक्ति कोरी कल्पना है (रेमान्ट के अनुसार)
3. ..... और वैयक्तिकरण एक ही प्रक्रिया के दो पहलू है।
4. भारत में ..... मूल्यों की शिक्षा को महत्व दिया गया है।

3.6 सारांश

i. प्रत्येक समाज में शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण दार्शनिक सिद्धान्तों के साथ-साथ व्यक्ति तथा समाज की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं, मूल्यों आदि को आधार बनाकर किया जाता है।

ii. शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य के अनुसार समाज या राज्य का स्थान व्यक्ति से बहुत ऊँचा है। समाज के हित में ही व्यक्ति का हित है। समाज में रह कर ही व्यक्ति अपनी आवश्यकतायें पूर्ण कर सकता है, अपना विकास कर सकता है तथा उन्नति के पथ पर आगे बढ़ सकता है

iii. व्यक्ति व समाज को एक दूसरे- का विरोधी माना गया है। इस विचारधारा की अतिवादिता से समाज व व्यक्ति दोनों को ही समय-समय पर हानि उठानी पड़ती है।

iv. भारत वर्ष का अन्तिम उद्देश्य देश में समाजवादी शासन की स्थापना करना है ऐसे समाज की विशेषतायें होती है असमान्ता की भावना का अभाव, स्वस्थ और सुखी जीवन व्यतीत करने के अवसर, शारीरिक एवं आर्थिक सुरक्षा आदि।

3.7 शब्दावली

समाजवाद का शत्रु:- व्यक्तिवाद, समाजवाद का विपरीत है जिसके कारण हमारे देश में शिक्षा के इस अतिवादी दृष्टिकोण को अपनाना सम्भव नहीं है।

सामाजिक विघ□न:- वैयक्तिक उद्देश्य व्यक्ति को प्रत्येक प्रकार की स्वतन्त्रता देने के पक्ष में है जिससे सामाजिक उद्देश्यों की अनदेखी सम्भव है जिससे सामाजिक विघटन की सम्भावना है।

एकांगी शिक्षा: - सामाजिक उद्देश्य जिस शिक्षा का समर्थन करता है, वह एकांगी है। इस शिक्षा में नागरिकता और समाज सेवा की शिक्षा के लिये कोई स्थान नही है। य उनको केवल

आज्ञाकारी व्यक्तियों के रूप में राजनीतिक क्षेत्र के लिये तैयार करती है। परिणामतः उनका मानसिक, सौन्दर्यात्मक, चारित्रिक, एवं आध्यात्मिक विकास नहीं हो पाता है।

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.	आत्माभिव्यक्ति, आत्मानुभूति	2.	समाज
3.	सामाजीकरण	4.	लोकतांत्रिक

3.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. चक्रवर्ती, ए0के0. प्रिसीपल एण्ड प्रैक्टिस ऑफ एजुकेशन, आर0लाल बुक डिपो मेंरठ।

2. गुप्त (डा0) पाल, एवं मदन मोहन. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, न्यू कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद

3. त्यागी एवं पाठक. शिक्षा के सिद्धांत, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।

4. चौबे (डा0) एस0पी0एवं अखिलेश चौबे, फिलोसोफिकल एण्ड सोशोलाजिकल फाउण्डेशन्स ऑफ एजुकेशन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्य एक दूसरे के पूरक हैं इस कथन की व्याख्या कीजिए।

2. क्या हमारी वर्तमान शिक्षा उन उद्देश्यों के अनुकुल हैं, जो एक स्वतन्त्र प्रजातांत्रिक देश की शिक्षा के होने चाहिये ? क्या इस शिक्षा से हमारे व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन की समस्यायें हल हो सकती हैं ? यदि नहीं, तो सुधार के लिये सुझाव दीजिये ?

3. शिक्षा वैयक्तिक एवं सामाजिक उद्देश्यों का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत कीजिए।

4. आधुनिक प्रजातांत्रिक भारत के शैक्षिक उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

5. इनमें से प्रत्येक पर लगभग 100 शब्द लिखें-

1. शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य।

2. आत्माभिव्यक्ति एवं आत्मानुभूति का उद्देश्य।
3. शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य।
4. शिक्षा का प्रजातांत्रिक उद्देश्य

इकाई 4- शिक्षा सम्बंधी संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provisions with Regard to Education)

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 भारत का संविधान- उद्देशिका
4.3.1 मूल अधिकार
4.3.2 मूल कर्तव्य
4.4 विभिन्न स्तरों पर राजकीय शैक्षिक कार्य
4.5 भारत के संविधान में शिक्षा सम्बंधी अनुच्छेद- प्रावधान
4.6 शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009
4.7 सारांश
4.8 शब्दावली
4.9 अभ्यास प्रश्नोंके उत्तर
4.10 संदर्भ ग्रंथ
4.11 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

आधुनिक युग में मनुष्य के लिए शिक्षा आवश्यक हो गई है। इसका कारण यह है कि आज का युग भौतिक एवं विज्ञान का युग है। इसलिए मनुष्य का सचेत और जागरूक होकर जीवित रहना आवश्यक हो गया है। एक समय था जब शिक्षा सबके लिए नहीं थी। शिक्षा केवल कुछ धनी लोगों के लिए थी तथा इसका उद्देश्य केवल व्यक्ति का बौद्धिक विकास था। परन्तु आधुनिक युग में शिक्षा जनसाधारण व्यक्ति के लिए भी उतनी ही आवश्यक है जितनी वर्ग विशेष के लिए हुआ करती थी। इस स्थिति का मुख्य कारण प्रजातन्त्र का विकास तथा प्रसार है।

15 अगस्त 1947 ई0 को हमारा देश स्वतन्त्र हुआ। भारतीय संविधान जो 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ उसमें शिक्षा के प्रति पूर्ण रूप से संवैधानिक दायित्व की चर्चा की गई। भारत का संविधान सर्वप्रथम हमें शिक्षा की विभिन्न समस्याओं को समझाने में सहायता प्रदान करता है। शिक्षा जगत् से

सम्बन्धित संविधान में जो व्यवस्थाएँ हमारी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी हुई हैं उनका समझना बहुत आवश्यक है।

इस इकाई में आप शिक्षा से सम्बंधित विभिन्न प्रावधानों का अध्ययन करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- भारत के नागरिकों के मूल अधिकार जान पायेंगे।
- भारत के नागरिकों के मूल कर्तव्यों से परिचित हो पायेंगे ।
- विभिन्न स्तरों पर राजकीय शैक्षिक कार्य की व्याख्या कर सकेंगे।
- भारत जे संविधान में वर्णित विभिन्न शिक्षा सम्बंधी प्रावधानों को लिख पायेंगे।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 का वर्णन कर सकेंगे।

4.3 भारत का संविधान- उद्देशिका

हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व- संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय विचार, अभिव्यक्ति,विश्वास,धर्म और उपसना की स्वतंत्रता,प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढाने के लिए दृढसंकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवंबर , 1949 ई0 को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

4.3.1 मूल अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 12 से 32 में नागरिकों के मूल अधिकारों का उल्लेख है।वर्तमान में भारत के नागरिकों के निम्नलिखित छः मूल अधिकार हैं-

1. समता का अधिकार
2. स्वातंत्र्य का अधिकार
3. शोषण के विरुद्ध अधिकार

4. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार
5. संस्कृति और शिक्षाका अधिकार (6-14 वर्ष की आयु)
6. सांविधानिक उपचारों का अधिकार

वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा 6-14 वर्ष तक के बालकों के लिए शिक्षा को मूल अधिकार बनाया गया।

4.3.2 मूल कर्तव्य

संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम , 1976 द्वारा संविधान 10 मौलिक कर्त्तव्यों को समाविष्ट कर दिया गया है। वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद 51- क से एक अन्य मौलिककर्तव्य समाहित किया गया। भारत के प्रत्येक नागरिक के 11 मौलिक कर्त्तव्य निम्नवत हैं-

1. संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गान का आदर करे,
2. स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे,
3. भारत की प्रभुसत्त, एकता और अखण्डता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे,
4. देश की रक्षा करें और आह्वान किए जानेपर राष्ट्रकी सेवा करें ,
5. भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं,
6. हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करें ,
7. प्राकृतिक पर्यावरण की, ज्जिसके अंर्तगत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करें तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखें ,
8. वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववादी और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करें ,
9. सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहें
10. व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू ले।
11. माता-पिता या अभिभावक के रूप में भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह 6 से 14 वर्ष के बच्चे या पाल्य को शिक्षा प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध कराएगा।

अभ्यास प्रश्न

1. संविधान के अनुच्छेद 12 से 32 में नागरिकों के _____ का उल्लेख है।
2. भारत के नागरिकों के मूल अधिकार कोलिखिए।
3. वर्ष 2002 में _____ द्वारा 6-14 वर्ष तक के बालकों के लिए शिक्षा को मूल अधिकार बनाया गया।
4. संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम , 1976 द्वारा संविधान 10_____ को समाविष्ट कर दिया गया है।
5. भारत के प्रत्येक नागरिक के _____ मौलिक कर्त्तव्य हैं
   i. 10
   ii. 11
   iii. 12
   iv. 13

4.4 विभिन्न स्तरों पर राजकीय शैक्षिक कार्य Educational Functions of Government at Various Levels

संविधान के अनुच्छेद 246 के अंर्तगत सूची 1 – संघ सूची तथा सूची 3- समवर्ती सूची में सम्मिलित शिक्षा विषयक तथ्य हैं । संविधान के अन्तर्गत सरकार के विभिन्न स्तरों पर शिक्षा से सम्बन्धित कर्तव्यों तथा दायित्वों का उल्लेख है। सरकार संघ स्तर पर, राज्य स्तर पर तथा स्थानीय स्तर पर शिक्षा सम्बन्धी कार्यों को व्यावहारिक रूप प्रदान करेगी। भारत का संविधान संघीय है। इसलिए शक्तियों का बटवारा केन्द्र और राज्यों के बीच किया गया है। शक्ति से सम्बन्धित तीन सूचियाँ निर्मित हैं:-

1. संघ सूची(Union list)
2. राज्य सूची (State list)
3. समवर्ती सूची (Concurrent list)

संघ सूची (Union list)154

भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 की राज्य सूची में प्रविष्टियाँ निम्नवत हैं-

- **63** इस संविधान के प्रारंभ पर काशी हिंदु विश्वविद्यालय , अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और (दिल्ली विश्वविद्यालय) नामों से ज्ञात संस्थाएं (अनुच्छेद371ड़ के अनुसरण में स्थापित विश्वविद्यालय) संसद द्वारा, विधि द्वारा,राष्ट्रीय महत्व की घोषित कोई अन्य संस्था।
- **64** भारत द्वारा पूर्णतः या भागतःवित्तपोषित और संसद द्वारा , विधि द्वारा, राष्ट्रीय महत्व की घोषित वैज्ञानिक या तकनीकी शिक्षा संस्था।
- **65** संघ के अभिकरणऔर संस्थाएं जो-
  क. वृत्तिक , व्यवसायिक या तकनीकी प्रशिक्षण के लिए है जिसके अंतर्गत पुलिस अधिकारियों का प्रशिक्षण है; या
  ख. विशेष अध्ययन या अनुसंधान की अभिवृद्धि के लिए है; या
  ग. अपराध के अंवेषण या पता चलाने में वैज्ञानिक या तकनीकी सहायता के लिए है।
- **66** उच्चतर शिक्षा या अनुसंधान संस्थाओं में तथा वैज्ञानिक और तकनीकी संस्थाओं में मानकों का समन्वय और अवधारणा ।

राज्य सूची (State list)

भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 की राज्य सूची में प्रविष्टियाँ निम्नवत हैं-

- **14**कृषि जिसके अंतर्गत कृषि शिक्षा और अनुसंधान, नाशक जीवों से संरक्षण और पादप रोगों का निवारण है।

समवर्ती सूची (Concurrent list)

सन 1976 में 42 वे संवैधानिक संशोधन से शिक्षा को समवर्ती सूची में सम्मिलित किया गया।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 की समवर्ती सूची में प्रविष्टियाँ निम्नवत हैं-

- **25**सूची1 की प्रविष्टि 63, 64, 64 और 66 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, शिक्षा जिसके अंतर्गत तकनीकीशिक्षा , आयुर्विज्ञान शिक्षा और विश्वविद्यालय हैं; श्रमिकों का व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण।

4.5 भारत का संविधान और शिक्षा

अनुच्छेद 28 –कुछ शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के बारे में स्वतंत्रता-

1. राज्य – निधि से पूर्णतः किसी शिक्षा संस्था में कोई धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी।
2. खण्ड (1) की कोई बात ऐसी शिक्षा संस्था को लागू नहीं होगी जिसका प्रशासन राज्य करता है किंतु जो किसी ऐसे विन्यास या न्यास के अधीन स्थापित हुई है जिसके अनुसार उस संस्था में धार्मिक शिक्षा देना आवश्यक है।
3. राज्य से मान्यता प्राप्त या राज्य-निधि से सहायता पाने वाली शिक्षा संस्था में उपस्थित होने वाले किसी व्यक्ति को ऐसी संस्था में दी जाने वाली धार्मिक शिक्षा में भाग लेने के लिए या ऐसी संस्था में या उससे संलग्न स्थान में की जाने वाली धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के लिए तब तक बाध्य नहीं किया जाएगा जब तक कि उस व्यक्ति ने, या यदि वह अवयस्कहै तो उसके संरक्षक ने, इसके लिए अपनी सहमति नहीं दे दी है।

संस्कृति और शिक्षा सम्बंधी अधिकार

अनुच्छेद 29-अल्पसंख्यक- वर्गों के हितों का संरक्षण-

(1) भारत के राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी अनुभाग को, जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपी या संस्कृति है, उसे बनाए रखने का अधिकार होगा।

(2)राज्य द्वारा पोषित या राज्य-निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक ओको केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा या इन्में से किसी के आधार पर वंचित नहीं किया जाएग।

अनुच्छेद 30- शिक्षा संस्थओं की स्थापना करने का अल्पसंख्यक- वर्गों का अधिकार –

(1) धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक-वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा।

(2) शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में राज्य किसी शिक्षा संस्थाके विरुद्ध इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक- वर्ग के प्रबंध में है।

अनुच्छेद 41– कुछ दशाओं में काम , शिक्षा और लोक सहायता पाने का अधिकार- राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर ,काम पाने के, शिक्षा पाने के और बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और निःशक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकारकोप्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा।

अनुच्छेद 46- अनुसूचित जातियों , अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्लब वर्गों के शिक्षा और अर्थ सबंधी हितों की अभिवृद्धि – राज्य , जनता के दुर्लब वर्गों के , विशिष्टतया, अनुसूचित जातियों और जनजातियोंके शिक्षा और अर्थ सम्बंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा ।

अनुच्छेद 15 (3) स्त्री शिक्षा का विशिष्ट प्रावधान – इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

अनुच्छेद 15 (4)- इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 29 के खंड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नतिके लिए या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

अनुच्छेद 350 व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वली भाषा- प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति , संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभ्यावेदन देने का हकदार होगा।

अनुच्छेद 350 क. प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं- प्रत्येक राज्य के भीतर प्रत्येक प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक- वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगाऔर राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निर्देश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।

अनुच्छेद 350 ख. भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गोंके लिए विशेष अधिकारी-(1) भाषाई अल्पसंख्यक- वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगाजिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) विशेष अधिकारी का यह कर्तव्य होगाके वह इस संविधान के अधीन भाषाई अल्पसंख्यक – वर्गों के लिए उपबंधित रक्षापायों से सम्बंधित सभी विषयों का अंवेषण करे और उन विषयों के सम्बध में ऐसे अंतरालों पर जो राष्ट्रपति निर्दिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे और राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगाऔर सम्बंधित राज्यों की सरकारों को भिजवाएगा।

अनुच्छेद 343- संघ की राजभाषा – संघ की रजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी।

अनुच्छेद 351 हिंदी भाषा के विकास के लिए निदेश- संघ का यह कर्तव्य होगाकि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए ,उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी में और आठ्वीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप , शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक या वाछंनीय हो वहाँ उसके शब्द – भंडार के लिए मुख्यत:संस्कृत और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

4.6 शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 Right to Education Act 2009

- शिक्षा के अधिकार को संवैधानिक आधार प्रदान करने के लिए दिसम्बर 2002 में 86वाँ संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 21 A (भाग - III) जोड़ा गया जिसके अंतर्गत शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार का दर्जा दिया गया।
- 19 जुलाई 2006 को शिक्षा के अधिकार से जुड़े सभी संगठनों की संगठनों की सन्युक्त बैठक बुलाई जिसमें संसदीय कार्यवाही व निर्देशों की आवश्यकता व निर्धारण हेतु निर्णय लिये गये।
- 2 जुलाई 2009 को यह विधेयक केंद्रीय मंत्रीमंडल द्वारा अनुमोदित कर दिया गया।
- 20 जुलाई 2009 को राज्यसभा द्वारा इसे पारित कर दिया गया है।
- 4 अगस्त 2009 को लोकसभा द्वारा भी इसे पारित कर दिया गया।
- 3 सितम्बर 2009 को राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चातयह अधिनियम बन गया।
- 1 अप्रेल 2010 को यह अधिनियम जम्मू व कश्मीर राज्य को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में लागू हो गया।

“ शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 भारत में लागू होने के पश्चात भारत विश्वके उन 135 देशों में सम्मिलित हो गया है जिनमें शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार के रूप में मान्यता दी गई है।

वास्तव में, शिक्षा जो एक संवैधानिक अधिकार शुरू में था अब उसे एक मौलिक अधिकार का दर्जा प्राप्त है. भारत के संविधान की शुरुआत में, शिक्षा का अधिकार अनुच्छेद 41 के तहत राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के तहत मान्यता दी गई थी जिसके अनुसार,

"राज्य अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर, शिक्षा और बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी और विकलांगता के मामले में सार्वजनिक सहायता करने के लिए काम करते हैं, सही हासिल करने के लिए प्रभावी व्यवस्था करने, और नाहक के अन्य मामलों में चाहते हैं "

नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का आश्वासन राज्य के नीति निर्देशक अनुच्छेद 45, के अनुसार निम्नवत दिया गया है-

"राज्य, इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष की अवधि के भीतर सभी बालकों को चौदह वर्ष की आयु पूरी करने तक नि:शुल्कऔर अनिवार्य शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का प्रयास करेगा"

शिक्षा का अधिकार अब 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए एक मौलिक अधिकार है। सरल शब्दों में इसका अर्थ यह है कि सरकार प्रत्येक बच्चे को आठवीं कक्षा तक की नि:शुल्क पढ़ाई के लिए उत्तरदायी होगी, चाहे वह बालक हो अथवा बालिका अथवा किसी भी वर्ग का हो। इस प्रकार इस कानून ने देश के बच्चों को मजबूत, साक्षर और अधिकार संपन्न बनाने का मार्ग तैयार कर दिया है।

इस अधिनियम में सभी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करनेका प्रावधान है, जिससे ज्ञान, कौशल और मूल्यों से युक्त होकर वे भारत के प्रबुद्ध नागरिक बनाये जा सके। यदि विचार किया जाए तो आज देशभर में स्कूलों से वंचित लगभग एक करोड़ बच्चों को शिक्षा प्रदान करना सचमुच हमारे लिए एक दुष्कर कार्य है। इसलिए इस लक्ष्य को साकार करने के लिए सभी हितधारकों — माता-पिता, शिक्षक, स्कूलों, गैर-सरकारी संगठनों और कुल मिलाकर समाज, राज्य सरकारों और केन्द्र सरकार की ओर से एकजुट प्रयास का आह्वान किया गया है।

इस अधिनियम में इस बात का प्रावधान किया गया है कि बालक की पहुंच के अन्तर्गत आने वाला कोई निकटवर्ती स्कूल किसी भी बच्चे को प्रवेश देने से इनकार नहीं करेगा। इसमें यह भी प्रावधान शामिल है कि प्रत्येक 30 छात्र के लिए एक शिक्षक के अनुपात को कायम रखते हुए पर्याप्त संख्या में सुयोग्य शिक्षक स्कूलों में मौजूद होने चाहिए। स्कूलों को पांच वर्षों के भीतर अपने सभी शिक्षकों को प्रशिक्षित करना होगा। उन्हें तीन वर्षों के भीतर समुचित सुविधाएं भी सुनिश्चित करनी होगी,

जिसमें खेल का मैदान, पुस्तकालय, पर्याप्त संख्या में अध्ययन कक्ष, शौचालय, शारीरिक विकलांग बच्चों के लिए निर्बाध पहुंच तथा पेय जल सुविधाएं शामिल हैं। स्कूल प्रबंधन समितियों के 75 प्रतिशत सदस्य छात्रों की कार्यप्रणाली और अनुदानों के इस्तेमाल की देखरेख करेंगे। स्कूल प्रबंधन समितियाँ तथा स्थानीय अधिकारी स्कूल से वंचित बच्चों की पहचान करेंगे और उन्हें समुचित प्रशिक्षण के बाद उनकी उम्र के अनुसार समुचित कक्षाओं में प्रवेश दिलाएंगे। सम्मिलित विकास को बढावा देने के उद्देश्य से निजी स्कूल भी सबसे निचली कक्षा में समाज के गरीब और हाशिये पर रहने वाले वर्गों के लिए 25 प्रतिशत सीटें आरक्षित करेंगे।

अभ्यास प्रश्न

6. संविधान के किस अनुच्छेद के अंर्तगत सूची 1 – संघ सूची तथा सूची 3- समवर्ती सूची में सम्मिलित शिक्षा विषयक तथ्य हैं ?
7. सन 1976 में 42 वे संवैधानिक संशोधन से शिक्षा को _____ में सम्मिलित किया गया।
   i. संघ सूची
   ii. राज्य सूची
   iii. समवर्ती सूची
8. _____ शिक्षा संस्थओं की स्थापना करने का अल्पसंख्यक- वर्गों का अधिकार।
9. _____इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।
10. अनुच्छेद 343- संघ की रजभाषा _____ हिंदी और लिपि_____ देवनागरी होगी।
11. शिक्षा के अधिकार को संवैधानिक आधार प्रदान करने के लिए दिसम्बर 2002 में 86वाँ संविधान संशोधन द्वारा _____ जोड़ा गया जिसके अंतर्गत शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार का दर्जा दिया गया।
12. _____ 1 अप्रेल 2010 कोभारत में लागू हो गया।
13. शिक्षा का अधिकार अब _____वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए एक मौलिक अधिकार है।

4.7 सारांश

संविधान के अनुच्छेद 12 से 32 में नागरिकों के मूल अधिकारों का उल्लेख है। वर्तमान में भारत के नागरिकों के छः मूल अधिकार हैं।वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा 6-14 वर्ष तक के

बालकों के लिए शिक्षा को मूल अधिकार बनाया गया। संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम , 1976 द्वारा संविधान 10 मौलिक कर्त्तव्यों को समाविष्ट कर दिया गया है। वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद 51- क से एक अन्य मौलिक कर्तव्य समाहित किया गया।संविधान के अनुच्छेद 246 के अंर्तगत सूची 1 – संघ सूची तथा सूची 3- समवर्ती सूची में सम्मिलित शिक्षा विषयक तथ्य हैं । संविधान के अन्तर्गत सरकार के विभिन्न स्तरों पर शिक्षा से सम्बन्धित कर्तव्यों तथा दायित्वों का उल्लेख है।शिक्षासे सम्बंधित संवैधानिक प्रावधान निम्नलिखित हैं-

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(3) तथा 15(4) में वर्णित उपबंध से सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े नागरिकों, स्त्रियों और बालिकाओं के लिये आरक्षण का प्रावधान।
2. संविधान के अनुच्छेद 29 तथा 30 के आधार पर अल्पसंख्यक वर्ग के संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकारों का प्रावधान।
3. संविधान के अनुच्छेद 41 में वर्णित राज्य की नीति के निदेशक तत्व के अनुसार कुछ दशाओं में काम, शिक्षा और लोक सहायता पाने के अधिकार।
4. संविधान के अनुच्छेद 45 में में वर्णित राज्य की नीति के निदेशक तत्व के अनुसार बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षाकाउपबंध।
5. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षाऔरअर्थ सम्बंधी हितोंकी अभिवृद्धि हेतु राज्यों के कर्तव्य के संदर्भ में संविधान के अनुच्छेद 46।
6. वर्ष 2002 में संविधान के 86वें संशोधन द्वारा माता-पिता अथवा अभिभावकों के बच्चों अथवा पाल्यों को शिक्षा प्राप्त कराने सम्बंधी मूल अधिकार।
7. संविधान के अनुच्छेद 246 के अंर्तगत सूची 1 – संघ सूची तथा सूची 3- समवर्ती सूची में सम्मिलित शिक्षा विषयक तथ्य।
8. संविधान के अनुच्छेदों 350, 350 क, 350 ख तथा 351 के अंर्तगत वर्णित विशेष निदेश।
9. बालक- बालिकाओं के निः शुल्क एंव अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करनेकाशिक्षा काअधिकार अधिनियम 2009। शिक्षा का अधिकार अब वर्ष तक के सभी 14से 6बच्चों के लिए एक मौलिक अधिकार है । सरल शब्दों में इसका अर्थ यह है कि सरकार प्रत्येक बच्चे को आठवीं कक्षा तक की निशुल्क पढ़ाई: के लिए उत्तरदायी होगी, चाहे वह बालक हो अथवा बालिका अथवा किसी भी वर्ग का हो । इस प्रकार इस कानून ने देश के बच्चों को मजबूत, साक्षर और अधिकार संपन्न बनाने का मार्ग तैयार कर दिया है ।

4.8 शब्दावली

भारत का संविधान- उद्देशिका:-

हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व- संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा समस्त नागरिकों को:सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय विचार, अभिव्यक्ति,विश्वास,धर्म और उपसना की स्वतंत्रता,प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढाने के लिए दृढसंकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवंबर , 1949 ई0 को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

समवर्ती सूची (Concurrent list)

सन 1976 में 42 वे संवैधानिक संशोधन से शिक्षा को समवर्ती सूची में सम्मिलित किया गया।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 की समवर्ती सूची में प्रविष्टियाँ निम्नवत हैं-

25 सूची1 की प्रविष्टि 63, 64, 64 और 66 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, शिक्षा जिसके अंतर्गत तकनीकीशिक्षा , आयुर्विज्ञान शिक्षा और विश्वविद्यालय हैं; श्रमिकों का व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण।

4.9अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. मूल अधिकारों
2. वर्तमान में भारत के नागरिकों के निम्नलिखित छः मूल अधिकार हैं-
    i. समता का अधिकार
    ii. स्वातंत्र्य का अधिकार
    iii. शोषण के विरुद्ध अधिकार
    iv. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार
    v. संस्कृति और शिक्षाका अधिकार (6-14 वर्ष की आयु)
    vi. सांविधानिक उपचारों का अधिकार
3. 86वें संविधान संशोधन
4. मौलिक कर्त्तव्यों
5. 11
6. अनुच्छेद 246 के
7. iii. समवर्ती सूची

8. अनुच्छेद 30
9. अनुच्छेद 15 (3)
10. हिंदी, देवनागरी
11. अनुच्छेद 21 A (भाग - III)
12. शिक्षा का अधिकार अधिनियम
13. वर्ष 14से 6

4.10 संदर्भ ग्रंथ

1. भारत का संविधान, भारत सरकार, 1990
2. मिश्रा मन्जु , भारतीय सिक्षा पद्धति और उसकी समस्याएँ,2007, ओमेंगा पब्लिकेशन्स
3. Lal and Palod , Educational Thought and Practice, Surya Publications

4.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. भारतके संविधान में वर्णित मूल अधिकारों एवं मूल कर्तव्यों को लिखिए।
2. भारत के संविधान में वर्णितशिक्षा सम्बंधी अनुच्छेदों की व्याख्या कीजिए।
3. शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 का वर्णन कीजिए।

इकाई-5 विद्यालयः समाज का लघु रूप (School as a miniature society)

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 विद्यालय का विकास
5.3.1 विद्यालय का अर्थ।
5.3.2 विद्यालय की परिभाषाएं
5.4 समाज का अर्थ।
5.4.1समाज की परिभाषाएं
5.5 विद्यालय तथा समाज का सम्बन्ध
5.5.1 समाज में विद्यालय का स्थान - उसका महत्व व आवश्यकता
5.6 सारांश
5.7 शब्दावली
5.8 अभ्यास प्रश्नो के उत्तर
5.9 संदर्भ ग्रंथ
5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना:-

मानव समाज अपने आदर्शों, भावों तथा मान्यताओं तथा क्रियाओं को भावी सन्तति को प्रदान करता हुआ स्वयं को जीवित रखता है। जैसे-जैसे वह अनुभव करता है कि उसकी कुछ परम्पराएं, विचारधाराएं, मूल्य आदि पुरातन होते जा रहे हैं और वे उसे लाभप्रद सिद्ध नहीं हो रहे हैं, वैसे-वैसे वह उनको त्यागता चलता है और नवीन मान्यताओं, परम्पराओं, विचारधाराओं आदि को अपनाता जाता है। समाज इस कार्य को शिक्षा के माध्यम से करता है। समाज शिक्षा को प्रदान करने के लिये विभिन्न शैक्षिक साधनों- औपचारिक, अनौपचारिक तथा गैरऔपचारिक -को प्रयोग में लाता है। समाज औपचारिक साधनों के रूप में शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करता है। जिसके द्वारा समाज के

विचारों, भवों आदर्शों मूल्यों, क्रियाओं, मानदण्डों, परम्पराओं आदि को आने वाली सन्तति हो हस्तान्तरित एवं संरक्षित किया जाता है। इस सम्बन्ध में फ्रेकलिन (Franklin) का मत है-

'' समाज शिक्षा संस्थाओं को अपने सदस्यों में ऐसे ज्ञान, कौशलों, आदर्शों तथा आदतों का प्रसार करने एवं सुरक्षित रखने के लिये स्थापित करता है जो कि उसके स्वयं के स्थायित्व तथा निरन्तर विकास के लिये अनिवार्य है।''

5.2 उद्देश्य :-

इस इकाई का अध्ययन करने पर हमारे व्यवहार में निम्नलिखित परिवर्तन हो सकेंगे।

1. विद्यालय का अर्थ समझ सकेंगे।
2. विद्यालय को परिभाषित कर सकेंगे।
3. समाज का अर्थ समझ सकेंगे।
4. समाज को परिभाषित कर सकेंगे।
5. विद्यालय तथा समाज का सम्बन्ध समझ सकेंगे।
6. समाज में विद्यालय का स्थान, उसका महत्व व आवश्यकता से परिचित हो सकेंगे।
7 यह सामान्यीकरण कर सकेंगे कि विद्यालयः समाज का लघु रूप है।

5.3 विद्यालय का विकास:-

विद्यालय के विषय में दो धारणा हैं एक प्राचीन तथा दूसरी नवीन। प्रचीन धारण के अनुसार परम्परागत विद्यालयों का जन्म हुआ था। तथा नवीन धारणा के अनुसार प्रगतिशील विद्यालयों को स्थापित किया जाता है। निम्नलिखित पंक्तियों में हम इन दोनों प्रकार के विद्यालयों की अलग-अलग चर्चा कर रहे हैं।

परम्परागत विद्यालय (Traditional School)- परम्परागत विद्यालय में केवल औपचारिक शिक्षा दी जाती है। इन विद्यालयों का जन्म उसी समय से हुआ है जब से परिवार अपने कार्यों को करने में असमर्थ हो गया था। पहले धर्म तथा राज्य अलग-अलग संस्थायें नहीं थी। अतः उस युग में धार्मिक नेता ही शिक्षक हुआ करते थे। उन शिक्षकों ने परम्परागत शिक्षा को इतना मूल्यवान बना दिया था कि उसके द्वारा होने वाला लाभ केवल उच्च वर्ग के लोगों को ही प्राप्त था। कालान्तर में धर्म तथा राज्य अलग-अलग संस्थायें हो गई। शनैः शनैः राज्यों में जनतन्त्रवादी दृष्टिकोण विकसित होने लगा।

इधर तेरहवी शताब्दी में कागज तथा पन्द्रहवी शताब्दी में छापने के यन्त्रों का आविष्कार हो गया जिसके परिणामस्वरूप जन-साधारण को भी इन विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने के अवसर मिलने लगे। परन्तु ध्यान देने की बात हैं कि वर्तमान परिस्थितियों में ये सभी परम्परागत विद्यालय ऐसी दुकानें बन गये हैं जहां पर अज्ञान का क्रय तथा विक्रय होता है। शिक्षक ज्ञान को बेचते हैं तथा बालक खरीदते हैं। दूसरे शब्दों में ज्ञान के विक्रेता अर्थात् शिक्षक इन विद्यालयों में पके-पकाये ज्ञान को बालकों के मस्तिक में बलपूर्वक ठूसने का प्रयास करते हैं इस प्रकार इन समस्त विद्यालयों की दिनचर्या बड़ी कठोर होती है जिसके कारण शिक्षा की प्रक्रिया नीरस तथा निर्जीव हो गई है संक्षेप में पम्रपरागत विद्यालयों का सम्पूर्ण वातावरण कृत्रिम तथा मनोवैज्ञानिक होता हैं जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा के सच्चे उद्देश्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता। पेस्टालाजी ने इन स्कूलों कें सम्बन्ध में ठीक ही लिखा है- ''हमारे मनोवैज्ञानिक विद्यालय बालकों को उनके प्राकृतिक जीवन से दूर कर देते हैं, उन्हें आनाकर्षक बातों को याद करने के लिए भेड़ों के समान हांकते हैं तथा घंन्टों, दिनों, सप्ताहों, महीनों एवं वर्षों तक दर्दनाक जंजीरों से बांध देते हैं।

नवीन अथवा प्रगतिशील विद्यालय **(**Moderan of Progressive School**)**

पेस्टालॉजी की भॉति फोबिल, हरबार्ट, मान्टेसरी, नन तथा पार्कहर्स्ट एवं टैगौर आदि विश्वशास्त्रियों ने इस बात पर बल दिया कि शिक्षा बालक के लिए है न कि बालक शिक्षा के लिए। इन सभी शिक्षाशास्त्रियों ने परम्परागत विद्यालय की उस नीरस तथा निर्जीव शिक्षा का विरोध किया जिसके अनुसार बालक की व्यक्तिगत विभिन्नता की अवहेलना करके उसके मस्तिष्क में ज्ञान को बलपूर्वक टूंसने का प्रयास किया जाता था। उन्होंने नये-नये शैक्षिक प्रयोग किये जिससे नवीन अथवा प्रगतिशील विद्यालयों का जन्म हुआ। इस प्रकार प्रगतिशील विद्यालय का विकास परम्परागत विद्यालयों की विरोधी प्रवृत्ति के कारण हुआ।

5.3.1 विद्यालय का अर्थ:- (Meaning of School)

हिन्दी का विद्यालय शब्द दो 'विद्या' तथा 'आलय' से मिलकर बना है। विद्या शब्द का अर्थ है 'ज्ञान' और आलय शब्द का अर्थ है 'स्थान'। इस प्रकार विद्यालय शब्द का अर्थ हुआ 'विद्या देने का स्थान'। अपने शाब्दिक अर्थ में विद्यालय वह स्थान है जहां शिक्षा की प्रक्रिया चलती हैं, जहां बालकों के बांछित विकास के लिए शिक्षा प्रदान की जाती है। अंग्रेजी के 'स्कूल' (¼School½) शब्द की उत्पत्ति एक ग्रीक शब्द 'स्कोल' ¼Skhole½ से हुई है। इस शब्द का अर्थ है-'अवकाश' ¼Leisure½ यद्यपि स्कूल का यह अर्थ विचित्र लगात है परन्तु यह वास्तविकता है कि प्राचीन यूनान में इन अवकाश के स्थानों को ही स्कूल के नाम से सम्बोधित किया जाता था। ऐसा प्रतीत होता है कि उस युग में अवकाश काल को ही 'आत्म विकास; समझा जाता था जिस का अभ्यास

'अवकाश नामक निश्चित स्थान पर किया जाता था। अतः अवकाश शब्द का अर्थ है आत्म विकास' अथवा 'शिक्षा''। शनैः शनै ये अवकाशालय ऐसे स्थान बन गये यहां पर शिक्षक किसी निश्चित योजना के अनुसार एक निश्चित पाठ्यक्रम को निश्चित समय के भीतर समाप्त करने लगे। इस प्रकार आधुनिक युग में स्कूल का एक भौतिक अस्तित्व होता है। जिसकी चारदीवारी में बालाकों को शिक्षा प्रदान की जाती है। अवकाश ¼Leisure½ शब्द का स्पष्टीकरण करते हुए ए.एफ. लीच ने लिखा है-''वाद-विवाद या वार्ता के स्थान जहां एथेन्स के युवक अपने अवकाश के समय को खेल-कूद व्यायाम और युद्ध के प्रशिक्षण में विताते थे, धीरे-धीरे दर्शन तथा उच्च क़क्षाओं के स्कूलों में बदल गये एकेडेमी के सुन्दर उद्योगों में व्यतीत किये जाने वाले अवकाश के माध्यम से स्कूलों का विकास हुआ।''

5..3.2 विद्यालय की परिभाषा:- Definition of School

विद्यालय को स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषायें निम्न प्रकार से ैं-

(1) जॉन ड्यूवी- '' विद्यालय एक ऐसा विशिष्ट वातावरण है, जहां जीवन के कुछ गुणों और कुछ विशेष प्रकार की क्रियाओं तथा व्यवसायों की शिक्षा इस उद्देश्य से दी जाती है। कि बालक का विकास वाछित दिशा में हो।''

(2) टी.पी. नन0 ''विद्यालय को मुख्य रूप से इस प्रकार का स्थान नहीं समझा जाना चाहिए, जहां किसी निश्चित्त ज्ञान को सीखा जाता है, वरन् ऐसा स्थान जहां बालकों को क्रियाओं के उन निश्चित रूपें में प्रशिक्षित किया जाता है जो इस विशाल संसार में सबसे महान् और सबसे अधिक महत्व वाली है।''

(3) रोस -'' विद्यालय वे संस्थाएं हैं, जिनको सभ्य मनुष्य के द्वारा इस उद्देश्य से स्थापित किया जाता है कि समाज में सुव्यवस्थित और योग्य सदस्यता के लिए बालकों को तैयारी में सहायता मिले''

(4) के.जी. सैयदेन-'' एक राष्ट्र के विद्यालय जनता की आवश्यकताओं तथा समस्याओं पर आधारित होने चाहिए। विद्यालय का पाठ्यक्रम उनके जीवन का सार रूप होना चाहिए। ''इसकों सामुदायिक जीवन की महत्वपूर्ण विशेषताओं को अपने स्वाभाविक वातावरण में प्रतिबिम्बित करना चाहिए। ''

5.4 समाज का अर्थ:-

सामान्य रूप से व्यक्तियों के समूह को समाज कहते हैं। व्यक्तियों के इन समूह विशेषों का अध्ययन सभी सामाजिक विज्ञानों में किया जाता है। मानवशास्त्र में मनुष्यों के किसी भी समूह को समाज की

संज्ञा दी जाती है, यहां तक कि आदिम समुदाय को भी समाज कहा जाता है। भूगोल में क्षेत्र विशेष के समान सभ्यता वाले लोगों के समुदाय को समाज कहते हैं। जैसे-भारतीय समाज, यूरोपीय समाज। धर्मशास्त्र में धर्म विशेष के मानने वालों के समुदाय को समाज कहते हैं, जैसे- हिन्दू समाज, ईसाई समाज और मुसलमान समाज। राजनीतिशास्त्र में राज्य विशेष के लोगों के समूह को समाज कहते हैं, जैसे-भारतीय समाज, ब्रिटिश समाज और अमेंरीकी समाज। परन्तु समाजशास्त्र में समाज का अर्थ इन सबसे भिन्न रूप में लिया जाता है।

समाजशास्त्रीय अर्थ में व्यक्तियों के समूह को समाज नहीं कहते अपित समूह के व्यक्तियों में पाए जाने वाले सामाजिक सम्बन्ध क्या हैं जब दो या दो से अधिक व्यक्ति एक-दूसरे के प्रति सोचते होते हैं और एक-दूसरे के प्रति कुछ व्यवहार करते हैं तो हम कहते हैं कि उनके बीच समाजिक सम्बन्ध स्थापित हो गए है। यह आवश्यक नहीं कि ये सम्बन्ध मधुर और सहयोगात्मक ही हों, ये कुछ और संघर्षात्मक भी हो सकतें है समाजशास्त्र में इन दोनों प्रकार के सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार समाज का सर्वप्रथम मूल तत्व दो या दो से अधिक व्यक्तियों की पारस्परिक जागरूकता है। दो या दो से अधिक व्यक्तियों के एक-दूसरे के प्रति सचेत होने के लिए यह आवश्यक है कि उनके उद्देश्य अथवा विचारों में या तो समानता हो या भिन्नता । इस प्रकार समानता अथवा भिन्नता समाज का दूसरा मूल तत्व होता है। यह पारस्परिक जागरूकता दो ही रूपों में पारिणित हो सकती है- सहयोग में अथवा संघर्ष में। इसलिए सहयोग अथवा संघर्ष को समाज का तीसरा मूल तत्व माना जाता है। वास्तुस्थिति यह है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु एक-दूसरे के प्रति सोचते हैं। और वे तब तक इन सम्बन्धों से नहीं बंधते जब तक उनकी एक-दूसरे से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती। इसे समाजशास्त्री अन्योन्याश्रितता कहते हैं। यह समाज का चौथ मूल तत्व होता है। समाज के बारे में दो तथ्य और हैं, एक तो यह कि समाज अमूर्त होता है। और दूसरा यह कि यह केवल मुनष्य जाति में ही नहीं अपितु पशु-पक्षियों और कीड़ों-मकोडों में भी पाया जाता है। यह बात दूसरी है कि समाजशास्त्र में केवल मानव समाज का ही अध्ययन किया जाता है।

5.4.1 समाज की परिभाषाए:-

सभी समाजशास्त्री समाज की अमूर्त मानते हैं परन्तु उसकी परिभाषा उन्होंने भिन्न-भिन्न रूप में दी है कुछ मुख्य परिभाषाएं निम्न प्रकार से है।

टाकटॉट पार्सन्स के शब्दों में- "समाज को उन मानवीय सम्बन्धों की पूर्ण जटिलता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो साधन तथा साध्य के सम्बन्ध द्वारा क्रिया करने से उत्पन्न हुए हैं, वे चाहे वास्तविक हो अथवा प्रतीकात्मक।"

मैकाइवर और पेज ने समाज को थोड़ा अधिक स्पष्ट रूप में परिभाषित किया है।

"समाज रीतियों तथा कार्य प्रणालियों की अधिकार तथा पारस्परिक सहयोग की, अनेक समूहों और विभागों की, मानव व्यवहार के नियन्त्रणों और स्वतन्त्रताओं की एक व्यवस्था है। इस सतत् परिवर्तनशील व्यवस्था को हम समाज कहते हैं।"

इसी बात को उन्होंने आगे संक्षिप्ति रूप में इस प्रकार कहा है-

यह (समाज) सामाजिक सम्बन्धों का एक जाल है जो सदैव बदलता रहता है।

लापियर महोदय द्वारा- "समाज से तात्पर्य व्यक्तियों के समूह से नहीं अपितु समूह के व्यक्तियों के बीच होने वाली अन्तक्रियाओं की जटिल व्यवस्था से है।"

5.5 विद्यालय तथा समाज का सम्बन्ध (Relationship between School and Society)

विद्यालय के संगठन के विषय में डीवी के विचार उसके इस कथन से स्पष्ट होते हैं कि विद्यालय समुदाय का लघु रूप है। शिक्षा का उद्देश्य बालक का इस प्रकार से विकास करना है कि वह आगे चलकर समाज का उत्तरदायी सदस्य बन सके। बालक जो कुछ करता है, उसका सामाजिक महत्व होता है। दूसरे शब्दो में, प्रत्येक व्यक्ति को समाज में अपनी-अपनी भूमिकाओं के अनुरूप कार्य करता है। ऐसा करने से जहां प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, वहां सम्पूर्ण समाज की भी प्रगति होती है। वास्तव में, इसी सामाजिक उद्देश्य से ही प्रत्येक देश में राज्य की ओर से शिक्षा-व्यवस्था की जाती है बालक को शिक्षा के द्वारा सामाजिक विरासत प्रदान की जाती है। अस्तु, हम जैसा समाज बनाना चाहते हैं, वैसा ही प्रतिरूप विद्यालय में बनाया जाना चाहिये, जिससे कि विद्यालय के जीवन में बालक उस प्रकार के गुणों का विकास कर सके, जिनकी उसे आगे चलकर आवश्यकता पड़ती है। सामूहिक कामों में भाग लेने से बालक की बुद्धि का विकास होता है और अनुभव बढ़ता है यह अनुभव ही शिक्षा का आधार है। इसी के बालक में चरित्र के विभिन्न गुणों का विकास होता है और व्यक्तित्व का निर्माण होता है। जनतन्त्रीय समाज की स्थापना के लिये विद्यालय में जनतन्त्रीय सिद्धातों के आधार पर विद्यालय का संगठन किया जाना चाहिये। डीवी ने तत्कालीन विद्यालयों की संरचना के विषय में इस बात की आलोंचना की कि वे समय की मांग पर कोई ध्यान नहीं देते और केवल पुस्तकीय शिक्षा पर जोर देते है। विद्यालय में बालक को सामाजिक बनाने की कोई चेष्ठा नहीं की जाती। विद्यालय, समाज और परिवार में कोई स्पष्ट सम्बन्ध नहीं दिखलाई पड़ता है। इस परिस्थिति की आलोचना करते हुये डीवी ने सन् 1896 में शिकागो में एक प्रयोगात्मक विद्यालय की नींव डाली।

प्रयोगात्मक विद्यालय, जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, किसी भी क्षेत्र में प्राचीन रूढ़ियों और परम्पराओं को न मानते हुये प्रयोग के परिणामों के आधार पर ही शिक्षा-योजना चलाती थी। इस विद्यालय में विभिन्न उद्योग के माध्यम से शिक्षा दी जाती थी। यहां पर बढ़ई का काम, लुहार का

काम, खाना बनाना, सीना-पिरोना व अन्यच नाना प्रकार की वस्तुओं का निर्माण, शारीरिक कार्य, खेलना- कूदना आदि के आधार पर अनेक विषय पढ़ाये जाते थे।

समाज का लधु रूप मानकर डीवी ने विद्यालय में उन सभी क्रियाओं को लघु रूप में किये जाने की सिफारिश की है, जो बालक को बड़े होकर विद्यालय से बाहर करनी पड़ती है। विद्यालय में इस प्रकार की क्रियाओं को करने से बालक के मस्तिष्क और चरित्र का विकास होता है और वह आगे चलकर इन क्रियाओं को कुशलतापूर्वक कर सकता है। ये वे क्रियाएं हैं, जो व्यक्ति और समाज दोनों के लिय उपयोगी है, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि विद्यालय भावी जीवन की तैयारी का उद्देश्य लेकर चलता है। डीवी के अनुसार विद्यालय तो स्वयं जीवन है, वह एक सार्वजनिक संस्था है और सामाजिक जीवन का रूप उपस्थिति करता है, जिसमें वे सब क्रियाएं दिखलाई पड़ती है, जो बालक को सम्पति के रूप में मिली हैं और जिससे उसे अपना अंश जोड़ना है किन्तु अनेक क्रियाएं इतनी जटिल और पेचीदा होती है कि वे ज्यों की त्यों विद्यालय में नहीं की जा सकती।, इसलिये उन्हे सरल और सन्तुलित रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिये। समाज के एक अंग के रूप में घर का विद्यालय से घनिष्ठ सम्बन्ध है। अस्तु, इन दोनों में सामंजस्य आवश्यक हैं विद्यालय में घर के खेलों और कार्यक्रमों को बनाये रखना चाहिये, जिससे बालक को घर से विद्यालय जाने में कोई असुविधा न हो। विद्यालय का काम परिवार और समाज में सम्बन्ध स्थापित करना है। यदि बालक को परिवार और विद्यालय में कोई अन्तर नहीं मालूम होता तो उसे विद्यालय में अुनकूल करने में कठिनाई नहीं होगी।

समाज में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों को भिन्न प्रकार के व्यवसाय करने होते हैं। अब यदि विद्यालय समाज का लघु रूप है तो उससे भी भिन्न-भिन्न व्यवस्था करने के लिये दिये जाने चाहिये, इससे उनका नैतिक विकास होगा और अन्वेषण शक्ति तथा रचनात्मक प्रवृत्ति बढ़ेगी, इससे उनमें ऐसी चेतना और स्फूर्ति उत्पन्न होगी, जिससे बालक आसानी से सामाजिक कार्य से अनुकूल कर सकेगा।

विद्यालय समाज का लघु रूप है। इसका एक अर्थ यह भी है कि वह समाज की बदलती हुई आवश्यकताओं को प्रतिबिम्बत करता है। अस्तु उसे समाज की आवश्यकताओं के परिवर्तन के साथ-साथ बदलते रहना चाहिये। आधुनिक काल में समाज के जनतन्त्रीय मूल्यों को सबसे ऊंचा स्थान दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, स्वतंत्रता, सामानता और भ्रातृत्व आज समाज की मांगें हैं ऐसी स्थिति में विद्यालय में ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिये, जिनसे विद्यार्थियों में जनतन्त्रीय गुणों का विकास हो। विद्यालय में विभिन्न संस्थाएं स्वयं विद्यार्थियों के द्वारा चलायी जानी चाहिये और इनके संविधान जन्तन्त्रात्मक होने चाहिये । इससे इन संस्थाओं में भाग लेकर विद्यार्थी जनतन्त्रीय जीवन का प्रशिक्षण प्राप्त कर सकेंगे। विद्यालयों के द्वारा ही समाज से योग्य शासकों और नेताओं का निर्माण होता है। आज के विद्यार्थी ही कल के समाज में विभिन्न क्षेत्रों में नेतृत्व करेंगे। इस बात को ध्यान में रखते हुये विद्यालय में अनुशासनन, शिक्षा पद्धति, पाठ्यक्रम

आदि शिक्षा के विभिन्न अंगों में ऐसे सिद्धान्त अपनाये जाने चाहियें जिनसे बालाकों के जनतन्त्रीय नेतृत्व का विकास हो।

एक लघु समुदाय के रूप में विद्यालय के डीवी द्वारा खीचें गये चित्र को अनेक आधुनिक विद्यालयों में सजीव रूप देने का प्रयास किया गया है उसके विचारों से स्कूल में स्वशासन और स्वयवस्था के सिद्धान्त माने जाने लगे। आधुनिक काल में एक्टीविटी स्कूल और योजना-प्रणाली के रूप में विद्यालय-संगठन शिक्षा-पद्धति पर डीवी का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

समाज शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना करके उनसे इस बात की अपेक्षा करता है कि वे बालकों में उन गुणों को विकसित करें, जिन्हें प्राप्त कर वे समाज की विभन्न क्रियाओं में कुशलतापूर्वक भाग ले सकें। समाज अपनी ओर से प्रत्येक व्यक्ति के विकास एवं उसके हितों की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहता है और उससे अपेक्षा करता है। कि वे सामाजिक जीवन को स्थायित्व प्रदान करें। इससे स्पष्ट है कि विद्यालय का सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व यह है कि बालक तथा बालिकाओं को समाज के आदर्शो, विचारधाराओं एवं परम्पराओं आदि से अवगत कराये तथा उनमें समाज को समृद्ध बनाने के लिये उत्कण्ठा उत्पन्न करें।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि समाज शिक्षा की समुचित व्यवस्था किये बिना जीवित नहीं रह सकता और न ही शैक्षिक संस्थाऐं समाज की मांगों को पूर्ण किये बिना स्थिर रह सकती है। जिस समाज में विद्यालय स्थित होता है, उसका विद्यालय पर सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृकतिक प्रभाव अवश्य पड़ता है। जो नागरिक विद्यालय का व्यय-भार उठाते हैं वे उसकी शिक्षा की मात्रा तथा प्रकार पर नियन्त्रण रखते हैं। विद्यालय अपना आदर्श प्रस्तुत करके तथा समाज की अप्रत्यक्ष रूप से आलोचना करके उसके दूषित वातावरण को शुद्ध बनाने का प्रयत्न करता है। साथ ही वह ऐसे नागरिकों को तैयार करता है जो भावी समाज का निर्माण करते हैं अतः इन दोनों में पारस्परिक निर्भरता पायी जाती है। विद्यालय तथा समाज के सम्बन्धों के विषय में सी.एम. कैम्पबैल (C.M. Campbell) ने निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया है-

(1) विद्यालय कार्यक्रम तथा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सास्ंकृतिक जीवन में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसलिए विद्यालय का पाठ्यक्रम समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निर्धारित किया जाना चाहिये।

(2) विद्यालय को अपने कार्यक्रम को पूर्ण करने के लिए समाज के समस्त साधनों का उपयोग करना आवश्यक है। अतः समाज का उत्तरदायित्व है कि वह अपने समस्त साधनों द्वारा विद्यालय के कार्य में सहायता प्रदान करे।

(3) विद्यालय सामाजिक विकास की योजनाओं में सक्रिय भाग लेकर तथा समाज को योग्य नेतृत्व प्रदान करके समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करता है।

विद्यालय तथा समाज के सम्बन्धों को देखते से स्पष्ट है कि इनका एक दूसरे से सहयोग के बिना कार्य नहीं चल सकता। विद्यालयों का कर्त्तव्य है कि वे बालकों को जीवन के विभिन्न पक्षों से अवगत कराये जिससे वे परिवर्तनशील वातावरण के विभिन्न तत्वों को समझ सकें और अपनी संस्कृति की अच्छी बातों को ग्रहण करने सामाजिक उन्नति में सहयोग दें।

5.5.1 समाज में विद्यालय का स्थान - उसका महत्व व आवश्यकता
(Place of School in Society - Its Importance and Necessity)

समाज में विद्यालय के स्थान, महत्व और आवश्यकताओं पर प्रकाश डालते हुए। एस. बालकृष्ण जोशी ने लिखा है-''किसी भी राष्ट्र की प्रगति का निर्माण विधान-सभाओं, न्यायालयों और फैक्ट्रियों में नहीं, वरन् विद्यालयों में होता है''

विद्यालय को यह महत्वपूर्ण स्थान कुछ कारणों से दिया जाता है। हम उनका उल्लेख नीचे कर रहे है-

(1) जीवन की जटिलता: (Complexity of life) आज का जीवन प्राचीन काल के जीवन के समान सरल और सुखमय नहीं है। उस समय मनुष्य के पास अपनी सब आवश्यकताओं को स्वंय पूर्ण करने और अपने बच्चों की शिक्षा की स्वयं देखभाल करने के लिए समय था। आज जनसंख्या की वृद्धि, आवश्यकताओं की अधिकता और वस्तुओं के बढ़ते हुए मूल्य के कारण जीवन बहुत कठिन हो गया है। मनुष्य को अपने कार्यों से इतनी फुरसत नहीं मिलती है कि वह अपने बच्चों की शिक्षा की देखभाल कर सके। इसलिए उसने यह कार्य विद्यालय को सौंप दिया है।

(2) विशाल सांस्कृतिक विरासत: (Extensive Cultural Heritage) आज की सांस्कृतिक विरासत बहुत विशाल हो गई है। इसमें अनेक प्रकार के ज्ञान, कुशलताओं और कार्य करने की विधियों का समावेश हो गया है। ऐसी विरासत की शिक्षा देने में व्यक्ति अपने को समर्थ पाते है। अतः उन्होंने यह कार्य विद्यालय को सौंप दिया।

(3) विशिष्ट वातावरण की अवस्था: (Provision of Special Environment) विद्यालय छात्रों को एक विशिष्ट वातावरण प्रदान करता है। यह वातावरण शुद्ध सरल और सुव्यवस्थित होता है। इसके छात्रों की प्रगति पर स्वस्थ और शिक्षाप्रद प्रभाव पड़ता है। ऐसा वातावरण शिक्षा का और कोई साधन नहीं प्रदान कर सकता है।

(4) घर व विश्व को जोड़ने वाली कड़ी: (Connecting Link Between the home and the world) बालक की शिक्षा में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। घर में रहकर वह अनुशासन, सेवा, सहानुभूति,

निःस्वार्थता आदि गुणों को सीखना है। पर घर की चाहरदीवारी में बंधे रहने के कारण उनके ये गुण अपने परिवार के व्यक्तियों तक ही सीमित रहते हैं। फलतः उसका दृष्टिकोण संकुचित होता है। विद्यालय में विभिन्न वर्गों और सम्प्रदायों के बालकों के सम्पूर्क में आकर उसका दृष्टिकोण विस्तृत होता है। साथ ही बाह्य समाज से उसका सम्पर्क स्थापित हो जाता है। इस प्रकार ''विद्यालय'' घर और बाह्य जीवन को कड़ी है।

रेमॉण्ट (Raymont)का कथन है- ''विद्यालय बाह्य जीवन के बीच की अर्द्धपारिवारिक कड़ी है जो बालक की उस समय प्रतीक्षा करता है। के बीच की अर्द्धपारिवारिक कड़ी है जो बालक की उस समय प्रतीक्षा करता है, जब वह अपने माता-पिता की छत्रछाया को छोड़ता है।''

(5) व्यक्तित्व का सामंजस्यपूर्ण विकास: (Harmonious Development of Personality) घर, समाज, धर्म आदि शिक्षा के अच्छे साधन है। पर इनका न तो कोई निश्चित उद्देश्य होता है और न पूर्व नियोजित कार्यक्रम। फलतः कभी-कभी बालक के व्यक्तित्व पर इनका बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत, विद्यालय का एक निश्चत उद्देश्य और पूर्व-नियोजित कार्यक्रम होता है। परिणामस्वरूप, इसका बालक पर व्यवस्थित रूप में प्रभाव पड़ता है। और उसके व्यक्तित्व का सामंजस्यपूर्ण विकास होता है।

(6) बहुमुखी सांस्कृतिक चेतना का विकास: Development of Cultural Pluralism. विद्यालय में विभिन्न परिवारों, समुदायों और संस्कृतियों से छात्र आते है।। परस्पर सम्पर्क के कारण उनमें एक - दूसरे के सांस्कृतिक गुण आ जाते हैं अतः विद्यालयों को छात्रों में बहुमुखी संस्कृति का विकास करने का महत्वपूर्ण साधन समझा जाता है।

(7) आदर्शों व विचारधाराओं का प्रसार: Propagation of Ideais and Ideoiogies राज्य के आदर्शों और विचारधाराओं को फैलाने के लिए विद्यालय को अति महत्वपूर्ण साधन माना गया है। इसलिए, सभी प्रकार के राज्यों-लोकतन्त्रीय, फासिस्टवादी, साम्यवादी आदि में विद्यालय का स्थान गौरवपूर्ण है।

(8) समाज की निरन्तरता व विकास: (Perpetuation and Development of Society) श्विद्यालय' एक प्रमुख सामाजिक संस्था है । शिक्षा की प्रक्रिया सामाजिक होने के कारण विद्यालय सामुदायिक जीवन का वह स्वरूप है, जिसमें समाज की निरन्तरता और विकास के लिए सभी प्रभावपूर्ण साधन केन्द्रित होते हैं। विद्यालय के इसी महत्व के कारण टी.पी. नन (T.P. Nunn) ने लिखा है-'' विद्यालय को समस्त संसार का नहीं, वरन् समस्त मानव-समाज का आदर्श लघु रूप होना चाहिए।''

(9) विद्यालय: घर के शिक्षा का उत्तम स्थान (T.P. Nunn)विद्यालय' घर की अपेक्षा शिक्षा का उत्तम स्थान है। कारण यह है कि विद्यालय में विभिन्न आदतों, रूचियों और दृष्टिकोणों के बालक आते हैं।

फलतः परस्पर सम्पर्क के कारण बालक उन बातों को सीखते हैं, जिन्हें वे घर की चहारदीवारी के अन्दर नहीं सीख सकते हैं यदि बालकों को संसार के ढंगों से परिचित कराना है, यदि उनको सामाजिक शिष्टाचार और सहानुभूति सिखानी है, यदि उनको निष्पक्षता और सहयोग के महत्व को बताना है, तो उनको घर से बाहर विद्यालय में भेजना अनिवार्य है।

(10) शिक्षित नागरिकों का निर्माण: (Creation of Educated Citizens) विद्यालय ही एक मात्र वह साधन है, जिसके द्वारा शिक्षित नागरिकों का निर्माण किया जा सकता है। यदि एक देश के समस्त बालकों को एक निश्चित आयु तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा दी जाती है, तो वे स्थायी रूप से साक्षर हो जाते हैं। साक्षर होने के साथ-साथ उनमें धैर्य, सहयोग उत्तरदायित्व आदि गुणों का विकास होता है। इस प्रकार, बड़े होकर बालक राज्य के उपयोगी नागरिक सिद्ध होते हैं।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर विद्यालय के स्थान, महत्व और आवश्यकता को सरलतापूर्वक समझा जा सकता हैं वास्तव में, व्यक्ति और समाज-दोनों की प्रगति के लिए विद्यालय अति आवश्यक है। इसलिए किसी भी सामाजिक ढांचे में इनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है।

टी.पी.नन ने सत्य लिखा है -

''एक राष्ट्र के विद्यालय उसके जीवन के अंग हैं, जिनका विशेष कार्य है- उसकी आध्यात्मिक शक्ति को दुढ बनाना उसकी ऐतिहासिक निरन्तरता को बनाये रखना उसकी भूतकाल की सफलताओं को सुरक्षित रखना और उसके भविष्य की गारण्टी करना।''

श्विद्यालय समुदाय के जीवन का एक प्रतिबिम्ब है और होना चाहिएं। इसलिये भारत के सार्वजनिक विद्यालयों केा भारतीय जीवन-शैली के अनुकूल बनाया जाना चाहिए।''

अपनी उन्नति जनिय:-

प्रश्न 1 परम्परागत विद्यालय में किस प्रकार की शिक्षा दी जाती है?

प्रश्न 2 किस शताब्दी में छापने के यन्त्रों का आविष्कार हो गया था?

प्रश्न 3 समाजशास्त्र में किस समाज का अध्ययन किया जाता है।

प्रश्न 4 सामान्य रूप से किसके के समूह को समाज कहते हैं।

5.6 सारांश

अब तक विद्यालय को मुख्यतः ऐसा स्थान समझा जाता था, जहां पाठ्यक्रम के कुछ विषयों में निर्देश दिया जाता हैं इस प्रकार विद्यालय का कार्य-परम्परागत विषयों का परम्परागत ढंग से शिक्षण

करने तक सीमित था। पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण सूचनाएं प्रदान करके के दृष्टिकोण से किया जाता था और शिक्षण के अन्तर्गत बालकों को केवल सूचनाएं प्रदान की जाती थी। निरीक्षण एवं परीक्षाएं सामान्यतः आज भी निर्देश के इस सूचनात्मक पक्ष पर बल देती है। यह सत्य है कि सूचनाएं शिक्षा का आवश्यक अंग हैं। परन्तु इसके साथ यह भी स्पष्ट है कि जिस प्रकार ज्ञान सूचना से अधिक है, उसी प्रकार शिक्षा भी ज्ञान से अधिक है। ज्ञान ही सब कुछ नही है और न शिक्षा का साध्य है। आधुनिक युग में शिक्षणशास्त्रियों द्वारा इस तथ्य की अनुभूति ने उसको विद्यालय की इस परम्परागत धारणा को समाप्त करने के लिए बाध्य किया और उन्होंने विद्यालय को नवीन दृष्टिकोण के अनुसार देखना प्रारभ्म किया। नवीन दृष्टिकोण के अनुसार विद्यालय को समाज का एक लघु रूप माना गया है। पाश्चात्य देशों में यह नवीन दृष्टिकोण प्रतिदिन बल प्राप्त करता जा रहा है और परम्परागत विद्यालयों को इसी दृष्टिकोण के अनुसार परिवर्तित करने का प्रयास किया जा रहा है।

मध्यमिक शिक्षा -आयोग का मत है, '' इसमें कोई संदेह नहीं है कि विद्यालय एक समाज होगा परन्तु वह वृहत् समाज के अन्दर एक छोटा समाज होगा और उसकी सफलता एवं जीवन शक्ति उसके तथा वृहत् समाज के बीच होने वाले निरन्तर स्वस्थ प्रभावों पर निर्भर होगी। हम जिस बात को देखना चाहते हैं, वह यह है कि पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन में जो समस्याएं उत्पन्न होती है और वहां जो अनुभव प्राप्त होते हैं, उनको विद्यालय में लाया जाय और शिक्षा को उन पर आधारित किया जाय, जिससे विद्यालय का समाज के वास्तविक जीवन से घनिष्ठ सबन्ध स्थापित हो सके। दूसरी और विद्यालय में जो नया ज्ञान, कौशल, मनोवृत्तियां, मूल्य बालक प्राप्त करें, उन्हें समाज की समस्याओं का समाधान करने एवं उसके स्तर को ऊंचा करने के लिए प्रयोग में लाया जाय। ''

इस प्रकार माध्यमिक शिक्षा-आयोग के विद्यालय तथा समाज की पारस्परिक उपयोगिता की वृद्धि में आवश्यकता का ही अनुभव नही किया, वरन् इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिय सुझाव दिया कि विद्यालय को समाज का लघु रूप बनाया जाय। समाज की प्रवृत्तियों, क्रियाकलापों एवं विभिन्न अवस्थाओं को विद्यालय में प्रतिविम्बित किया जाना चाहिए। जिससे विद्यार्थी अपने शाला जीवन में ही भावी नागरिक जीवन के प्रत्यक्ष व व्यावहारिक अनुभव प्राप्त कर सके। विद्यालय-जीवन समाजिक जीवन का एक अंग है। अतः विद्यालय में बालक तथा बालिकाओं को ऐसे अवसर प्रदान किये जाने चाहिये जिससे लाभ उठाकर वे विद्यालय छोड़ने के पश्चात् सामाजिक क्रियाओं में भाग लेने की क्षमता प्राप्त कर सके। इसके लिए विद्यालय में सामाजिक जीवन की क्रियाओं और अनुभवों को सरल, शुद्ध एवं सन्तुलित रूप में बालकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाए।

विद्यालय को समाज का लघु रूप बनाने के लिए विद्यालय में केवल उन अनुभवों को ही स्थान दिया जाय तो सामाजिक जीवन के उज्जवल स्वरूप की व्याख्या करें तथा उन क्रियाओं को स्थान मिले जिनका जीवन में स्थायी महत्व है। इस प्रकार विद्यालय में समाज का पवित्र रूप प्रस्तुत किया जाय और बाह्य सामाजिक जीवन से केवल उन बातों को ही लिया जाय जो शुद्ध एवं निर्दोष हैं।

5.7 शब्दावली:-

प्रयोगात्मक विद्यालय :- जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, किसी भी क्षेत्र में प्राचीन रूढ़ियों और परम्पराओं को न मानते हुये प्रयोग के परिणामों के आधार पर ही शिक्षा-योजना चलाती थी। इस विद्यालय में विभिन्न उद्योग के माध्यम से शिक्षा दी जाती थी। यहां पर बढ़ई का काम, लुहार का काम, खाना बनाना, सीना-पिरोना व अन्यच नाना प्रकार की वस्तुओं का निर्माण, शारीरिक कार्य, खेलना- कूदना आदि के आधार पर अनेक विषय पढ़ाये जाते थे।

जीवन की जटिलता (Complexity of life):- आज का जीवन प्राचीन काल के जीवन के समान सरल और सुखमय नहीं है। उस समय मनुष्य के पास अपनी सब आवश्यकताओं को स्वंय पूर्ण करने और अपने बच्चों की शिक्षा की स्वयं देखभाल करने के लिए समय था। आज जनसंख्या की वृद्धि, आवश्यकताओं की अधिकता और वस्तुओं के बढ़ते हुए मूल्य के कारण जीवन बहुत कठिन हो गया है।

5.8 अभ्यास प्रश्नो के उत्तर

उत्तर 1 परम्परागत विद्यालय में केवल औपचारिक शिक्षा दी जाती है।

उत्तर 2 पन्द्रहवी शताब्दी में छापने के यन्त्रों का आविष्कार हो गया था।

उत्तर 3 समाजशास्त्र में केवल मानव समाज का ही अध्ययन किया जाता है।

उत्तर 4 सामान्य रूप से व्यक्तियों के समूह को समाज कहते हैं।

5.9 संदर्भ ग्रंथ:-

1 सक्सेना,एन.आर व चतुर्वेदी स्वरूप शिखा (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक , मेंरठ, आर.लाल बुक डिपो।

2. पाठक एवं त्यागी, शिक्षा के सिद्धांत, आगरा, विनोद पुस्तक मंन्दिर।

3. लाल, रमन बिहारी. (2007) शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, मेंरठ ,रस्तोगी पब्लिकेशन ।

4. पचौरी (डॉ) गिरीश (2007) शिक्षा और समाज मेंरठ, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस।

5. पाण्डेय (डॉ) रामशकल (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आगरा,अग्रवाल पब्लिशिंग हाउस।

6. सक्सेना एन.आर.स्वरूप व पाण्डेय (डॉ) के.पी., (1993-94) शिक्षा सिद्धांत, मेंरठ, आर.लाल. बुक डिपो।

5.10 निबन्धात्मक प्रश्न :-

प्र.1 विद्यालयः समाज का लघु रूप हैं। इस कथन की व्याख्या अपने शब्दों में लिखे।

प्र.2 विद्यालय का अर्थ एवं परिभाषा को लिखों।

प्र.3 समाज में विद्यालय की आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट कीजिए।

प्र.4. विद्यालय एवं समाज में क्या सम्बन्ध हैं। स्पष्ट कीजिए।

प्र. 5. आप एक अच्छा विद्यालय किसे कहेगें। और क्यों, स्पष्ट कीजिए।

इकाई-6 शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन(Education and Social Change)

6.1 प्रस्तावना Introduction
6.2 उद्देश्य Objectives
भाग एक-
6.3 शिक्षा और समाज Education and Society
6.3.1 शिक्षा का अर्थ Meaning of Education
6.3.2 सामाजिक परिवर्तन का अर्थ Meaning of Social Change
6.33 सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारक– Major Factor affecting the Process of Social Change
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress) भाग दो-
6.4 सामाजिक परिवर्तन के प्रमुख कारको की विशेषताये - Characteristics of Social change
6.4.1 सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएं Characteristics of Social change
अपनी उन्नति जानिए Check your Progress
भाग तीन-
6.5 शिक्षा के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन :-Social Change by Education
अपनी उन्नति जानिए Check your Progress
6.6 सारांश Summary
6.7 शब्दावली Glossary
6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर Answer of Practice Question
6.9 संदर्भ Reference
6.10 उपयोगी/सहायक पुस्तके Useful Books
611 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न Long answer Types Question

6.1 प्रस्तावना Introduction

मानव स्वभाव से ही एक गतिशील प्राणि है। अत: मानव समाज कभी भी स्थिर नहीं रह्ता। उसमें सदा परिवर्तन हुआ करता है। डासन और गेटिस ने ठीक ही लिखा है " क्रिया और परिवर्तन सदैव उपस्थित सार्वभौम तथ्य है। एक से जीवन से मानव उब जाता है। घनिष्ट से घनिष्ट प्रेममय सम्बन्धो में भी कुछ न कुछ परिवर्तन की इच्छा मनव स्वभाव हे। प्रसिद्ध मनोविश्ळेशणवादी फ्राइड के अनुसार मनुष्य में परस्पर विरोधी भाव मौजूद रह्ते है। जहॉ प्रेम है वहॉ घृणा भी है। किसी भी देश का इतिहास कभी एक सा नही रहा , राज्य बनते विगड्ते रहते है। नई विचार धाराऍ अपनायी जाती है पुरानी रुढिया और परम्पराए टूटती रहती है। परिवार, विवाह, जाति, सभी संथाअऑ में सामाजिक, आर्थिक,राजनैतिक, धर्म और राज्य,शिक्षा के आर्दशो, स्त्री पुरुष के समबन्धो में जीवन के सभी पक्षो में यह परिवर्तन देखा जा सकता है। परिवर्तन की यह प्रक्रिया सार्वभोम है।

6.2 उद्देश्य Objective

I सामाजिक पारिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारको को जान सकेगे।

II. सामाजिक व्यावस्था के अर्थ तथा संरचना को जान सकेगे।

III. सामाजिक परिवर्तन का ज्ञान करा सकेगे।

IV. भारतीय संस्कृति की विशेषताओ का ज्ञान प्रदान करा सकेगे।

V. शिक्षा व संस्कृति का एक दूसरे पर प्रभाव जान सकेगे।

VI. आधुनिकीकरण के बारे में जान सकेगे।

भाग – एक

6.3 शिक्षा और समाज Education and Society

समाज ,समाजशास्त्र तथा शैक्षिक समाजशास्त्र का शिक्षा से गहरा सम्बन्ध है। इसलिय प्रत्येक समाज अपनी आकाक्षाओ, आवश्यकताओ तथा आदर्शो को साम्ने रखते हुय शिक्षा की प्रक्रिया को इस प्रकार से नियोजित करता है कि वह अपने आदर्शो को प्राप्त करले तथा उसके सभी व्यक्ति उपयोगी सदस्य बन सके। यह महान कार्य उसी समय पूरा हो सकता है जब समाज के सभी व्यक्ति उसके आदर्शो के अनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन कर्ते हुय उसके साथ अनुकूलन कर सके। शिक्षा इस सम्बन्ध में सहायता कर सक्रती है। यही कारण है कि समय तथा परिस्थिति के अनुसार समाज यह निश्चित करता हैकि व्यक्ति को किस प्रकार कि शिक्षा दी जाय जिससे वह उपयोगी और श्रेष्ट सदस्य

बनकर समाज को सबल, सुदृढ तथा शक्तिशाली बना सके। स्पष्ट है कि समाज शिक्षा का महत्वपूर्ण साधन है।

6.3.1 शिक्षा का अर्थ Meaning of Education

शिक्षा के सम्बन्ध में ऐसी धारणा है कि लैटिन भाषा के दो शब्दो Educatum एवँ Educare से शिक्षा शब्द की उत्पत्ति हुय है। Educatum का आशय है 'Act of Teaching or training' और Educare का अर्थ है ' To educate, To bring up' or To raise इस तरह अंग्रेजी शब्द Education का शाब्दिक अर्थ है-प्रशिक्षण, सम्वर्धन एवँ पथ प्रदर्शन करने वाली प्रक्रिया। दुसरी तरह से एजुकेटम में दो शब्द है ए और जुको। ए का अर्थ है 'अन्दर से' और जुको का अर्थ है 'बाहर लाना। इस तरह इसका अर्थ हुआ अन्दर से बाहर लाना। लेकिन शिक्षा शाष्त्र शब्द को ज्यादा मान्याता मिली है। जिसका अर्थ है पालन पोषण करना,सम्वर्धन करना एवँ पथ प्रदर्शन करना। भारतीय विद्धानो का मानना है की शिक्षा शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के शिक्ष धातु से हुई है। जिसका आशय होता है सीखना और सीखाना। शिक्षक शब्द का उपयोग अब अध्ययन के लिय उपयोग होने लगा। शिक्षा शब्द में भी दोनों का भाव सम्मलित है। निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है की शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालको की जन्मजात शैलियो का विकास किया जा सकता है।

6.3.2 सामाजिक परिवर्तन का अर्थ Meaning of Social Change

मानव का जीवन एवं उसकी परिस्थितियां सदैव एक सी नहीं रहती है। अपितु इसके विचार, आर्दश मूल्य एवं भावना में किसी प्रकार का परिवर्तन अवश्य होता है। जब मानव अपने को परिवर्तित करता है तो वह समाज की एक ईकाई होने के कारण समाज में भी परिवर्तन कर देता है। यद्यपि किसी समाज में परिवर्तन तीव्रता से होता है तो किसी में मंद गति से होता है।

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। आज वैज्ञानिक अवष्किारों , नई-नई मशीनों के उपयोग यातायात और दूर संचार के साधनों के कारण प्राचीन एवं मध्यकालीन समाज की अपेक्षा आधुनिक समाज में प्रतिदिन क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। इन परिवर्तनों को ही सामाजिक परिवर्तन की संज्ञा दी जा रही है। आजकल सम्पूर्ण विश्व में सामाजिक परिवर्तन तीव्र गति से हो रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा नगरीय क्षेत्रों में अविकसित समाज की अपेक्षा विकसित समाज में दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा उत्तरी गोलार्द्ध में सामाजिक परिवर्तन अधिक विविधता एवं तीव्रता से हो रहे हैं।

यद्यपि समाज में होने वाला प्रत्येक प्रकार का परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन की श्रेणी में नहीं आता है। आधुनिक समाजशास्त्रियों की भाषा में समाज शब्द के स्थान पर सामाजिक व्यवस्था Social System पद का प्रयोग अधिक प्रचलित है। तथा सामाजिक व्यवस्था में तीन भाग या अंग गिनाए गए हैं।

6.3.3 सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारक –

भारतीय समाज को प्रभावित करने बाले दो कारक है।

I वाहय कारक - वाहय कारक पर मनुष्य का नियणत्रण पूरी तरह से नही हो सका है केवल आंशिक संसोधन इसमें सम्भव हो पाता है। जैसे प्राकृतिक अथवा जैविक कारक।

II आंतरिक कारक - आंतरिक कारक यधपि मानव नियणत्रण में है फिर भी उनका वाध्यता मूलक प्रभाव सामाजिक समबन्धो पर पड्ता है जैसे औधोगिकीय एवं सांस्कृतिक कारक।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र.1 समाज में परिवर्तन के दो प्रमुख कारक बताइये।

प्र.2 सामाजिक परिवर्तन के दो प्रमुख कारण बताइये।

प्र.3 एन.एस.एस. राष्ट्रीय समाज सेवा कार्यक्रम किससे सम्बंधित नहीं है।

(अ) प्रौढ शिक्षा कार्यक्रम (ब) स्वास्थ्य कार्यक्रम (स) बाढ़
(द) खेल

प्र.4 सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः या वसुधैव कुटुम्बकम की विशेषता विश्व में किस देश की है।

(अ) अमरिका (ब) रूस (स) श्रीलंका
(द) भारत

प्र.5 धर्म निरपेक्ष शब्द किस वर्ष में जोड़ा गया है।

भाग दो-

6.4 सामाजिक परिवर्तन के प्रमुख कारको की विशेषताये –

1 भौतिक या प्राकत्रिक कारक – जैसे जैसे सभ्यता का विकास होता जा रहा है वैसे-वैसे भौतिक तथा प्राकृतिक कारको पर मानव नियणत्रण की आशा बढ्ती जा रही है। आज मनुष्य ने नदियो पर पुलो का निर्माण पहाडो के बीच रस्ता बनाना पथरीली तथा रेगिस्तानी जगहो को कृषि योग्य बनाना जंगलो को काटकर उसे कृषि योग्य बनाना आदि। फिर भी प्राकृतिक कारको का वाध्यातामूलक प्रभाव मानव जीवन और उसके अन्त:समंधो पर पडता चला आ रहा है। जैसे

जलवायू मौसम परिवर्तन, बाढ भूकम्प आदि जिसका मानव सम्बंधो पर प्रभाव पडता हे, ऋतुओ के बदलने का प्रभाव हमारे सामाजिक सम्बंधो पर पडता है।

२. **जैविक कारण** (जन्सख्या में परिवर्तन) – भारतीय समाज को प्रभावित करने का श्रेय जनसख्या में परिवर्तन भी है। सामाजिक सम्बंध मनुष्यो पर आश्रित है अत: उनकी सख्या में वृद्धि अथवा कमी के कारणो को सामाजिक परिवर्तन से सम्बोधित करते है। यदि किसी समाज की जन्सख्या एका एका बढ जाती है। तो उसके परिणामस्वरुप विभिन्न सामाजिक समस्यायो जैसे भोजन रहन-सहन दवदारु मकान कपडे की सम्स्यायो के द्वारा सामाजिक सम्बन्धो पर गहरा प्रभाव पडता है। जन्सख्या की अधिकता के कारण यहॉ लोगो उचित मात्रा में पोष्टिक आहार नही मिल रहा है। जिसके कारण लोगो की कार्यक्षमता कम हो रही है। प्रति व्यक्ति आय नही बढ रही है अत: समाज पिछडा हुआ राष्ट्र कहलाता है।

३. **प्रौधिगिकीय कारक** –मशीनो के प्रयोग के कारण आज कृषि के क्षेत्र में क्रांतीकारी परिवर्तन हुए है बिजली द्वारा सिचाई ने प्रक्रिति पर निर्भरता को कम किया है। यातायात के साधनो ने जहॉ दूरी को कम किया है वही पर जाति भेद-भाव को कम किया है। मोवाईल के बिना व्यक्ति का जीवन अधूरा सा रहता है। आज प्रौधोगिकी के कारण रीति-रिवाजो, सामाजिक मूल्यो ,आर्थिक, धार्मिक सन्सथाओ में परिवर्तन चारो ओर देखा जा रहा है।

4. **सांस्कृतिक कारक**—संस्कृति का सम्बन्ध जीवन की सम्पुर्ण गतिविधि से होता है संस्कृति के अंतरगत हम भाषा, साहित्य, धर्म , सुख सुविधा की वस्तुए, यहॉ तक कि वे सभी चीजे जो मानव समाज से सम्बन्ध रखते है यदि इन तत्वॉ में परिवर्तन हुआ तो सामाजिक समबन्धो में परिवर्तन अनिवार्य हो जाता है। सामाजिक मूल्य जो व्यकितयो के व्यवहारो को निर्देशित करते है। यदि ये परिवर्तित है तो उससे भी सामाजिक परिवर्तन होता है। अब आधुनिक व्राहमण मांस मदिरा, धूम्रपान का प्रयोग वेधडक कर रहा है जबकि उसके पिता और पितामह पितामह उसका विरोध करते आये है। पहले सवर्ण स्त्रिया मांस नही खाती थी अब मांस खाने कि बात तो दूर रही वे खुली सडक पर सिगरेट भी पीती है, तथा रेस्टारेंट व क्लबो में शराव का प्रयोग भी करती है। इस प्रकार संस्कृति के पहलू में परिवर्तन के कारण ही सामाजिक परिवर्तन हो रहा है।

5. **औद्योगीकरण Industrialization -** औद्योगिकरण से तात्पर्य औद्योगिक क्रांति से है जिसके परिणाम स्वरूप किसी समाज में बड़े उद्योग धंधों का विकास होता है। भारत वर्ष में प्रोद्योगिक कारक सदियों से सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित करता रहा है। फिर भी उसे हम औद्योगिकरण नहीं कहेंगे। भारत वर्ष में औद्यौगिकरण का श्रीगणेश 1956 ई. में माना जाता है। बड़े-बड़े उद्योगों के विकास के कारण जहां एक ओर आर्थिक विकास में सहायता मिल रही है वहीं पर

दूसरी ओर विभिन्न सामाजिक समस्याएं जैसे- बेकारी, गंदगी, शारीरिक अपराध, चोरी आदि के कारण सामाजिक सम्बंध परिवर्तित हो रहे हैं। लोग अपने गांवों को छोड़कर उन स्थानों को जाने लगे हैं जहां उद्योग स्थापित किये जा रहे हैं। औद्यौगिकरण ने भारतीय समाज को अब स्थिर समाज से गतिशील समाज में परिवर्तन कर दिया है।

6. पश्चिमीकरण Westernization - भारतीय समाज के ऊपर पश्चिमी समाजों का व्यापक प्रभाव पड़ा है। जिसके कारण यहां के मूलभूत सामाजिक संस्थाएं प्रभावित हो रही हैं। सन् 1600 में अंग्रेज भारतीय समाज के सम्पर्क में आये तभी से उन्होंने यहां के निवासियों को अपने चाल-ढाल, पोशाक, बोली, रहन-सहन से प्रभावित करना शुरू कर दिया था। इसका सबसे अधिक प्रभाव यहां के उच्च लोगों पर पड़ा। उनका रहन-सहन, पोशाक, बोलचाल भी अंग्रेजों की भांति होने लगा। पश्चिमीकरण ने जातिगत दूरी तथा भेद-भाव को कम करने में मदद दी है। वहीं पश्चिमीकरण ने मानवतावाद, समानता तथा धर्म निरपेक्षता की भावना को बढ़ाने में मदद दी है।

7. जनतंत्रीकरण Democratization - भारत में तीव्र सामाजिक परिवर्तन का एक कारण जनतंत्रीकरण का विकास है। यहां प्रजातांत्रिक सरकार की स्थापना की बाद समाज को बदलने का कार्यक्रम भी इसी माध्यम से पूरा किया जा रहा है। प्रजातांत्रिक नियोजन जिसे हम पंचवर्षीय नियोजन भी कहते हैं के द्वारा भारतीय सामाजिक संगठन में मूलभूत परिर्तन हुआ है। जनतंत्रीकरण अच्छे व्यक्तित्व में विकास के लिए कृत संकल्प है। यही कारण है कि आज धर्म, जाति, धन, लिंग आदि भेदों के आधार पर सामाजिक व्यवहार में कोई अंतर है। सामाज में पिछड़े लोगों विशेषकर अस्पृष्यों की समस्या का समाधान बहुत अंशों में इस प्रक्रिया द्वारा सम्भव हो सका है। प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अभिव्यक्ति, विवाह, शिक्षा तथा किसी उचित कार्य को करने की स्वतंत्रता है। जिसकी स्पष्ट झलक समाजिक परिवर्तन है।

8. नगरीकरण Urbanization - भारत में सामाजिकरण का एक अन्य कारण ग्रामीण समुदाय पर नगरीकरण का प्रभाव है। यातायात एवं आवागमन की सुविधा के कारण अब गांव का व्यक्ति रोज छोटे-मोटे कार्यों के लिए भी नगर में आता है और वह यहां की चमक-दमक से इतना प्रभावित होता है कि वह अपने ग्रामीण जीवन में भी उन्हीं के अनुरूप व्यवहार शुरू कर देता है और कभी-कीभी तो वह अपना गांव छोड़कर शहर में बस जाता है। नगरों में लोगों के बीच द्वैतीयक सम्बंध व्यक्तिवाद को बढ़ावा दे रहे है। जिसके कारण परम्परागत सामाजिक संस्थाएं जैसे परिवार तथा विवाह परिवर्तित हो रहे है जो सामाजिक परिवर्तन का मूल कारण है।

6.4.1 सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएं- Characteristic of Social Change

डब्ल्यू. मूर व समाजशास्त्री के अनुसार सामाजिक परिवर्तन की निम्नलिखित विशेषताएं हैं-

1. प्रत्येक सामाजिक परिवर्तन में गंभीरता, दीर्घकालीनता एवं स्थायित्व की प्रवृति होती है।

2. प्रत्येक सामाजिक परिवर्तन के तीन तत्व होते हैं-

i. वस्तु

ii . भिन्नता

iii . समय

3. सामाजिक परिवर्तन जटिल होते हैं।

4. सामाजिक परिवर्तन अचानक नहीं होते न ही उनकी भविष्यवाणी ही की जा सकती है।

5. सामाजिक परिवर्तन से व्यक्ति न केवल व्यक्ति का जीवन ही प्रभावित होता है बल्कि सम्पूर्ण सामाजिक संरचना और व्यवस्था की कार्य पद्वति में भी परिवर्तन आता है।

6. आधुनिक समाजों में परिवर्तन तीव्र गति से तथा समाजों में सामाजिक परिवर्तन धीरे-धीरे होता है।

7. सामाजिक परिवर्तन समाज के भीतर से भी और बाहर से भी संभव है।

8. सामाजिक परिवर्तन व्यक्तिगत अनुभव और समाज के विभिन्न पक्षों को विस्तृत रूप से प्रभावित करते हैं।

9. सामाजिक परिवर्तन प्रायः सांस्कृतिक विलम्बना प्रस्तुत करते हैं।

10. सामाजिक परिवर्तन के प्रारम्भ में लोगों द्वारा विरोध किया गया और बाद में वे समाजोउपयोगी सिद्ध हुए हैं।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र.1- सामाजिक व्यवस्था के तीन अंगों के नाम लिखिए।

प्र.2- सामाजिक परिवर्तन की भविष्यवाणी की जा सकती है।

(अ) हां (ब) नहीं (स) अनिश्चित

प्र.3- सामाजिक परिवर्तन में निम्नलिखित में किसकी भूमिका महत्वपूर्ण है।

(अ) शिक्षा (ब) धर्म (स) ईश्वर (द) इनमें से कोई नहीं

प्र.4 समाज सामाजिक सम्बंधों का जाल है। यह किसका कथन है।

(अ) मैकाइवर (ब) एम. निवासन (स) दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

भाग तीन-

6.5. शिक्षा के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन :-Social Change by Education

1. शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन :-शिक्षा से समाज में जागरुकता आती है जागरुकता से क्रांती आती हैऔर क्रांती से परिवर्तन आता है दुसरे शब्दो में हम कह सकते है कि शिक्षा समाज में बद्लाब लाने का सबसे अच्छा माधयम है।

2. सामाजिक मूल्यो का विकास:- मैकाइवर तथा पैज के अनुसार समाज समाज सम्बन्धो का जाल है इन सामाजिक सम्बन्धो का आधार समाज है। इन सामाजिक मूल्यो के निर्देश में ही सामाजिक नियम बनते है जो कि हमारे सामाजिक व्यवहार को नियंत्रित करते है , मानव त्याग,सेवा आत्म-नियंत्रण ,सहंशीलता के आधार पर ही समाज बना रह सकता है। बडो का आदर ,आज्ञापालन , निष्टा, आस्था तथा ईमानदारी के बिना समाज आगे नही बढ सकता है।

3.समाज सेवा कार्यक्रमो को शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाना:- साक्षारता न तो शिक्षा का आदि है और न अंत । अतः शिक्षा को ज्ञानात्मक पक्ष तक ही सीमित न रखकर व्यवहार- रूपांतरण की क्रियात्मक शिक्षा पर जोर देना होगा। इसके लिय मुख्य रूप से समुदायो के गरीब बर्गो ,दीन- हीनो की बस्तियो में, विधलय द्वारा विविध सेवा कार्यक्रम चलाये जाने चाहिये।

4. स्कूल एवँ कालेजो को सामुदायिक जीवन का केन्द्र बनाना :- सामाजिक भावना के विकास हेतू यह जरुरी है कि हमारे स्कूल एवँ क़ॉलेजो को सामुदायिक क्रियाकलापो का केन्द्र बनाया जाय। हमारी शिक्षा संस्थाय सामुदायिक शिक्षालयो का स्वरुप ग्रहण कर ले , जिससे छात्र की सेव भावना का विकास होगा।

5. पॉच से चौदह वर्ष के बच्चो हेतु अनिवार्य एवँ निशुल्क शिक्षा :- वर्ण, जाति,वंश, लिंग, धर्म आदि के भेद के बिना 6-14 वर्ष के बच्चो हेतु समान, अनिवार्य एवँ निशुल्क शिक्षा की व्यवस्था कर शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त असामनता को दूर कर समानता लानी होगी।

6.अनुसुचित जाति के वर्गो की शिक्षा हेतु प्रवधान किये जाये:- भारतीय समाज में अनुसुचित जाति के वर्गो की स्थिति ठीक नही है इस समाज की शिक्षा के लिय सरकार को विशेष प्रावधान करने चाहिये। सभी के लिय छात्र- व्रत्तियो की व्यवसथा की जाय, छात्रावासो की व्यवस्था की जाय, प्रत्येक स्तर पर निशुल्क कशिक्षा की व्यवस्था की जाय। शिक्षा व सरकारी/प्राइवेट नौकरी में सख्या के आधार पर आरक्षण की व्यवसथा सरकारी की जिम्मेदारी होगी।

6. स्त्री शिक्षा प्रोत्साहन :- भारत में महिलाओ की आबादी पुरुषो के समान है लेकिन शिक्षा के मामले में पुरुषो से वे काफी पिछे है जव तक समाज में महिलाओ को उचित शिक्षा प्रदान नही की जाती तब तक वे समाज में पिछे रहेगी। महिला ही पुत्र के रूप में पुरुषो को बढावा देती है और वही पुत्री के रूप में अपनी ही बालिका से भेदभाव कर महिला समाज को पिछे ले जाने का काम कर करती है।

7. राष्टीय चेतना को बढावा देना:- विविध प्रदेशो, भाषाओ, उपसंस्कृतियो, सम्प्रदायो की विभिन्नताओ में एकता का अनुभव कराकर मात्रभूमि के प्रती प्रगाढ प्रेम की इस भावना को अक्षुण बनाये रखना, जिसका विकास हमने राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन के दोरान किया था, हमारी शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए जिससे हम अपनी राष्टीय संस्कृति पर गर्व कर सके।

8.प्राचीनता एव आधुनिकता का समंवय:- प्रचिनता के रूप में भारत ने महान, सामाजिक, नैतिक एवँ आध्यात्मिक मूल्य विरासत में पाये है ये वे मांवीय मूल्य है जिनके बल पर भारत दुनिया का मसिहा, अगुहा,एवँ गुरू रहा है। उन मूल्यो को अपनाते हुय हमें पश्चिमीकरन को अपनाकर दोनों में समंजस्य बैठाना होगा।

6.6 सांराश Summary

भारतीय समाज विश्व का सबसे प्राचीन समाज है। यहां भारतीय संस्कृति व परम्पराओं से समाज को गहरा लगाव है, जिसके कारण वह अपनी धार्मिक पवित्रता को बनाये हुए है। लेकिन इन सबके बावजूद आज विश्व में पर्यावरण, जंसख्या, औद्योगिकरण, नगरीकरण आदि ने विश्व समाज को परिवर्तित करने में अपनी अहम भूमिका निभाई है। सामाजिक परिवर्तन में भी इन कारकों का प्रभाव पड़ा है। आज पुराने व कमजोर पड़े रीति रिवाजों को छोड़ हम आधुनिकरण व पश्चिमीकरण की संस्कृति को अपना रहे हैं। हम जातिवाद से ऊपर उठकर मानवतावाद की ओर बढ़ रहे हैं। हमारे इस पूण्य कार्य में शिक्षा व संस्कृति दोनों अमूल्रहे हैं। शिक्षा ने आज समाज की व्यवस्था को सही दिशा देने में योगदान दिया है। आज शिक्षा के बल पर सामाजिक स्तर में परिवर्तन किया जा सकता है। सामाजिक परिवर्तन में अफ्रीका में डा. नेल्शन मंडेला ने 20 वर्ष तक जेल में रहने के बाद समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर समाज में समानता, भाईचारा, अन्तराष्ट्रीयता की भावना का संदेश विश्व को दिया।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र.1- कितने वर्ष के आयू के बच्चो के लिय निशुल्क शिक्षा की व्यवसथा की गयी है?

प्र.2- वर्ण व्यवस्था को कितने भागों में बांटा गया है?

प्र.3- क्या शिक्षा से सामाजिक परिवर्तन होता है। हॉ/नहीं

प्र.4- शिक्षा व संस्कृति एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं-

हॉ/नहीं

6.7 शब्दावलीः-

जैविक कारकः- जैविक कारक से हमारा अभिप्राय किसी समाज की जन्सख्या वृद्धि व कमी का प्रभाव समाजिक परिवर्तन में सहायक होता है। मनुष्य का रहन सहन का स्तर आप के साधन, शिक्षा व्यवस्था व संस्कृति पर जैविक कारक प्रभाव डालते हैं।

औद्योगीकरणः- भारतवर्ष में औद्योगिकरण का श्री गणेश 1956 में हुआ। औद्योगिकरण ने ग्रामीण पुरूषों को शहरों की ओर पलायन, स्त्रियों की आर्थिक स्थिति में सुधार, रोजगार प्राप्ति से समाज में सामाजिक परिवर्तन तेजी से हुआ है।

सामाजिक परिवर्तनः- सामाजिक परिवर्तन से अभिप्राय समाज की संस्कृति, शिक्षा, रीतिरिवाज, व्यवहार, स्थिति परिवर्तन, समाज के मुखिया की स्थिति में परिवर्तन, परिवार का परिवर्तित रूप आदि है।

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर निम्नलिखित हैं।

खण्ड एक

उत्तर. 1. वहिर्गामी, अन्तर्गामी, 2. भौगोलिक कारण, वातावरण कारक

3. खेल 4. भारत 5. वर्ष 1972 में 42वें संसोधन

खण्ड दो-

उत्तर- 1. सामाजिक संरचना, संस्कृति, व्यक्तित्व

2. नहीं 3. शिक्षा 4. मैकाइवर

खण्ड तीन-

उत्तर- 1. 6-14 वर्ष के बच्चो के लिय 2. चार् 3. हा

4. हा

6.9 सन्दर्भः- Reference

मित्तल एम.एल (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक इन्टरनेशनल पब्लिकेशन हाउसः मेंरठ।

सक्सेना (डा.) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशनः आगरा।

शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिसर्श एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

एलैक्स (डा.) शीलू मैरी (2008) शिक्षा के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य रजत प्रकाशः नई दिल्ली।

6.10 उपयोगी/ सहायक ग्रन्थ Useful Book

- पाण्डेय रामशकल (2008), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल पब्लिकेशनः आगरा।

- सक्सेना डा. सरोज शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशनः आगरा।

- कुमार आनन्द सामाजिक विचारों का अध्ययन, विमल प्रकाशन मंदिरः आगरा।

- वर्मा ओम प्रकाशन व कुलश्रेष्ठ पीयूष कान्त, धर्म का समाजशास्त्र, पूजा ऑफसेट प्रिन्टर्सः आगरा।

- शोध पत्रिका, इन्टरनेट।

6.11 लघु उत्तरीय प्रश्न Long Answer Types Question

प्र.1- भारत में सामाजिक संस्थाओं में समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है। इस पर टिप्पणी लिखें।

प्र.2- भारत के सामाजिक परिवर्तन में औद्योगिक बदलाव की भूमिका पर प्रकाश डालें।

प्र.3- भारत के सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करने वाले सांस्कृतिक कारक कौन-कौन से हैं? विस्तृत वर्णन किजिए।

प्र.4- शिक्षा सामाजिक परिवर्तन में किस प्रकार सहायक होती है। व्याख्या किजिए।

इकाई-7 शिक्षा के साधन: औपचारिक, अनौपचारिक एवं निरौपचारिक (Agencies of Education: Formal, Informal and Nonformal)

7.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION

7.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)

भाग-एक (PART- I)

7.3 शिक्षा के साधनों का वर्गीकरण (CLASSIFICATION OF THE AGENCIES OF EDUCATION) 7.3.1 शिक्षा के औपचारिक साधन (FORMAL AGENCIES OF EDUCATION)

7.3.2 औपचारिक शिक्षा की विशेषताएं (CHARACTERISTICS OF FORMAL EDUCATION)

7.3.3 औपचारिक शिक्षा के दोष (degmerits of formal education)

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

भाग-दो (PART- II)

7.4 शिक्षा के अनौपचारिक साधन

7.4.1 अनौपचारिक शिक्षा की विशेषताएं

7.4.2 अनौपचारिक शिक्षा के दोष

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

भाग-तीन (PART-III)

7.5 शिक्षा के निरौपचारिक साधन (NON-FORMAL AGENCY OF EDUCATION)

7.5.1 निरौपचारिक शिक्षा की विशेषताएं (CHARACTERISTICS OF NON-FORMAL EDUCATION)

7.5.2 निरौपचारिक शिक्षा के दोष (degmerits of NON-formal education)

7.5.3 शिक्षा के औपचारिक, अनौपचारिक एवं निरौपचारिक साधनों में अंतर (DIFFERENCE between FORMAL, INFORMAL AND NON-FORMAL AGENCIES OF EDUCATION)

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

7.6 सारांश (Summary)

7.7 शब्दावली (Glossary)
7.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)
7.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (bibliography)
7.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (USEFUL BOOKS)
7.11 लघु उत्तरीय प्रश्न (Short answer QUESTIONS)

7.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION)

जब हम शिक्षा को आजीवन चलने वाली प्रक्रिया के रूप में देखते हैं तो हम शिक्षा के साधन के रूप में सिर्फ विद्यालय को ही नहीं देखते वरन् उन अनेक संस्थाओं को भी उसमें समन्वित करते हैं, जिनमें व्यक्ति जीवन पर्यन्त रहता है एवं जिनसे व्यक्ति उपयोगी या अनुपयोगी ज्ञान प्राप्त करता है। इन संस्थाओं को हम शिक्षा के साधन के नाम से पुकारते हैं। शिक्षा के साधन वह तत्व, कारण या संस्थाएं हैं जो बालक पर परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से शैक्षिक प्रभाव डालते हैं। यदि हम व्यापक अर्थ में देखें तो मनुष्य का सम्पूर्ण वातावरण ही उसकी शिक्षा को प्रभावित करता है परन्तु इस वातावरण में कुछ तत्व अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। चूंकि इनका बालक की शिक्षा से प्रत्यक्ष संबंध होता है। शिक्षा के साधनों का अर्थ स्पष्ट करते हुए बी.डी. भाटिया ने लिखा है:-

''समाज ने शिक्षा के कार्यों को करने के लिए अनेक विशिष्ट संस्थाओं का विकास किया है। इन्हीं संस्थाओं को शिक्षा के साधन कहा जाता है।''

7.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)

1. इस इकाई में औपचारिक शिक्षा की विशेषताओं को जान सकेंगे।
2. इस इकाई में औपचारिक शिक्षा के दोषों को जान सकेंगे।
3. इस इकाई में अनौपचारिक शिक्षा की विशेषताओं को जान सकेंगे।
4. इस इकाई में अनौपचारिक शिक्षा के दोषों को जान सकेंगे।
5. इस इकाई में निरौपचारिक शिक्षा की विशेषताओं को जान सकेंगे।
6. इस इकाई में निरौपचारिक शिक्षा के दोषों को जान सकेंगे।

7.3 शिक्षा के साधनों का वर्गीकरण (CLASSIFICATION OF THE AGENCIES OF EDUCATION)

ब्राउन (Brown) ने शिक्षा के साधनों को निम्नलिखित चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया है:-

1.औपचारिक साधन (Formal Agencies):- इसके अंतर्गत वह विद्यालय, पुस्तकालय एवं संग्रहालय को सम्मिलित करते हैं।

2.अनौपचारिक साधन (Informal Agencies):- परिवार, समाज एवं राज्य को ब्राउन शिक्षा के अनौपचारिक साधन के अंतर्गत सम्मिलित करते हैं।

3.व्यावसायिक साधन (Commercial Agencies):- इसके अंतर्गत प्रेस, रेडियो, समाचार-पत्र व टेलीविजन सम्मिलित किये गये हैं।

4.अव्यावसायिक साधन (Non-Commercial Agencies) :- खेल संघ, समाज कल्याण केन्द्र, प्रौढ़ शिक्षा एवं साक्षरता केन्द्र व स्काउटिंग, गाइडिंग संस्थाएं इसके अंतर्गत सम्मिलित की जाती हैं।

7.3.1 शिक्षा के औपचारिक साधन (FORMAL AGENCIES OF EDUCATION)

शिक्षा के यह साधन वह हैं जो बालक को सप्रयत्न शिक्षा देने का कार्य करते हैं। इसमें शिक्षा देने की योजना अर्थात् समय, स्थान, अध्यापक, विधि पाठ्यक्रम पूर्व निर्धारित होती है। यह संस्थाएं अपने द्वारा निर्धारित नियमावली का अनुपालन करती हैं। औपचारिक शिक्षा के लाभों पर प्रकाश डालते हुए ड्यूवी ने कहा है- ''औपचारिक शिक्षा के बिना जटिल समाज के साधनों और उपलब्धियों को हस्तान्तरित करना संभव नहीं है। यह एक ऐसे अनुभव की प्राप्ति का द्वार खोलती है जिसको बालक दूसरों के साथ रहकर अनौपचारिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त नहीं कर सकता।''

7.3.2 औपचारिक शिक्षा की विशेषताएं (CHARACTERISTICS OF FORMAL EDUCATION)

1. यह शिक्षा पूर्व आयोजन, नियोजन एवं सप्रयत्नशील उपायों द्वारा प्रदान की जाती है।
2. यह शिक्षा कृत्रिम, जटिल तथा अप्राकृतिक होती है।
3. औपचारिक शिक्षा मूलतः विद्यालयों के द्वारा ही प्रदान की जाती है।
4. इसका प्रारंभ विद्यालय जाने पर होता है एवं अन्त भी विद्यालय छोड़ने पर हो जाता है।

5. यह शिक्षा भौतिक मूल्यों से जुड़ी होती है और हमें भौतिक साधनों को जुटाने हेतु प्रेरित करती है।

6. इसका उद्देश्य बालक को परीक्षा उत्तीर्ण कराकर प्रमाण-पत्र प्राप्त कराना है।

7. औपचारिक शिक्षा में शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, स्थान, समय, अध्यापक आदि सुनिश्चित कर लिए जाते हैं।

औपचारिक शिक्षा के साधन के संबंध में जॉन ड्यूवीका कथन सही है, ''बिना औपचारिक शिक्षा के यह संभव नहीं है कि हम इस जटिल समाज के स्रोतों व उपलब्धियों को हस्तान्तरित कर सकें, यह अनुभवों हेतु एक रास्ता खोलता है जो युवा वर्ग के लिए अप्राप्य है, यदि अन्य व्यक्तियों के साथ औपचारिक प्रशिक्षण हेतु छोड़ दिया जाये।''

(Without formal education, it is not possible to transmit all the resources and achievements of a complex society. It also open a way to a kind of experience which would not be accessible to the young, if they are left to pick-up their training in informal association with others.)

7.3.3 औपचारिक शिक्षा के दोष (DEMERITS OF FORMAL EDUCATION)

1.यह शिक्षा सैद्धान्तिक अधिक व व्यावहारिक कम है।

2.औपचारिक शिक्षा बालक को यह सिखाती है कि उसके जीवन का प्रमुख उद्देश्य परीक्षा उत्तीर्ण करना है एवं प्रमाण-पत्र प्राप्त करना है।

3.यह शिक्षा अध्यापक को भी पाठ्यक्रम पूरा करने तक सीमित कर देती है।

4.शिक्षा विद्यालय की चारदीवारी में बंध जाती है।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

प्र. 1 शिक्षा के तीन औपचारिक साधनों के नाम लिखिए।

प्र. 2 शिक्षा के तीन अनौपचारिक साधनों के नाम लिखिए।

प्र. 3 शिक्षा के तीन व्यावसायिक साधनों के नाम लिखिए।

प्र. 4 शिक्षा के तीन अव्यावसायिक साधनों के नाम लिखिए।

भाग-दो (PART- II)

7.4 शिक्षा के अनौपचारिक साधन (INFORMAL AGENCY OF EDUCATION)

शिक्षा के अनौपचारिक साधन शिक्षा को एक जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया के रूप में देखते हैं। इनका मानना है कि लिखना, पढ़ना या अक्षर ज्ञान प्राप्त कर लेना ही शिक्षा नहीं है। शिक्षा इससे बहुत अधिक व्यापक तथा विस्तृत प्रत्यय है। शिक्षा वास्तव में वह है जो हम अपने जीवन के अच्छे-बुरे अनुभवों से सीखते हैं और यह अनुभव व्यक्ति जीवनपर्यन्त प्राप्त करता है। बैण्टाक Bantak के शब्दों में ''शिक्षा सभी प्रकार के अनुभवों का योग है, जिसे मनुष्य अपने जीवनकाल में प्राप्त करता है और जिसके द्वारा वह जो कुछ है, उसका निर्माण होता है।'' जे.एस.रॉस ने इस संबंध में लिखा है, ''अनौपचारिक शिक्षा बालक द्वारा सभी प्रभाव ग्रहण करना और उसे अपनी प्रकृति से उत्तेजित कर पूर्णतया विकसित करना सिखाती है।'' वास्तव में देखा जाए तो अनौपचारिक शिक्षा जीवन से संबंधित वे अनुभव हैं जिन्हें हम बिना किसी व्यवस्थित प्रयास, संस्था तथा साधन के स्वाभाविक स्थिति से प्राप्त करते हैं। इस प्रकार की शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से जीवन से संबंधित होती है। यह शिक्षा स्वाभाविक रूप से होती है। इसकी न तो कोई निश्चित योजना होती है और न ही कोई निश्चित नियमावली। यह बालक के आचरण का रूपान्तरण करते हैं परन्तु रूपान्तरण की प्रक्रिया अज्ञात, अप्रत्यक्ष व अनौपचारिक होती है।

7.4.1 अनौपचारिक शिक्षा की विशेषताएं :-

1. अनौपचारिक शिक्षा स्वाभाविक होती है। अर्थात् यह कृत्रिमता से परे होती है।

2. यह शिक्षा जीवनपर्यन्त चलती है अथवा हम यह भी कह सकते हैं कि इस शिक्षा का प्रारम्भ तब से हो जाता है जबकि बालक इस संसार में जन्म लेता है एवं यह तब तक चलती है जब तक कि बालक मृत्यु शैया को प्राप्त न कर ले।

3. इस शिक्षा को देने के प्रमुख साधन परिवार, पड़ोस, समाज, राज्य, धर्म आदि हैं।

4. इसमें बालक अपने अनुभवों के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करता है।

5. इसमें बालक स्वतंत्र वातावरण में शिक्षा ग्रहण करता है। उसके ऊपर कोई कठोर नियंत्रण नहीं होता है।

6. यह बालक की रूचि व जिज्ञासा पर आधारित होती है।

शिक्षा के इन साधनों के संबंध में जॉन ड्यूवी का कथन सही है, ''अन्य व्यक्तियों के साथ अनौपचारिक रूप से रहकर बालक शिक्षित होता है। यह प्रक्रिया बालक को शिक्षित करती है एवं उसके अनुभवों को व्यापक व प्रकाशित करती है और उसकी कल्पना को प्रेरित करती है, यह साधन हमारे विचारों व कथनों को स्पष्ट एवं सही करते हैं एवं उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करते हैं।''

(The child is informally educated by living with others and the very process of living together educates. It enlarge and enlighters experience, it stimulates and enriches imagination, it creates responsibility, accuracy and civilness of statement and thought.)

7.4.2 अनौपचारिक शिक्षा के दोष (DEMERITS OF INFORMAL EDUCATION)

1. इसके द्वारा प्रदान किया गया ज्ञान अस्पष्ट होता है।

2. इसमें शिक्षा का समय व स्थान अनिश्चित होने के कारण शिक्षा की स्थिति सदैव अस्थिर रहती है।

3. ज्ञान ग्रहण करते समय बालक गलत धारणाओं का विकास कर लेता है।

4. इस शिक्षा के द्वारा हम कौशलों व तकनीकियों का विकास नहीं कर सकते।

5. इसकी नियमावली व अनुशासन ढीला होता है।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

सत्य/असत्य कथनों पर सही का निशान लगाएं:-

प्र. 5 औपचारिक शिक्षा कृत्रिम, जटिल तथा अप्राकृतिक होती है। (सत्य/असत्य)

प्र. 6 औपचारिक शिक्षा पूर्व आयोजन, नियोजन एवं सप्रयत्नशील उपायों द्वारा प्रदान की जाती है। (सत्य/असत्य)

प्र. 7 औपचारिक शिक्षा विद्यालय की चारदीवारी से बाहर प्रदान की जाती है। (सत्य/असत्य)

7.5 शिक्षा के निरौपचारिक साधन (non-formal agencies of education)

यह शिक्षा का वह साधन है जिसमें शिक्षा का औपचारिक स्वरूप पूर्ण रूप से नियंत्रण में होता है। यह शिक्षा को एक सचेष्ट प्रक्रिया के रूप में देखते हैं एवं शिक्षा के विभिन्न आयामों पर नियंत्रण रखते हैं, अर्थात् इसमें शिक्षा का प्रवेश, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, अध्यापक, छात्र, शिक्षा के उद्देश्य व शिक्षा की व्यवस्था पूरी तरह से औपचारिक होती है, परन्तु इसके साथ ही इसमें शिक्षा न तो पूर्णतया नियंत्रित होती है और न ही पूर्णतया अनियंत्रित, वरन् यह इन दोनों का सम्मिश्रण है।

शिक्षा की इस अवधारणा के अंतर्गत शिक्षार्थी कई क्षेत्रों में नियंत्रित होता है एवं कई क्षेत्रों में अनियंत्रित होता है। इसमें प्रायः आयु, स्थान, शिक्षण विधि पर नियंत्रण नहीं होता जबकि पाठ्यक्रम, परीक्षा, समय आदि की सीमा निश्चित होती है।

7.5.1 निरौपचारिक शिक्षा की विशेषताएं **(CHARACTERISTICS OF NON-FORMAL EDUCATION)**

1. यह शिक्षा छात्रों को विद्यालय के तनावपूर्ण वातावरण से दूर रखती है।

2. एक समय में बहुत अधिक लोगों को शिक्षित किया जा सकता है। अतः जिन देशों में जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है, वहां यह बहुत उपयोगी है।

3. इसमें शिक्षा के ऊपर व्यय कम होता है।

4. यह शिक्षा अनौपचारिक शिक्षा से अधिक उपयोगी है। चूंकि इसमें छात्र उद्देश्यों के प्रति जागरूक रहता है, साथ ही छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन एवं मापन करना संभव होता है।

5. इसका पाठ्यक्रम निश्चित होता है, जिससे छात्र अपने उद्देश्यों के प्रति जागरूक रहता है।

6. इस शिक्षा को दूर स्थान पर रहने वाले या व्यवसाय में संलग्न व्यक्ति भी प्राप्त कर सकते हैं।

7.5.2 निरौपचारिक शिक्षा के दोष (DEMERITS OF NON-FORMAL EDUCATION)

1. छात्रों के मन में उत्पन्न शंकाओं का तुरन्त निराकरण संभव नहीं है।

2. कभी-कभी डाक-व्यवस्था में गड़बड़ होने के कारण छात्रों की पढ़ाई में व्यवधान पड़ जाता है।

3. सभी व्यक्ति अकेले में शिक्षा ग्रहण करते हैं। इस कारण उनमें समूह भावना का विकास नहीं हो पाता है।

5. अध्यापक व छात्रों के मध्य प्रत्यक्ष संबंध स्थापित नहीं हो पाता। अतः उन दोनों के मध्य परस्पर अन्तःक्रिया का अभाव रहता है।

7.5.3 शिक्षा के औपचारिक, अनौपचारिक व निरौपचारिक साधनों में अन्तर (DIFFERENCE BETWEEN FORMAL, INFORMAL & NON-FORMAL EDUCATION)

शिक्षा के क्षेत्र (Areas of Education)	औपचारिक शिक्षा (FORMAL EDUCATION)	अनौपचारिक शिक्षा (INFORMAL EDUCATION)	निरौपचारिक शिक्षा (NON-FORMAL EDUCATION)
1. छात्र (Student)	1. निश्चित होते हैं। 2. आयु सीमा निर्धारित होती है।	1. सीखने वालों की आयु सीमा निश्चित नहीं होती। 2. आयु सीमा पर कोई नियंत्रण नहीं होता।	1. छात्र निश्चित होते हैं।
2. अध्यापक (Resource Person or Teacher)	1. अध्यापक शिक्षित होता है। 2.अध्यापक निश्चित होता है।	1. अध्यापक कोई भी हो सकता है। 2.अध्यापक निश्चित नहीं होता है।	1.शिक्षा देने वाले व शिक्षा ग्रहण करने वालों के मध्य कोई संबंध प्रत्यक्ष नहीं होता है।
3. विषय वस्तु	1. सैद्धान्तिक होती है। 2. निश्चित होती है। 3.व्यावहारिकता कम	1. व्यावहारिक होती	1. पाठ्यक्रम निश्चित होता है।

(Content)	होती है।	है। 2. अनिश्चित होती है।	
4. शिक्षण पद्धति (Teaching Method)	1. पाठ्यक्रम के अनुकूल होती है। 2. यह क्रिया पर कम बल देती है।	3. सीखने वाले की रूचि पर आधारित होती है।	1.लिखित पाठों के माध्यम से शिक्षण होता है।
5. ढांचा (Structure)	1 शिक्षण कार्यक्रम व्यवस्थित होता है। 2. यह विभिन्न इकाईयों में विभक्त होता है। 3. सीखना एक क्रमिक प्रक्रिया के रूप में होता है।	1.पद्धति लचीली होती है। 2. इसमें व्यावहारिकता निरीक्षण आदि पर बल दिया जाता है। 1. ढांचे में कोई व्यवस्था नहीं होती है।	2. अध्यापक व शिक्षार्थी के मध्य अन्तःक्रिया असंभव होती है। 1. ढांचा निश्चित होता है। 2. सीखना क्रमिक रूप में नहीं होता है।
6. नियंत्रण (Control)	1. इसके ऊपर यांत्रिक रूप में नियंत्रण होता है। 2. सीखने वाले पर शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र को लादा जाता है।	2. सीखना एक अचानक होने वाली प्रक्रिया है। 1. यह सीखने वाले के नियंत्रण पर आधारित होता है।	3. इसकी व्यवस्था सचेष्ट होती है। 1. इसमें शिक्षा के कुछ क्षेत्रों पर नियंत्रण होता है एवं कुछ पर नहीं।
7. स्थान (Location)	1.स्थान निश्चित होता है।	1. स्थान निश्चित नहीं होता है।	1. स्थान छात्र के लिए निश्चित नहीं है, परन्तु शिक्षा देने का स्थान निश्चित होता है।
8. समय (Time)	1.समय निश्चित होता है।	1. समय अनिश्चित	1. अवधि निश्चित है परन्तु शिक्षा ग्रहण करने का समय नहीं।
9. मूल्यांकन			

(Evaluation)	1. छात्रों का मूल्यांकन संभव है।	होता है।	1. छात्रों के मूल्यांकन की व्यवस्था है।
10. पारितोषिक (Reward	1. अंक या उपाधि के रूप में मिलता है।	1. छात्रों का मूल्यांकन संभव नहीं है। 1. प्रशंसा के रूप में प्राप्त होता है।	1 अंक या उपाधि के रूप में मिलता है।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

सही अथवा गलत पर निशान लगाएं:-

प्र. 8 अनौपचारिक शिक्षा का प्रमुख साधन संग्रहालय है। (सही/गलत)

प्र. 9 अनौपचारिक शिक्षा के प्रमुख साधन परिवार, पड़ोस, राज्य आदि हैं। (सही/गलत)

प्र. 10 निरौपचारिक शिक्षा का पाठ्यक्रम निश्चित होता है। (सही/गलत)

7.6 सारांश (SUMMARY)

प्रत्येक शिक्षा की एक संस्कृति होती है और इस संस्कृति का संरक्षण या रक्षा करने का दायित्व विद्यालय का होता है, परन्तु इस संरक्षण के साथ ही साथ विद्यालय का यह भी दायित्व है कि वह संस्कृति का मूल्यांकन करे एवं उसकी अच्छी बातों को सुरक्षित रखा जाये। विद्यालय का कार्य बालक की तर्क कल्पना, चिन्तन व निर्णय शक्ति का विकास करना, जिससे बालक स्वतंत्र, स्पष्ट व तार्किक रूप से चिन्तन कर सके। जबकि विद्यालय के द्वारा अनौपचारिक कार्य करने की अपेक्षा समाज द्वारा की जाती है। शिक्षा शास्त्री विद्यालय के औपचारिक कामों को अनिवार्य या प्राथमिक कार्यों की श्रेणी में रखते हैं। जैसे-बालक का शारीरिक विकास करने का दायित्व परिवार पर है। परन्तु परिवार के लिए यह संभव नहीं कि वह बालक का शारीरिक विकास शारीरिक क्रियाओं के माध्यम से कर सके। इस जिम्मेदारी को विद्यालय अच्छी तरह निभा सकता है। पुस्तकालय भी बालक के चर्तुमुखी विकास में अपना योगदान देते हैं। एक अच्छा अध्यापक वही होता है, जिसके पास

किताबों का भण्डार हो, किताबों को इकट्ठा करना व उनको छात्रों के लिए उपलब्ध कराना अध्यापक की जिम्मेदारी होती है। अतः शिक्षा के औपचारिक, अनौपचारिक व निरौपचारिक विकास की जिम्मेदारी को अध्यापक महसूस करें व इन साधनों के द्वारा छात्रों का विकास करें।

7.7 शब्दावली (Glossary)

निरौपचारिक शिक्षा :. एक समय में बहुत अधिक लोगों को शिक्षित किया जा सकता है। अतः जिन देशों में जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है, वहां यह बहुत उपयोगी है।

औपचारिक शिक्षा :- . औपचारिक शिक्षा में शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, स्थान, समय, अध्यापक आदि सुनिश्चित कर लिए जाते हैं।

7.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)

भाग-एक **(PART- I)**

उ. 1 औपचारिक साधन - विद्यालय, पुस्तकालय एवं संग्रहालय।

उ. 2 अनौपचारिक साधन - परिवार, समाज व राज्य।

उ. 3 व्यावसायिक साधन - प्रेस, रेडियो, समाचार-पत्र।

उ. 4 अव्यावसायिक साधन - खेल संघ, समाज कल्याण केन्द्र।

भाग-दो **(PART-II)**

उ. 5 सत्य

उ. 6 सत्य

उ. 7 असत्य

भाग-तीन **(PART-III)**

उ. 8 गलत

उ. 9 सही

उ. 10 सही

7.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (BIBLIOGRAPHY)

1.पाण्डे (डॉ) रामशकल उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक अग्रवाल प्रकाशन आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार साहित्य प्रकाशन आगरा।

3. मित्तल एम एल (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

7.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री Useful Books

1.पाण्डे (डॉ) रामशकल उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक अग्रवाल प्रकाशन आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार साहित्य प्रकाशन आगरा।

3. मित्तल एम एल (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षकए इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय रजत प्रकाशन नई दिल्ली।

7.11 लघु उत्तरीय प्रश्न (Long ANSWER Type QUESTIONS)

प्र. 1. शिक्षा के अभिकरणों से आप क्या समझते हैं ? शिक्षा के औपचारिक, अनौपचारिक व निरौपचारिक

साधनों में अन्तर बताईये।

प्र. 2. छात्रों के विकास हेतु विभिन्न साधनों में समन्वय होना आवश्यक है। इस कथन की विस्तृत व्याख्या

कीजिए।

प्र. 3. विद्यालय से आप क्या समझते हैं ? औपचारिक साधन के रूप में विद्यालय की विशेषताओं का वर्णन

कीजिए।

प्र. 4. शिक्षा के अनौपचारिक साधन की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

प्र. 5. शिक्षा के निरौपचारिक साधन से आप क्या समझते हैं ? शिक्षा के निरौपचारिक साधनों के दोष बताईये।

इकाई.08 दर्शन का अर्थ और भारतीय दर्शन, अध्यापक के लिय शिक्षा का महत्व (Meaning of Philosophy and Educational Philosophy, Importance of Education for Teacher)

8.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION
8.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)
भाग-एक (PART- I)
8.3 भारतीय दर्शन (INDIAN PHILOSOPHY)
8.3.1 भारतीय परिवेश में दर्शन का अर्थ (meaning of PHILOSOPHY in INDIAN perspectives)
8.3.2 दर्शन की परिभाषाएं (DEFfINITIONS OF PHILOSOPHY)
अपनी उन्नति जानिए CHECK YOUR PROGRESS)
भाग-दो (PART- II)
1.4 शिक्षक के लिए शिक्षा दर्शन की उपादेयता
अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)
भाग-तीन (PART- III)
8.5 दर्शन के कार्य (FUNCTIONS OF PHILOSOPHY)
अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)
8.6 सारांश (Summary)
8.7 शब्दावली (Glossary)
8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)
8.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची ((bibliography)
8.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (ESSAY TYPE QUESTIONS
8.11 निबन्धात्मक प्रश्न (ESSAY TYPE QUESTIONS)

8.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION)

मानव जीवन मनुष्य को बडे पुण्य व अच्छे कार्यों के फल्स्वरुप प्राप्त होता है इसलिय हमें अपने सत्-कार्यों के द्वारा मानव के कल्याण हेतू उन कार्यों को करना चाहिय जिससे स्वम के साथ संसार का कल्याण हो सके। मनुष्य का वास्तविक स्वरूप क्या है ? विश्व में उसकी स्थिति क्या है ? किस सत्ता से प्रेरित होकर सारा संसार नियमानुसार कार्य करने में रत है ? विश्व के सृजन तथा संहार के पीछे कौन-सी शक्ति अपने ऐश्वर्य का परिचय दे रही है? क्यों प्रकृति अपने नियमों का उल्लंघन कभी नहीं करती है? इस वसुन्धरा के प्राणियों में क्यों सुख है? क्यों दुःख है? इनके सुख-दुःख में इतनी विषमता क्यों है? क्या दुःख की इस स्थिति एवं विषमता को पार करने का कोई उपाय भी है? क्या पाप है? क्या पुण्य है? उत्तम समाज की कौन-सी ऐसी व्यवस्था हो सकती है जो मनुष्य के लिए श्रेयस्कर हो? मनुष्य के वास्तविक कल्याण का क्या साधन है? ये सभी ऐसे प्रश्न हैं, जिनके उत्तर को मानवता अनादि काल से संपूर्ण विश्व में किसी न किसी प्रकार से खोजती आई है और इस अन्वेषण के फलस्वरूप जिस साहित्य की रचना हुई है, उसे दर्शन शास्त्र कहा जाता है। इस अध्याय में आप शिक्षा दर्शन व अध्यापक के लिय शिक्षा दर्शन की उपयोगिता को समझ सकेगे।

8.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)

1. दर्शन का अर्थ भारतीय परिपेक्ष्य में समझ सकेंगे।
2. दर्शन का अर्थ पश्चिमी परिपेक्ष्य में समझ सकेंगे।
3. भारतीय व पाश्चात्य दार्शनिकों की परिभाषा का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
4. दर्शन व अध्यापक के सम्बन्धो को समझ सकेगे।
5. दर्शन के कार्यों को समझ सकेंगे।

भाग-एक **(PART- I)**

8.3 भारतीय दर्शन (INDIAN PHILOSOPHY)

इतिहास इस बात का साक्षी है कि भारत ही नहीं, अपितु समस्त संसार के प्राचीनतम ग्रन्थ 'वेद' ही हैं। भारतीय दर्शन का स्रोत वेद है। वेद कोई दार्शनिक ग्रन्थ नहीं है, वरन् दर्शनों के आधारभूत ग्रन्थ हैं। वेदों ने बाद के भारतीय दर्शनों पर अत्यधिक प्रभाव डाला, जिन्हें आज हम 'षड्दर्शन' कहते हैं-वे सभी वेदों को मानने वाले हैं। कुछ दर्शन वेदों को नहीं मानते। ऐसे दर्शन तीन हैं-चार्वाक, बौद्ध तथा जैन। इस दृष्टि से भी वेदों का महत्व है। अर्थात् भारत में जो चिन्तन हुआ, वह

या तो वेदों के समर्थन के लिए या फिर खण्डन के लिए। वस्तुतः पहले 'नास्तिक' शब्द वेदनिन्दक के लिए ही प्रयुक्त होता था, बाद में इसका अर्थ 'अनीश्वरवादी' हो गया। 'नास्तिक' शब्द के पहले अर्थ में केवल चार्वाक, बौद्ध तथा जैन दर्शन 'नास्तिक' हैं और दूसरे अर्थ में मीमांसा और सांख्य भी आते हैं, क्योंकि ये भी ईश्वर को नहीं मानते। एक अन्य अर्थ के अनुसार- 'नास्तिक उसे कहते हैं, जो परलोक में विश्वास नहीं करता है।' इस अर्थ में षड्दर्शन तथा जैन एवं बौद्ध दर्शन भी आस्तिक दर्शन हो जाते हैं और केवल चार्वाक दर्शन आस्तिक है।

'वेद' वास्तव में एक ही है और उसी से चार वेद बन गये हैं, जैसा कि सनत्सुजात के निम्नलिखित कथन से विदित होता है-

''एकस्य वेदास्याज्ञानाद् वेदास्ते बहवः कृताः।''

अर्थात्-अज्ञानवश एक ही वेद के अनेक वेद कर दिये गये हैं।

स्थूल दृष्टि से वेद को 'कर्म-काण्ड' एवं 'ज्ञान काण्ड' में विभक्त किया गया है। 'कर्म-काण्ड' में उपासनाओं का तथा 'ज्ञान-काण्ड' में आध्यात्मिक तत्व का विवेचन है। देवताओं की स्तुतियों में अनेक मंत्र हैं। ऋग्वेद के दशम् मण्डल के 121वें सूक्त में हिरण्यगर्भ की स्तुति की गई है। इस सूक्त से आध्यात्मिक चिन्तन का अच्छा परिचय प्राप्त होता है।

श्रीमद्भगवद्गीता नीतिशास्त्र का विश्वविख्यात ग्रन्थ है। इसमें भगवान कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया है। गीता का मुख्य सन्देश 'निष्काम कर्म' है। अर्थात् बिना फल की इच्छा किये हुए कर्म करना चाहिए। आत्मा अजर-अमर है। न तो इसको कोई मार सकता है और न ही यह किसी को मार सकता है। गीता में ज्ञान, भक्ति एवं कर्म-तीनों मार्गो की महिमा बताई गई है। किन्तु निष्काम कर्म को सुगम एवं उत्तम साधन के रूप में स्वीकार किया गया है। लक्ष्य के रूप में 'मुक्ति' ही स्वीकार्य है।

चार्वाक दर्शन भौतिकवादी दर्शन है। इसके अनुसार जड़-जगत सत्य है और यह वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी-इन चार भौतिक तत्वों से बना है। चेतना की उत्पत्ति भौतिक तत्वों से ही है। आत्मा शरीर को ही कहा जाता है। शरीर के नष्ट होने पर चैतन्य जो भौतिक तत्वों का विशेष है, नष्ट हो जाता है। मृत्यु के बाद कुछ नहीं बचता। परलोक, वेद, ईश्वर आदि को यह दर्शन स्वीकार नहीं करता। इसके अनुसार जब तक जियें सुख से जियें का सिद्धान्त सर्वोत्तम सिद्धान्त है।

जैन दर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष के अतिरिक्त अनुमान एवं शब्द भी प्रमाण हैं। भौतिक जगत को जैन दार्शनिक भी चार्वाक की भांति वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी-इन्हीं चार तत्वों के मिश्रण से निर्मित मानते हैं। जैन दार्शनिकों के अनुसार चैतन्य की उत्पत्ति जड़-पदार्थो से नहीं हो सकती। जैन दर्शन के अनुसार जितने सजीव शरीर हैं, उतने ही चैतन्य जीव हैं। प्रत्येक जीव में अनन्त सुख पाने की क्षमता

है। मोक्ष-प्राप्ति सर्वथा संभव है। सांसारिक बंधन से छुटकारा पाने के लिए सम्यक दर्शन, सम्यक ज्ञान और सम्यक चरित्र-तीन उपाय बताये गये हैं।

बौद्ध दर्शन - जगत के सभी प्राणियों में एवं सभी दशाओं में दुःख वर्तमान है और इस दुःख का कारण है-क्योंकि कोई भी भौतिक-आध्यात्मिक वस्तु अकारण नहीं है। संसार की सभी वस्तुएं परिवर्तनशील हैं। मरण का कारण जन्म है। जन्म का कारण तृष्णा है और तृष्णा का कारण अज्ञान है। दुःखों के कारण यदि नष्ट हो जायें तो दुःख का भी अन्त हो जायेगा। चौथा सत्य 'दुःख-निवृत्ति' के उपाय के रूप में है।

8.3.1 दर्शन का अर्थ

भारतीय परिवेश में दर्शन का अर्थ

'दर्शन' पद की व्युत्पत्ति दो से है। पहले, 'दुश्यते अनेन इति दर्शनम्'। इस व्युत्पत्ति के अनुसार संस्कृत में 'दर्शन' का अर्थ होता है-'जिसके द्वारा देखा जाये।' 'दर्शन' शब्द से वे सभी पद्धतियां अपेक्षित हैं, जिनके द्वारा परमार्थ का ज्ञान होता है। 'देखा जाये' इस पद का अर्थ यों तो 'ज्ञान प्राप्त किया जाये' यह भी हो सकता है, फिर भी इस संबंध में यह ध्यान रखना उचित है कि ज्ञान प्राप्त करने के अनेक साधन हैं। जैसे-प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द आदि। लेकिन इन सभी में सबसे प्रसिद्ध और प्रमुख साधन है-प्रत्यक्ष। प्रत्यक्ष के भी इन्द्रिय-भेद से पांच प्रकार होते हैं, लेकिन इन सभी में जो ज्ञान चक्षु-इन्द्रिय से प्राप्त होता है-जिसे चाक्षुष प्रत्यक्ष कहते हैं-उसकी प्रामाणिकता सर्वोपरि है। शब्द भी एक प्रकार का प्रत्यक्ष है, जिसको आप्त पुरूषों ने अपनी अविचलित बुद्धि और शुद्ध अंतःकरण से प्राप्त करके लौकिक जनों के उत्थान हेतु गुरू-शिष्य परम्परा से प्रसारित किया है। प्रायः चार्वाक को छोड़कर जितने भी भारतीय दार्शनिक हैं वे सभी आप्त वाक्यों की श्रेष्ठ प्रमाणिकता में विश्वास करते हैं। वेद में आस्था रखने वाले शास्त्रकार तो ऐसा मानते ही हैं, किन्तु जैनों एवं बौद्धों के भी अपने-अपने आप्त-वचन अथवा आगम हैं, जिन्हें वे प्रमाण-स्वरूप मानते हैं। इन सबसे प्रत्यक्ष को सर्वोपरि प्रमाण मानने की बात सिद्ध होती है।

दूसरे 'दृश्यते इति दर्शनम्' जो देखा, समझा जाये वह दर्शन है। इस व्युत्पत्ति के अनुसार प्रामाणिक विषय-ज्ञान दर्शन है। इस प्रकार 'दर्शन' के अर्थ में दोनों व्युत्पत्तिमूलक अर्थ शामिल हैं। संक्षेप में, 'दर्शन' शब्द से भारतीय शास्त्रकारों का तत्वसाक्षात्कार अभीष्ठ है। दर्शनशास्त्र में प्रायः उसी साक्षात्कार की कल्पना की जाती है, जिसकी तार्किक विवेचना भी हो सके। दर्शन शास्त्र का इतिहास ही आप्त पुरूषों द्वारा प्रदर्शित तत्व की युक्तिसंगत विवेचना है। इसके वास्तविक अर्थ को तर्क की कसौटी पर कस कर लाने का एक क्रमबद्ध प्रयास है। इस सबसे यह ज्ञात होता है कि दर्शन का अर्थ केवल अर्न्तज्ञान ही नहीं अपितु वे समस्त विचारधारायें हैं जो अंर्तज्ञान से उद्भूत होती हुई भी युक्तियों के आधार पर प्रमाणित की जाती हैं। भारतीय विद्वानों के दर्शन का यही अर्थ अभिमत है।

दर्शन शास्त्र सत्ता संबंधी ज्ञान कराकर मनुष्य का परम कल्याण करता है। यह परम कल्याण ही दर्शन का लक्ष्य है। अब प्रश्न है कि इस परम कल्याण का क्या स्वरूप है ? यद्यपि इस प्रश्न का उत्तर देने में भारतीय दर्शन के आचार्यो में मतभेद हैं, तथापि इन सबमें एक समानता है, जो न केवल वेदपथगामी दा◌ार्शनिक सम्प्रदायों की विशेषता है वरन् जैन और बौद्ध-सरीखे अवैदिक सम्प्रदाय दो दार्शनिक विचारकों की भी आधारभूत मान्यता है।

संसार के विषयों से उत्पन्न होने वाले जितने भी सुख हैं, उनमें दुःख किसी न किसी रूप में छिपा रहता है। इसी दुःख की ज्वाला से तप्त होकर दार्शनिकों ने उसकी निवृत्ति के उपायों की खोज की है। जैनों के अर्हतत्व, बौद्धों के निर्माण, नैयायिकों की आत्यन्तिक दुःख निवृत्ति तथा वेदान्तियों के मोक्ष में दुःख के नाश की कल्पना अन्तर्निहित है। इस प्रकार दुःख का समूल नाश ही भारतीय दर्शन का परम लक्ष्य रहा है। भारतीय दर्शनकारों ने इसी लक्ष्य के साधनभूत अन्यान्य दर्शनों की रचना करके तथा उन्हें अधिकारभेद से मनुष्य की परमार्थसिद्धि में उपयोगी बताकर मनुष्य को परमपद प्राप्त करने का प्रयत्न किया है।

8.3.2 दर्शन की परिभाषाएं (DEFINITIONS OF PHILOSOPHY)

दर्शन क्या है तथा दर्शन के बिना व्यक्ति का जीवन सहज तरीके से नहीं चल सकता, ये बातें दर्शन के अर्थ तत्व से स्पष्ट हो जाती हैं। ‘‘मनुष्य अपने जीवन तथा संसार के विषय में अपनी-अपनी धारणाओं के अनुसार जीवन व्यतीत करता है। यह बात अधिक से अधिक विचारहीन मनुष्य के विषय में भी सत्य है, बिना दर्शन के जीवन व्यतीत करना असंभव है।’’ - हक्सले

(क) पाश्चात्य दार्शनिकों द्वारा दी गई परिभाषाएं:-

1. ‘‘दर्शन ऐसा विज्ञान है, जो चरम तत्व के यथार्थ स्वरूप की जांच करता है।’’ - अरस्तू

("Philosophy is the science which investigates the nature of being as it is in itself." - (Aristotle)

2. ‘‘पदार्थो के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान ही दर्शन है।’’ – प्लेटो

("Philosophy aims at the knowledge of the eternal nature of things." - Plato)

3. ‘‘ज्ञान का विज्ञान ही दर्शन है।’’ – फिक्टे

("Philosophy is the science of knowledge." - Fichte)

4. ‘‘दर्शन विज्ञानों का विज्ञान है।’’ - कामटे

("Philosophy is the science of Science." - Comte)

5. ‘‘दर्शनशास्त्र विश्वव्यापी विज्ञान तथा सभी विज्ञानों के संकलन का नाम है।’’ – स्पेन्सर

("Philosophy is the synthesis of the science and universal science." - Spencer)

(ख) भारतीय दार्शनिकों एवं शैक्षिक चिन्तकों द्वारा दी गई परिभाषाएं:-

1. ‘‘दर्शन एक ऐसा दीपक है, जो सभी विधाओं को प्रकाशित करता है।’’

कौटिल्य के अनुसार-‘‘आन्वीक्षिकी विद्या’’ ही दर्शन है। दर्शन-

‘‘प्रदीपः सर्व विद्यानानुपायः सर्वकर्मणाम्।

आश्रमः सर्वधर्माणम् शश्वदान्वीक्षिकीमता।।’’ - अर्थशास्त्र, कौटिल्य

2. ‘‘दर्शन एक ठोस सिद्धान्त है, न कि अनुमान या कल्पना, इसे व्यवहार में लाकर व्यक्ति निर्धारित लक्ष्य

मार्ग प्रशस्त कर लेता है।’’ - डॉ. बलदेव उपाध्याय

3. ‘‘दर्शन के द्वारा प्रत्यक्षीकरण होता है। अर्थात् चाहे जितना ही सूक्ष्म क्यों न हो उसे दर्शन (दिव्य

चक्षुओं) से अनुकूल किया जा सकता है।’’ - डॉ. उमेंश मिश्र

4. ‘‘यथार्थता के स्वरूप का तार्किक विवेचन ही दर्शन है।’’ - डॉ. राधाकृष्णन

5. ‘‘दर्शन एक प्रयोग है जिसमें मानव व्यक्तित्व एवं सत्य उसकी विषय वस्तु होती है और उसको जानने

के लिए हम प्रमाण एकत्रित करते हैं।’’ - महात्मा गांधी

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

प्र. 1 भारतीय दर्शन का स्रोत क्या है ?

प्र. 2 तीन ऐसे दर्शनों के नाम बताईये जो वेदों को नहीं मानते।

प्र. 3 वेदो के बाद भारतीय दर्शन पर सर्वाधिक प्रभाव किसने डाला है ?

प्र. 4 नास्तिक से आप क्या समझते हैं ?

प्र. 5 ''अज्ञानवश एक ही वेद के अनेक वेद कर दिये गये हैं।'' यह कथन किसका है ?

8.4 शिक्षक के लिए शिक्षा दर्शन की उपादेयता -

जॉन डिवी के अनुसार, ''शिक्षा-दर्शन बने बनाये विचारों को व्यवहार की एक व्यवस्था पर लागू करना नहीं है, जिसमें पूर्णतया भिन्न उद्गम और प्रयोजन होते हैं। वह तो समकालीन सामाजिक जीवन की समस्याओं के विषय में सही मानसिक और नैतिक अभिवृत्तियों के निर्माण की समस्याओं से सम्बन्धित है। दर्शन की सबसे अधिक व्यापक परिभाषा जो दी जा सकती है, यह है कि वह अधिकतम सामान्य रूप में शिक्षा का सिद्धान्त है।'' इस प्रकार शिक्षक शिक्षा-दर्शन से शिक्षण सिद्धान्त प्राप्त करता है। शिक्षण प्रणालियों का भी शिक्षक के शिक्षा-दर्शन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। स्पेंन्सर के अनुसार ''केवल एक सच्चा दार्शनिक ही शिक्षा को व्यावहारिक रूप दे सकता है। वह विद्यार्थियों से कैसे व्यवहार करता है और उन्हें अपनी बात कैसे समझाता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि शिक्षार्थी उसके लिए क्या है।''

विभिन्न दार्शनिक व्यवस्थाओं में मानव प्रकृति की भिन्न-भिन्न व्यवस्था की गई है। अस्तु, शिक्षक का शिक्षा-दर्शन शिक्षण प्रणाली के प्रति उसकी अभिवृत्ति निर्धारित करता है। यह ठीक है कि दर्शन शिक्षक के विषय के ज्ञान की जगह नहीं ले सकता, किन्तु फिर भी वह शिक्षक के लिए नितान्त आवश्यक है। बर्ट्रेंड रसल के शब्दों में-''दर्शन शास्त्र का अध्ययन प्रश्नों के सुनिश्चित उत्तर प्राप्त करने के लिए नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि स्वयं प्रश्नों के लिए किया जाना चाहिए। क्योंकि ये प्रश्न संभावनाओं की हमारी अवधारणा को व्यापक बनाते हैं। हमारी बौद्धिक कल्पना को समृद्ध करते हैं और हठवादी सुनिश्चितता को कम करते हैं, जो कि कल्पना के विरूद्ध मस्तिष्क को बन्द कर देती है, बल्कि सर्वोपरि क्योंकि विश्व की महानता जिस पर दर्शन विचार करता है मस्तिष्क को भी महान और विश्व से एकीकरण के योग्य बना देती है जो कि उसके सर्वोच्च शुभ का निर्माण करता है।''

शिक्षक के लिए शिक्षा दर्शन का सबसे बड़ा योगदान शिक्षा के लक्ष्यों और आदर्शो को लेकर है। शिक्षा दर्शन के बिना अध्यापन के कार्य में शिक्षक का कोई प्रयोजन नहीं होगा। चाहे हम वर्तमान शिक्षा में विज्ञान के योगदान की कितनी भी प्रशंसा क्यों न करें, यह कार्य विज्ञान के द्वारा संभव नहीं है। वास्तव में वर्तमान विज्ञान केवल साधन देता है जबकि साध्य दर्शन शास्त्र से मिलते हैं।

शिक्षा दर्शन शिक्षा के पाठ्यक्रम को निर्धारित करने में शिक्षक की सहायता करता है। दार्शनिक की व्याख्या करते हुए प्लेटो ने कहा था- ''वह जो कि प्रत्येक प्रकार के ज्ञान में रूचि रखता है और जो कि सीखने के लिए जिज्ञासु हैं और कभी भी संतुष्ट नहीं है, उसे ही दार्शनिक कहना न्यायोचित है।'' दर्शनशास्त्र शिक्षा की परिस्थिति को संपूर्ण रूप में देखता है। उसका दृष्टिकोण सर्वांग है। वह संपूर्ण रूप में देखता है।'' अस्तु, वह सब प्रकार की एकांगिता का सही उपचार है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में एकांगिता की समस्या की आलोचना करते हुए ए.एम. श्लेजिंगर ने ठीक कहा है- ''हमें अनिवार्य रूप से एक समृद्ध भावात्मक जीवन की आवश्यकता है, जिसमें व्यक्ति और समुदाय में वास्तविक संबंधों की प्रतिछाया हो।''

वर्तमान काल में विश्व में पूर्व और पश्चिम के दो भिन्न दृष्टिकोण दिखलाई पड़ते हैं। ये दो भिन्न सांस्कृतिक दृष्टिकोण, दो भिन्न जीवन दर्शन उपस्थित करते हैं। मानव जाति ने विभिन्न देशकाल में मानव के लिए उपयुक्त जीवन की खोज में अनेक प्रयोग किये हैं। आधुनिक मनुष्य को चाहिए कि वह विभिन्न संस्कृतियों की बुद्धिमताओं का समन्वय करे। आदर्श शिक्षक को पूर्व और पश्चिम, दर्शन और विज्ञान का समन्वय करना चाहिए। प्रौद्योगिकी से भाराक्रान्त जटिल आधुनिक सभ्यता से मानव के बर्बरता की ओर लौट जाने का खतरा उत्पन्न हो गया है। आज मनुष्य को आणविक युग और उद्योगवाद से उत्पन्न समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। सब कहीं अव्यवस्था और हताशा दिखलाई पड़ती है। सब ओर से समस्याओं के सुलझाव उपस्थित किये जाते हैं। विज्ञान और अन्तर्राष्ट्रीय कानून असहाय दिखलाई पड़ते हैं। ऐसे समय में विचारशील व्यक्ति, धर्म, नैतिकता और आध्यात्मिकता की ओर देख रहे हैं। जैसा कि हाइनीमैन ने कहा है- '' हमारे सामने जो विकल्प है, वह इस प्रकार है: या तो मस्तिष्क की शक्ति समाप्त हो, मानव का पतन हो, उसकी बौद्धिक और आध्यात्मिक क्रिया में गिरावट आये जो कि अधिकाधिक यंत्रवत हो रही हैं और अंत में अत्यधिक केन्द्रीयकृत नियंत्रण वाले नये तानाशाही प्रशासन की दासता की स्थापना हो, अथवा एक आध्यात्मिक क्रान्ति हो, मानव इस तथ्य की ओर जागे कि अंत में वह असीम आध्यात्मिक शक्तियों वाला एक आध्यात्मिक प्राणी है और अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने और तथाकथित विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति को एक जनतंत्रीय व्यवस्था में नैतिक और आध्यात्मिक लक्ष्य के अधीन करने का कठोर निर्णय करे।''

अस्तु, शिक्षक के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता उसका शिक्षा दर्शन है। सांस्कृतिक अथवा किसी भी अन्य प्रकार की एकांगिता का एकमात्र उपचार दार्शनिक दृष्टिकोण है। यह दार्शनिक दृष्टिकोण उसके सर्वांग रूप में श्री अरविन्द के इन शब्दों में उपस्थित किया गया है-''हृदय और मस्तिष्क सार्वभौम देवता हैं और न तो हृदय के बिना मस्तिष्क और न मस्तिष्क के बिना हृदय मानव आदर्श हो सकता है।''

दर्शन शास्त्र की उपादयेता न केवल आदर्शो, लक्ष्यों और पाठ्यक्रम को निर्धारित करने में है बल्कि शिक्षा के व्यवहार के नित्य प्रति के कार्यक्रम में हैं। एडलर के शब्दों में- ''इस प्रकार हम यह देखना शुरू करते हैं कि न केवल शिक्षा दर्शन का विशिष्ट क्षेत्र, प्रश्नों का उत्तर देते हुए विज्ञान द्वारा अनुत्तरीय है बल्कि शिक्षा दर्शन की आवश्यकता है क्योंकि उसके बिना मौलिक व्यवहारिक सिद्धान्तों का निश्चित निर्णय संभव नहीं है जो कि शैक्षिक व्यवहार के नित्य प्रति की नीतियों के अंतर्गत होता है।''

के.एल. श्रीमाली के शब्दों में-''इस प्रकार न केवल शिक्षक को एक शिक्षा-दर्शन रखना चाहिए, उसे अपने विद्यार्थियों में एक जीवन दर्शन विकसित करने के लिए भी तैयार होना चाहिए।' शिक्षक शिक्षार्थियों को जानकारी और ज्ञान प्रदान करता है, किन्तु उसकी व्यक्तिगत छाप उसके जीवन दर्शन के रूप में ही पड़ती है। महान शिक्षकों ने संसार को जानकारी नहीं बल्कि जीवन दर्शन प्रदान किये हैं।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

प्र. 1 ''वास्तविक शिक्षा का संचालन वास्तविक दार्शनिक ही कर सकता है'' यह कथन किसका है ?

प्र. 2 ''दर्शन की सहायता के बिना शिक्षा के उद्देश्य कभी भी पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं हो सकते हैं।'' यह कथन किसका है?

प्र. 3 ''हृदय और मस्तिष्क सार्वभौम देवता हैं, न तो हृदय के बिना मस्तिष्क और न मस्तिष्क के बिना हृदय मानव आदर्श हो सकता है।'' यह कथन किसका है ?

प्र. 4 ''जिस प्रकार शिक्षा दर्शन पर आधारित है, उसी प्रकार दर्शन शिक्षा पर आधारित है।'' यह कथन किसका है ?

प्र. 5 ''किसी भी मनुष्य के बारे में सबसे अधिक व्यावहारिक और सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात विश्व का उसका दृष्टिकोण, उसका दर्शन है।'' यह कथन किसका है ?

भाग-तीन **(PART- III)**

8.5 दर्शन के कार्य (FUNCTIONS OF PHILOSOPHY)

दर्शन न के कार्यों पर दृष्टिपात करने पर हमें निम्नलिखित कार्य महत्वपूर्ण प्रतीत होते हैं:-

1. दर्शन व्यक्ति की जिज्ञासा की तृप्ति करके ज्ञान प्राप्त करने में सहायता प्रदान करता है।

2. यह ध्यान को केन्द्रित करने में व्यक्ति की सहायता करता है। सांसारिक इच्छाएं एवं इन्द्रियजन्य कामनाएं संयम

प्राणायाम, धारणा द्वारा चित्तवष्तियों का निरोध करना संभव है और इस कार्य में दर्शन सहायता करता है।

3. यह षब्दों और अर्थो का विष्लेशण करके कार्य की सही दिशा निष्चित करता है।

4. यह वास्तविक सत्य की खोज करने का प्रयत्न करता है। विभिन्न विज्ञानों द्वारा प्राप्त सत्यों में अन्तर्विरोधों को यह दूर करता है।

5. यह मानव-जीवन के आदि-अंत पर विचार करके जीवन को सोद्देश्य बनाता है।

6. जीव, जगत्, सत्, चित् , आनन्द, आत्मन्, परमात्मन्, मनस् आदि से संम्बद्ध प्रश्नो का हल ढूंढने का यह प्रयत्न करता है।

7. जीवन की विभिन्नताओं और विसंगतियों को सामंजस्य में लाने का यह प्रयास करता है।

8. यह तथ्यों का मात्र संग्रह नद करके उनमें व्याप्त संबंधों को देखता है और प्रत्येक अनुभवगम्य वस्तु की आत्मा को देखने का प्रयास करता है।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

प्र. 1 ''पदार्थो के यथार्थ स्वरूप् का ज्ञान ही दर्शन है।'' यह परिभाशा किसकी है ?

प्र. 2 ''ज्ञान का विज्ञान ही दर्शन हैं।'' यह परिभाशा किसकी है ?

प्र. 3 ''यथार्थता के स्वरूप् का तार्किक विवेचन ही दर्षन है।'' यह परिभाषा किसकी है ?

प्र. 4 मूल्य शास्त्र को मुख्यतः कितने भागों में विभाजित किया जाता है ? उनके नाम लिखिए।

प्र. 5 सूत्र काल को दूसरे किसन नाम से जाना जाता है ?

8.6 सारांश (SUMMARY)

ऐतिहासिक दृष्टि से वैदिक युग भारतीय दर्शन का प्राचीनतम युग है। उस काल में प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता एवं अल्प जनसंख्या के कारण भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का कार्य सरल था। अतः तपोवनों में महान् आध्यात्मिक संस्कृति का उदय हो सका। ऋग्वेद हमें यह संदेश देता है कि भौतिक वातावरण से दूर रहकर और अन्तर्मुखी प्रकृति अपनाने से ही परम शान्ति मिल सकती है। अथर्ववेद लौकिक सामग्री से भरा हुआ है और सामवेद में संगीत प्रमुख तत्व है। यजुर्वेद में कर्मकाण्ड की प्रधानता है। वैदिक साहित्य मूलरूपेण ऋग्वेद का विकसित रूप है और परवर्ती संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यकों एवं उपनिषदों का काल उत्तर वैदिक काल के रूप में जाना जाता है। समग्र

वैदिक वांड.मय परस्पर सम्बद्ध होते हुए भी वर्ण्यवस्तु में भिन्न होता गया है। पूर्व वैदिक काल की अपेक्षा उत्तर वैदिक काल में ब्रह्म की खोज एवं आत्म तत्व का अन्वेषण प्रमुख लक्ष्य था।

उपनिषदों के पश्चात् ब्राह्मण साहित्य का एक प्रमुख भाग सूत्र रूप में मिलता है। इसीलिए इस काल को सूत्रकाल कहा जा सकता है।

सूत्रकाल को शास्त्रीय युग भी कहा जा सकता है, क्योंकि इस काल में विभिन्न शास्त्रीय साहित्यों का निर्माण हुआ और उनके दर्शनों का उदय हुआ, जिसमें षड्दर्शनों की परम्परा विशेष रूप से उल्लेखनीय है। षड्दर्शनों में सांख्य योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा है।

सांख्य दर्शन जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है, योग उसी का व्यावहारिक रूप प्रस्तुत करता है। अतः सांख्य योग दर्शन साथ-साथ चलते हैं। सांख्य का अर्थ है सम्यक् ख्याति का यथार्थ ज्ञान। कपिल की यह धारणा है कि प्रकृति और पुरूष दो स्वाधीन सत्ताएं हैं, जिनमें संयोग की क्षमता है और इसी संयोग से प्रकृति के गुणों का सांमजस्य टूटता है और सृष्टि का निर्माण होता है।

जैमिनि द्वारा प्रस्तुत पूर्व मीमांसा दर्शन पूर्णरूपेण वेदाश्रित है। यह धर्म एवं नीति-परायण अधिक है। ईश्वर को स्वीकार करते हुए भी पूर्व मीमांसक बहुदेववादी हैं। स्वर्ग, नरक, कर्म, नियम, पुनर्जन्म, आत्म की नित्यता, अनेक देवों की सत्ता में इनका विश्वास है। उत्तर मीमांसा को वेदान्त भी कहते हैं और यह वेदों के अंतिम भाग उपनिषदों पर आधारित हैं। इसमें बहुदेववाद का विरोध है। वेदान्त अनुयायियों की एक लम्बी श्रृंखला है जिसमें शंकर, रामानुज, मध्य, निम्बार्क, वल्लभ आदि प्रमुख हैं। वादरायण द्वारा प्रस्तुत ब्रह्मसूत्र पर ही मूल रूप से वेदान्त आधारित है। 'सर्व खलु इदं ब्रह्म' समग्र वेदान्त दर्शन का निचोड़ है। सृष्टि के मूल में एक अखण्ड, अनन्त, अनादि चेतन शक्ति है और समस्त सृष्टि उसी का आभास (शंकर) या परिणाम (रामानुज) हैं वेदान्त दर्शन पूर्णतः अध्यात्मवादी है।

8.7 शब्दावली (GLOSSARY)

1. पूर्व मीमांसा:- पूर्व मीमांसा दर्शन पूर्णरूपेण वेदाश्रित है। यह धर्म एवं नीति-परायण अधिक है। ईश्वर को स्वीकार करते हुए भी पूर्व मीमांसक बहुदेववादी हैं। स्वर्ग, नरक, कर्म, नियम, पुनर्जन्म, आत्म की नित्यता, अनेक देवों की सत्ता में इनका विश्वास है।

2. उत्तर मीमांसा:- उत्तर मीमांसा को वेदान्त भी कहते हैं और यह वेदों के अंतिम भाग उपनिषदों पर आधारित हैं। इसमें बहुदेववाद का विरोध है।

8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)

भाग-एक **(PART- I)**

उ. 1 भारतीय दर्शन का स्रोत वेद है।

उ. 2 चार्वाक, बौद्ध तथा जैन दर्शन वेदों को नहीं मानते।

उ. 3 षड्दर्शन।

.उ. 4 नास्तिक से हमारा अभिप्राय जो परलोक में विश्वास नहीं करता।

उ. 5 सनत्सुजात के अनुसार।

भाग-दो **(PART-II)**

उ. 1 दशम मण्डल के 121वें सूक्त में।

उ. 2 निष्काम कर्म है।

उ. 3 गीता में ज्ञान, भक्ति और कर्म तीन मार्ग की महिमा बताई गई है।

उ. 4 यह कथन चार्वाक दर्शन का है।

उ. 5 वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी-चार तत्व, जैन दर्शन।

भाग-तीन **(PART-III)**

उ. 1 प्लेटो की।

उ. 2 फिस्टो की।

उ. 3 डॉ. राधाकृष्णन की।

उ. 4 मूल्य शास्त्र को तीन भागों में- 1. तर्क शास्त्र, 2. नीति शास्त्र एवं 3. सौन्दर्य शास्त्र

उ. 5 सूत्रकाल को दूसरे शास्त्रीय नाम से भी जाना जाता है।

8.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (BIBLIOGRAPHY)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, षिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेषनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) षिक्षक के सामाजिक एवं दार्षनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाषन, नई दिल्ली।

6. शर्मा, रामनाथ व शर्मा राजेन्द्रकुमार (2006) एटलांटिक पब्लिषर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

8.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (USEFUL BOOKS)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग् हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

8.11 निबन्धात्मक प्रश्न (ESSAY TYPE QUESTIONS)

प्र. 1. दर्शन का अर्थ बताईये तथा दर्शन की प्रकृति की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

प्र. 2. दर्शन की परिभाषाएं लिखिए तथा दर्शन की उपयोगिता लिखिए।

प्र. 3. दर्शन की आवश्यकता तथा क्षेत्र का विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्र. 4. शिक्षा-दर्शन का शिक्षक के लिए क्या उपयोग है ? विस्तृत व्याख्या कीजिए।

प्र. 5. शिक्षा-दर्शन के महत्व का विवेचन कीजिए।

प्र. 6. एक अध्यापक को शिक्षा दर्शन को पढ़ना चाहिए। क्या शिक्षा मनोविज्ञान पर्याप्त नहीं है ?

इकाई 9 आदर्शवाद और शिक्षा: उद्देश्य, प्रक्रिया, पाठ्यक्रम, अनुशासन व अध्यापक की भूमिका (Idealism and Education: Aims, Process, Curriculum, Discipline and Role of Teacher)

9.1 प्रस्तावना Introduction
9.2 उद्देश्य Objectives
भाग-एक
9.3 आदर्शवाद और शिक्षा Idealism and Education
9.3.1 आदर्शवाद का अर्थ Meaning of Idealism
9.3.2 आदर्शवाद की परिभाषाएं Definition of Idealism
9.3.3 आदर्शवाद प्रक्रिया (Idealism process)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-दो
9.4 शिक्षा के उद्देश्य Aims of Education
9.4.1 आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्य Idealism and Aims of Education
9.4.2 आदर्शवाद और पाठ्यक्रम Idealism and Curriculum
9.4.3 आदर्शवाद और अनुशासन Idealism and discipline
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-तीन
9.5 आदर्शवाद व शिक्षक Idealism and Teacher
9.5.1 आदर्शवाद एवं बालक Idealism and Child
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
9.6 सारांश Summary
9.7 कठिन शब्द difficult Words
9.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर Answer of Practice Question
9.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची Bibliography
9.10 उपयोगी सहायक ग्रन्थ Useful books
9.11 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न Long Answer Type Questions

9.1 प्रस्तावना Introduction

मानव सभ्यता के उदभव और विकास के समय से ही आदर्शवादी विचारधारा का किसी न किसी रूप में अस्तित्व रहा है। आधुनिक काल में जब मानव ने चिन्तन एवं मनन आरम्भ किया तब से आदर्शवादी विचारधारा निरन्तर पुष्पित एवं पल्लवित होती है। आदर्शवादी विचारधारा जीवन की निश्चितताओं से जुड़ी हुई है। इसका आशय है-जीवन के लिए निश्चित आदर्शो व मूल्यों का निर्धारण कर मनुष्य को उनके अनुकरण हेतु निर्देशित करना। यह विचारधारा भौतिक वस्तुओं की अपेक्षा विचारों पर अधिक बल देती है। आदर्शवादी दर्शन का प्रतिपादन सुकरात, प्लेटो, डेकॉर्टो, स्पनोसा, वर्कलकान्ट, फिटशे, रोलिग, हीगल, ग्रीन जेन्टाइल आदि अनेक पाश्चात्य तथा वेदों व उपनिषदों के प्रणेता महर्षियों से लेकर अरविन्द घोष तक अनेक पूर्वी दार्शनिकों ने किया है।

9.2 उद्देश्य Objectives

i आदर्शवाद का ज्ञान प्राप्त करा सकेंगे।

ii आदर्शवाद का अर्थ, परिभाषाएं व जीवन दर्शन के रूप में आदर्शवाद को समझ सकेंगे।

iii आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्यों को जान सकेंगे।

iv आदर्शवाद में पाठ्यक्रम व शिक्षण पद्धति का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

v आदर्शवाद में शिक्षक व बालक के गुणों को समझ सकेंगे।

भाग-एक

9.3 आदर्शवाद और शिक्षा Idealism and Education

आदर्शवाद दार्शनिक जगत में प्राचीनतम विचारधाराओं में से है। एडम्स के शब्दों में ''आदर्शवाद एक अथवा दूसरे रूप में दर्शन के समस्त इतिहास में व्याप्त है। आदर्शवाद का उदगम स्वयं मानव प्रकृति में है। आध्यात्म शास्त्रीय दृष्टि से आध्यात्मवाद है। अर्थात् इसके अनुसार विश्व में परम सद्वस्तु की प्रकृति आध्यात्मिक है। समस्त विश्व आत्मा या मनस से अवस्थित है। प्रमाण शास्त्र की दृष्टि से आदर्शवाद प्रत्यवाद है। अर्थात् इसके अनुसार विचार ही सत्य है। यह प्रत्यवाद प्राचीन यूनानी दार्शनिक प्लेटो के विचारों में मिलता है। जिसके अनुसार विचारों का जगत वस्तुजगत से कहीं अधिक यथार्थ है। मूल्यात्मक दृष्टि से इस दर्शन को आदर्शवाद कहा जाता है।

आदर्शवाद के दर्शन को संक्षेप में उपस्थित करते हुए जी.टी. डब्ल्यू पैट्रिक ने लिखा है, ''आदर्शवादी यह मानने से इन्कार करते हैं कि जगत् एक विशाल यंत्र है। वे हमारे जगत् की व्याख्या में जड़तत्व, यंत्रवाद और ऊर्जा के संरक्षण को सर्वोच्च महत्व से इन्कार करते हैं। वे अनुभव करते हैं कि किसी न किसी प्रकार से कुछ विज्ञान जैसे मनोविज्ञान, तर्कशास्त्र, नीतिशास्त्र, सौन्दर्यशास्त्र आदि का आधारभूत और अंतरंग चीजों से संबंध है कि वे प्रकृति के रहस्यों को समझने के लिए वैसी ही कुंजी है जैसे कि भौतिकशास्त्र और रसायनशास्त्र है। वे यह विश्वास करते हैं कि जगत का एक अर्थ है एक प्रयोजन है। शायद एक लक्ष्य है। अर्थात् जगत के हृदय और मानव की आत्मा में एक प्रकार का आन्तरिक समन्वय है, जिसमें कि मानवबुद्धि प्रकृति के बाहरी आवरण को छेद सकती है। आदर्शवाद की इस व्याख्या में जड़वाद के विरूद्ध आदर्शवाद के लक्षण दिखाई बतलाए गये हैं।

कोई भी दार्शनिक सिद्धान्त दो प्रकार से समझा जा सकता है- एक तो उन सिद्धान्तों को समझकर, जिनका कि वह प्रतिपादन करता है और दूसरे उन बातों को जानकर जिनका कि वह निराकरण करता है। क्योंकि प्रत्येक दर्शन कुछ सिद्धान्तों के समर्थन और कुछ बातों के निराकरण पर आधारित होता है। इस दृष्टि से आदर्शवाद की स्थिति की व्याख्या करते हुए डब्लू.ई. हाकिग ने लिखा है कि आदर्शवाद के अनुसार प्रकृति आत्मनिर्भर नहीं है। वह स्वतंत्र दिखलाई पड़ती है। किन्तु वास्तव में वह मनस् पर आधारित है। दूसरी ओर मनस् आत्मा या प्रत्यय ही वास्तविक सद्वस्तु है।

9.3.1 आदर्शवाद का अर्थ Meaning of Idealism

आदर्शवाद, जिसे हम अंग्रेजी में (Idealism) कहते हैं, दो शब्दों से मिलकर बना है- Ideal+ism लेकिन कुछ विचारक यह मानते हैं कि इसमें दो शाब्द हैं - Ideal+ism इसमें स् सुविधा के लिए जोड़ दिया गया है। वास्तव में यदि देखा जाये तो इसे Idea या विचार से ही उत्पन्न होना माना जाना चाहिए। चूंकि इसके प्रवर्तक दार्शनिक विचार की चिरन्तन सत्ता में विश्वास करते हैं, इस कारण इसे विचारधारा का प्रत्ययवाद की संज्ञा दी जाती है। परन्तु प्रचलन में हम आदर्शवाद का प्रयोग ही करते हैं। यह दर्शन वस्तु की अपेक्षा विचारों, भावों तथा आदर्शो को महत्व देते हुए यह स्वीकार करता है कि जीवन का लक्ष्य आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति तथा आत्मा का विकास है। इसी कारण यह आध्यात्मिक जगत को उत्कृष्ट मानता है और उसे ही सत्य व यथार्थ के रूप में स्वीकार करता है।

9.3.2 आदर्शवाद की परिभाषाएं Definition of Idealism

रास (Ross) . ''आदर्शवादियों के अनेक रूप हैं, किन्तु सबका सार यह है कि मन या आत्मा ही इस जगत का पदार्थ है और मानसिक स्वरूप सत्य है।'' (Idealism Philosophy takes many and varied from, but the postulate underlying all is that mind or sprit is essential word stuff that the true reality is of a Mental character)

ब्रूवेकर (Brubacher) ''आदर्शवादियों के अनुसार- इस जगत को समझने के लिए मन केन्द्रीय बिन्दु है। इस जगत को समझने हेतु मन की क्रियाशीलता से बढ़कर उनके लिए अन्य कोई वास्तविकता नहीं है।'' (The Idealism point out that It is mind that is central in understanding the world . To them nothing gives greater sense of reality then the activity of mind lugged in typing to comprehended its words.

हैण्डरसन (Handerson) ''आदर्शवाद मनुष्य के आध्यात्मिक पक्ष पर बल देता है, क्योंकि आदर्शवादियों के लिए आध्यात्मिक मूल्य जीवन के तथा मनुष्य के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू हैं। एक तत्वज्ञानी आदर्शवादी का विश्वास है कि मनुष्य का सीमित मन असीमित मन से पैदा होता है। व्यक्ति और जगत दोनों बुद्धि की अभिव्यक्ति हैं और भौतिक जगत की व्याख्या मन से की जा सकती है।''

डी.एम.दत्ता (D.M.datta) ''आदर्शवाद वह सिद्धान्त है जो अन्तिम सत्ता आध्यात्मिकता को मानता है।''

राजन के अनुसार . ''आदर्शवादियों का विश्वास है कि ब्रह्माण्ड की अपनी बुद्धि एवं इच्छा है और सब भौतिक वस्तुओं कों उनके पीछे विद्यमान मन द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।''

9.3.3 आदर्शवाद प्रक्रिया (Idealism process)

आदर्शवाद जीवन की एक प्राचीन विचारधारा है। आज भी इस बात का पर्याप्त सम्मान है। जीवन दर्शन के रूप में इसने विश्व के उच्च कोटि के दार्शनिकों को आकृष्ट किया है।

आदर्शवाद विकास में विश्वास करता है, किन्तु उसका विकासवाद प्रकृतिवादी विकासवाद से भिन्न है। आदर्शवाद के अनुसार विकास का अन्तिम लक्ष्य आत्मा की प्राप्ति ही है न कि निचले स्तर से ऊंचे स्तर के प्राणी में विकास करना। आदर्शवाद के अनुसार पदार्थ अन्तिम सत्य नहीं है। पदार्थ का प्रत्यय वास्तविक है, पदार्थ का भौतिक रूप असत्य है। भौतिक जगत नश्वर है, परिवर्तनशील है। सत्य को स्थायी एवं अपरिवर्तनशील होना चाहिए। अतः सत्य विचारात्मक एवं मानसिक है क्योंकि विचार एवं प्रत्यय में स्थायित्व होता है। इस आधार पर शरीर नश्वर है, अतः असत्य है, आत्मा अनश्वर सत्य है। अंतिम सत्य का ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान है, शेष तो अज्ञान अथवा ज्ञानाभास है। यह ज्ञान तर्कजन्य है, चिन्तन एवं मनन तथा अंतदृष्टि का परिणाम है। यह इन्द्रियों का विषय नहीं है। आदर्शवाद अनेकता में एकता का दर्शन करता है। सत्य मानसिक है। सृष्टि के अनेक रूपों में उस एक चरम सत्य को देखना ही अनेकता में एकता का दर्शन करना है।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र.1 निम्न परिभाषा किस विद्वान की है ?

''आदर्शवाद एक अथवा दूसरे रूप में दर्शन के समस्त इतिहास में व्याप्त है।''

(अ) एडम्स (ब) जी.टी. डब्ल्यू पैट्रिक (स) डब्ल्यू.ई. हाकिग (द) हटसन

प्र.2 आदर्शवाद का दूसरा नाम है-

(अ) आत्मवाद (ब) विचारधारा का प्रत्यवाद (स) प्रकृतिवाद (द) प्रमाण-शास्त्र

प्र.3 शरीर नश्वर है अतः असत्य है, आत्मा अनश्वर अतः असत्य है। यह विचारधारा है-

(अ) प्रकृतिवाद (ब) प्रयोजनवाद (स) अस्तित्ववाद (द) आदर्शवाद

प्र.4 प्रकृति अपने आप में अपूर्ण है। वह स्वयं किसी सत्य पर आश्रित है। अतः प्रकृति का ज्ञान सम्पूर्ण

ज्ञान नहीं है। यह विचारधारा है-

(अ) प्रकृतिवादी (ब) आदर्शवादी (स) प्रयोजनवादी (द) अस्तित्ववादी

प्र.5 निम्न में कौन विचारक आदर्शवादी थे ?

(अ) सुकरात (ब) लॉक (स) गैलीलियो (द) हांकिग

भाग-दो

9.4 शिक्षा के उद्देश्य (Objective of Education)

आदर्शवादी दार्शनिकों के मतानुसार मानव के जीवन का लक्ष्य, मोक्ष की प्राप्ति, आध्यात्मिक विकास और साक्षात्मक करना या उसे जानना है। इस कार्य के लिए मानव को चार चरणों पर सफलता प्राप्त करनी होती है। प्रथम चरण पर उसे अपने प्राकृतिक 'स्व' का विकास करना होता है। इसके अंतर्गत मनुष्य का शारीरिक विकास आता है। दूसरे चरण पर उसे अपने सामाजिक 'स्व' का विकास करना होता है। इसके अंतर्गत सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, चारित्रिक एवं नागरिकता का विकास आता है। तीसरे चरण पर उसे अपने मानसिक 'स्व' का विकास करना होता है। इसके अंतर्गत मानसिक, बौद्धिक एवं विवेक शक्ति का विकास करना होता है। और चौथे तथा अंतिम

चरण पर उसे अपने आध्यात्मिक 'स्व' का विकास करना होता है। इसके अंतर्गत आध्यात्मिक चेतना का विकास आता है। आदर्शवादी इन्हीं सबको शिक्षा के उद्देश्य निश्चित करते हैं।

9.4.1 आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्य (Idealism and Objectives of Education)

I आत्मनुभूति का विकास (Development of self –realization) - आदर्शवादी विचारधारा यह मानती है कि प्रकृति से परे यदि कोई चेतन सत्ता के अनुरूप है तो वह है 'मनुष्य'। इस कारण विश्व व्याप्त चेतन सत्ता की अनुभूति मनुष्य तब तक नहीं कर सकता जब तक उसके अंदर व्याप्त चैतन्यता का विकास न हो। इस कारण शिक्षा का सर्वोच्च कार्य यह है कि वह मनुष्य को इतना सक्षम बनाये कि वह अपने वास्तविक स्वरूप को पहचाने व उसकी अनुभूति कर सके। इस आत्मानुभूति के प्रमुख रूप से चार सोपान होते हैं:-

4. आध्यात्मिक 'स्व' (spiritual self)

3. बौद्धिक 'स्व' Intellectual self

2. सामाजिक 'स्व' (Social self)

1. शारीरिक व जैविकीय (Physical Self)

शारीरिक 'स्व' आत्मानुभूति का निम्नतम सोपान है, जिसे प्रकृतिवादी आत्माभिव्यक्ति (Self expression) संज्ञा देते हैं। सामाजिक 'स्व' को अर्थ क्रियावादी महत्व देता है, इसमें व्यक्ति सामाजिक हित की परिकल्पना करता है व सामाजिक कल्याण हेतु व्यक्तिगत स्वार्थो का परित्याग कर देता है। बौद्धिक अनुभूति के स्तर पर व्यक्ति विवेक द्वारा 'स्व' की अनुभूति करता है व सामाजिक नैतिकता से ऊपर उठकर सद्-असद् में भेद कर सकता है और उसका आचरण चिन्तन तथा विश्वास विवेकपूर्ण हो जाता है। आध्यात्मिक 'स्व' स्वानुभूति का सर्वोच्च स्तर है जहां व्यक्ति गुणों को अपने व्यक्तित्व में अंगीकृत सहज प्रक्रिया द्वारा ही कर लेता है व अपने अंदर विश्वात्मा का तादाम्य करने लगता है। इस विश्वात्मा को हम तीन रूपों में अभिव्यक्त करते हैं:- सत्य, शिव व सुन्दर। आदर्शवादी जब आत्मानुभूति के लिए शिक्षा देने की बात करते हैं तो उनका एक ही लक्ष्य होता है, ''अपने आपको पहचानो'' (To Know Thyself)

Ii आध्यात्मिक मूल्यों का विकास (Development of Spiritual Values) - आदर्शवादी विचारधारा भौतिक जगत की अपेक्षाकृत आध्यात्मिक जगत को महत्वपूर्ण मानती है। अतः शिक्षा के उद्देश्यों में भी बालक के आध्यात्मिक विकास को महत्व देते हैं। यह मनुष्य को एक नैतिक प्राणी के रूप में अवलोकित करते हैं व शिक्षा का उद्देश्य चरित्र निर्माण को मानते हैं। वह 'सत्यं शिवं

सुन्दरं' के मूल्यों का विकास करते हुए इस बात की भी चर्चा करते हैं कि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक में आध्यात्मिक दृष्टि से विकास करना है।

Iii बालक के व्यक्तित्व का उन्नयन (To Exalt Child's Personality) - बोगोस्लोवस्की के अनुसार-'' हमारा उद्देश्य छात्रों को इस योग्य बनाना है कि वे सम्पन्न तथा सारयुक्त जीवन बीता सकें , सर्वांगीण तथा रंगीन व्यक्तित्व का निर्माण कर सकें, सुखी रहने के उल्लास का उपभोग कर सकें। यदि तकलीफ आये तो गरिमा एवं लाभ के साथ उनका सामना कर सकें तथा इस उच्च जीवन को जीने में दूसरे लोगों की सहायता कर सकें''।

व्यक्तित्व के उन्नयन की चर्चा करते हुए प्लेटो व रॉस भी यह मानते हैं कि शिक्षा के द्वारा मानव व्यक्तित्व को पूर्णता प्राप्त की जानी चाहिए और साथ ही उसके व्यक्तित्व का उन्नयन होना चाहिए।

Iv अनेकता में एकता के दर्शन (To Establish Unity in Diversity) - आदर्शवाद इस विचारधारा का समर्थन करते हुए इस बात पर बल देता है कि शिक्षा का उद्देश्य बालक को इस दृष्टि से समर्थ बनाना होना चाहिए कि वह संसार में विद्यमान भिन्न-भिन्न बातों को एकता के सूत्र में बांध सके अर्थात् बालक के अंदर यह समझ उत्पन्न करनी चाहिए कि वह इस संसार के संचालन करने वाली एक परम सत्ता है जो ईश्वर के नाम से जानी जाती है और यह ईश्वर की सत्ता जगत के सभी प्राणियों का संचालन करती है। इस ईश्वरीय सत्ता की अनुभूति कराना ही शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए। इसकी अनुभूति होने पर ही व्यक्ति इस संसार के साथ तादात्म्य स्थापित कर सकता है व व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान कर सकता है।

V सभ्यता एवं संस्कृति का विकास Development of Culture and Civilization -

आदर्शवाद यह मानता है कि व्यक्ति जिस समाज का सदस्य है, उस समाज की संस्कृति से उसका परिचय होना परम आवश्यक है। साथ ही बालक यदि समाज को जीवित रखना चाहता है तो उसे समाज की धरोहर के रूप में जो सभ्यता व संस्कृति प्राप्त होती है, उसकी भी रक्षा करनी चाहिए। सभ्यता व संस्कृति तो वह आधार प्रस्तुत करती है जिसके द्वारा समाज का विकास संभव होता है। आदर्शवाद व्यक्ति की अपेक्षा समाज को महत्व देता है। इसी कारण वह शिक्षा का उद्देश्य सभ्यता व संस्कृति का विकास करना मानते हैं। रस्क का विचार है कि ''सांस्कृतिक वातावरण मानव का स्वरचित वातावरण है अथवा यह मनुष्य की सृजनात्मक क्रिया का परिणाम है जिसकी रक्षा व विकास करना शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।'' (Culture Environment is an environment of man's creative activity. The aim of idealistic education is the preservation as well as environment of Culture. Rusk)

vi वस्तु की अपेक्षा विचारों का महत्व (Idea are Important than Objective) - आदर्शवाद यह मानता है कि इस संसार में पदार्थ नाशवान है व विचार अमर। विचार सत्य, वास्तविक व अपरिवर्तनशील है। विचार ही मनुष्य को ज्ञान प्रदान करने का माध्यम है। यह संसार मनुष्य के विचारों में ही निहित होता है। वह यह मानते हैं कि यह जगत यंत्रवत् नहीं है। चूंकि इस जगत में विद्यमान वस्तुओं का जन्म मानसिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप ही होता है। इनका विचार है कि ''यह विश्व विचार के समान है, यंत्रवत् नही। (Universe is like a thought than a machine)

vii जड़ प्रकृति की अपेक्षा मनुष्य का महत्व (Man is Important then Nature) -

आदर्शवादी मनुष्य का स्थान ईश्वर से थोड़ा ही नीचा मानते हैं। (Man is little lower than angels) इनका विचार है कि मनुष्य इतना सक्षम होता है कि वह आध्यात्मिक जगत का अनुभव कर सके व ईश्वर से अपना तादात्म्य स्थापित कर सके या उसकी अनुभूति कर सके। इस कारण वह जड़ प्रकृति से बहुत महत्वपूर्ण है। वह यह भी मानते हैं कि मनुष्य बुद्धिपूर्ण व विवेकपूर्ण प्राणी है और बुद्धि ही मनुष्य के विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों का आधार बनती है, जिससे मानव अपने आपको पशुवत् गुणों से ऊंचा उठा लेता है।

आदर्शवादी विचारधारा ने मुख्यतया शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा की है, परन्तु इन्होंने शिक्षा के अन्य पक्षों पर भी थोड़ा प्रकाश डाला है, उनकी उपेक्षा नहीं की है। अब हम इस बात की चर्चा करेंगे कि आदर्शवाद ने पाठ्यक्रम, पाठन विधि, शिक्षक, अनुशासन आदि के संबंध में क्या विचार दिये हैं।

9.4.2 आदर्शवाद और पाठ्यक्रम (Idealism and Curriculum)

अब प्रश्न उठता है कि उपर्युक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए पाठ्यक्रम किस प्रकार का होना चाहिए? छात्र जिस प्रकार के वातावरण में जन्म लेता है उसी प्रकार के वातावरण में रहने का आदी हो जाता है। यह निश्चित है कि हम पाठ्यक्रम की योजना बनाते समय इस वातावरण की उपेक्षा नहीं कर सकते। संभव है कि हम पाठ्यक्रम में ऐसी सूचनाओं एवं क्रियाओं को भी स्थान दें जिन्हें हम पूर्णतः सत्य नहीं मानते। आदर्शवाद भौतिक जगत को अंतिम सत्य नहीं मानता किन्तु सत्य का आभास तो मानता ही है। सत्य को इसी भौतिक जगत में रहकर एवं भौतिक वातावरण के सहयोग से ही आदर्शवाद चरम सत्य को प्राप्त करने का परामर्श देता है। मनुष्य का आध्यात्मिक वातावरण अधिक महत्वपूर्ण होता है किन्तु प्राकृतिक वातावरण की उपेक्षा नहीं की जा सकती। व्यक्ति शरीर और मन का संयोग है जिसमें मन अधिक महत्वपूर्ण है। किन्तु यदि शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति न की गयी तो मानसिक क्रिया भी दुःसाध्य हो जायेगी। व्यक्ति आत्मानुभूति की ओर तभी आगे बढ़ सकता है जबकि उसने शारीरिक आवश्यकताओं को वश में कर लिया हो। अतः भौतिक जगत की जानकारी भी आवश्यक है। छात्र को प्राकृतिक वातावरण का ज्ञान होना चाहिए। इसके साथ ही

आध्यात्मिक वातावरण पर विशेष दृष्टि होनी चाहिए। आध्यात्मिक वातावरण में व्यक्ति के बौद्धिक, सौन्दर्यानुभूति संबंधी, नैतिक एवं धार्मिक सभी क्रिया-कलाप आते हैं। उसका ज्ञान, कला, नीति तथा धर्म इसी आध्यात्मिक वातावरण के अंतर्गत हैं। समाज की प्राकृतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार की आवश्यकताएं हैं। प्राकृतिक वातावरण से मानव समाज प्रभावित होता रहता है। उसने कला, धर्म एवं नीति आदि का विकास करके आध्यात्मिक वातावरण का सृजन किया है। समाज अपने ज्ञान को स्थायी बनाना चाहता है कि उसके भावी सदस्य प्राकृतिक विषयों एवं आध्यात्मिक विषयों का ज्ञान प्राप्त करें। वह यह नहीं चाहता कि समाज में एक प्रकार के ही व्यक्ति हों। अतः समाज एवं व्यक्ति दोनों की दृष्टि से ही पाठ्यक्रम में प्राकृतिक एवं आध्यात्मिक वातावरण के ज्ञान का समावेश होना चाहिए। व्यक्ति आत्मानुभूति भी तभी कर सकता है जब दोनों प्रकार की आवश्यकता की पूर्ति में सचेष्ट हो।

इस दृष्टि से आदर्शवाद शारीरिक प्रशिक्षण की उपेक्षा नहीं कर सकता। शारीरिक शिक्षा भी उसके पाठ्यक्रम में होगी। प्राकृतिक वातावरण की जानकारी प्राकृतिक विज्ञानों से होती है, अतः भौतिकी, रसायनिकी, भूमिति, भूगोल, खगोल, भूगर्भ विज्ञान, वनस्पतिशास्त्र, जीव-विज्ञान आदि विषयों को आदर्शवाद तिलांजलि नहीं देता। आध्यात्मिक विकास के लिए कला, साहित्य, नीतिशास्त्र, दर्शन, धर्म, मनोविज्ञान, संगीत आदि विषय अधिक महत्वपूर्ण हैं। इन विषयों के अध्ययन से मानव की आत्मा का विकास होता है। यदि इन विषयों का अध्ययन न किया जाये तो व्यक्ति प्राकृतिक वातावरण तक ही सीमित रह जायेगा।

9.4.3 आदर्शवाद और अनुशासन Idealism and discipline

आदर्शवाद में अनुशासन को शिक्षा के लिय महत्वपुर्ण माना गया है। आदर्शवादी बालक को पूर्ण स्वतंत्रा देने के पक्ष में नही है जबकि प्रक्रतिवाद पूर्ण स्वतंत्रा का पक्षपाती था। सम्पुर्ण शिक्षा आदर्श केन्द्रित होती है। आदर्शवादी शिक्षक छात्रो को इस बात के लिय सचेत करता है कि स्वातंत्रा की अधिक मात्रा हानिकारक होती है। प्रकतिवाद का नारा है 'स्वातंत्रता' और आदर्शवाद का नारा है 'अनुशासन' । अनुशासित जीवन से ही आध्यातिमक उपलब्धि सम्भव है। किंतु अनुशासन बाहय नियन्त्रण द्वारा सम्भ्व नही है बल्कि यह स्वम पर स्वेच्छा से लागू किया गया प्राक्रतिक नियंत्रण है।जिसे अनुशासित जीवन के लिय आवश्यक मना गया । आदर्शवाद नैतिक गुणो के विकास का समर्थन करता है। नैतिक गुणो के विकास के लिय अनुशासन आवश्यक है। नम्रता, ईमानदारी, समय प्रबन्ध, आज्ञाकारिता ,निष्ठा ,सत्यवादिता आदि ऐसे गुण है।जिंका विकास आवश्यक् है। इनका विकास अनुशासनपुर्ण वातावरण में ही सम्भव है।

अपनी उन्नति जानिए ((Check your Progress) 0

प्र.1 आदर्शवादियों के अनुसार मानव को मोक्ष प्राप्त करने के लिए कितने चरणों (सोपान) पर सफलता प्राप्त करनी होती है?

(अ) पांच चरण (ब) चार चरण (स) तीन चरण (द) दो चरण

प्र.2 ''अपने आपको पहचानो'' (To Know Thyself) यह विचारधारा है-

(अ) प्रकृतिवाद (ब) अस्तित्ववाद (स) आदर्शवाद (द) प्रयोजनवाद

प्र.3 ''संसार में पदार्थ नाशवान हैं, विचार अमर, विचार सत्य, वास्तविक व अपरिवर्तनशील हैं'' यह विचारधारा है-

(अ) आदर्शवाद (ब) प्रकृतिवाद (स) प्रयोजनवाद (द) अस्तित्ववाद

प्र.4 ''सृष्टि की आत्मा चरम सत्य है, वही शिव है, वही सुन्दर है'', यह कथन है-

(अ) प्रकृतिवादी (ब) प्रयोजनवादी (स) अस्तित्ववादी (द) आदर्शवादी

प्र.5 तर्क विधि, खेल विधि, अनुदेशन विधि एवं आवृत्ति विधि का विकास किया है-

(अ) प्रकृतिवादी (ब) प्रयोजनवादी (स) आदर्शवादी (द) अस्तित्ववादी

भाग-तीन

9.5 आदर्शवाद व शिक्षक (Idealism and Teacher)

जेण्टील (Gentile) का कथन है कि ''अध्यापक सही चरित्र का आध्यात्मिक प्रतीक है'' (Teacher is Spiritual Symbol of right Conduct)। आदर्शवादी विचारक शिक्षक को उस अनुपम स्थिति में रखते हैं जिसमें शिक्षण प्रक्रिया का कोई अन्य अंश नहीं रखा जा सकता। आदर्शवादी दार्शनिक शिक्षक में जिन गुणों की परिकल्पना करते हैं, उनकी चर्चा बटलर ने इस प्रकार की है-

1. शिक्षक बालक के लिए सत्ता का साकार रूप होता है।

2. अध्यापक को छात्रों की व्यक्तिगत, सामाजिक व आर्थिक विशेषताओं का ज्ञाता होना चाहिए।

3. शिक्षक को अध्यापन कला का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए व उसमें व्यावसायिक कुशलता होनी चाहिए।

4. अध्यापक का व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिए जिससे वह छात्रों को अपनी ओर आकर्षित कर सके।

5. अध्यापक एक दार्शनिक, मित्र व पथ-प्रदर्शक के रूप में होना चाहिए।

6. अध्यापक का व्यक्तित्व अच्छे गुणों से परिपूर्ण होना चाहिए जिससे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में वह छात्रों को सद्गुणों के ढांचे में ढाल सके।

7. छात्रों के व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान करना अध्यापक के जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए।

8. शिक्षक को अपने विषय का पूर्ण एवं सही ज्ञान होना चाहिए।

9. अध्यापक में स्व-अध्ययन का गुण होना चाहिए जिससे वह निरन्तर नवीन ज्ञान की ओर उन्मुख हो सके।

10. अध्यापक को प्रजातंत्र की सुरक्षा रखने का प्रयास करना चाहिए।

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री फॉबेल ने कहा है कि बालक एक पौधे के समान है और अध्यापक एक माली के सदृश, जो पौधे को आवश्यकतानुसार सींचकर, खाद आदि डालकर तथा काट-छांटकर सुव्यवस्थित रूप में पनपाता है, जिससे वह एक सुन्दर और मनमोहक वृक्ष बन सके। शिक्षक के महत्व के संबंध में रॉस ने भी कहा है-''प्रकृतिवादी तो जंगली गुलाब से संतुष्ट हो सकता है, किन्तु आदर्शवादी तो एक सुन्दर व सुविकसित गुलाब की परिकल्पना करता है।'' यह दार्शनिक विचारधारा यह मानकर चलती है कि बालक के विकास हेतु उपर्युक्त सामाजिक वातावरण एवं शिक्षक का सही मार्गदर्शन आवश्यक है।

9.5.1 आदर्शवाद एवं बालक (Idealism and Child)

आदर्शवाद में बालक को शिक्षण प्रक्रिया का मुख्य बिन्दु नहीं माना जाता। उनके अनुसार शिक्षण प्रक्रिया में भावों, विचारों व आदर्शो का महत्वपूर्ण स्थान है और इनको प्रदान करने के माध्यम के रूप में वह अध्यापक को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं व बालक को गौण। वह छात्रों को एक आध्यात्मिक प्राणी मानते हैं व यह स्वीकार करते हैं कि आध्यात्मिक सत्ता भी होती है। वे मन को शरीर से अधिक महत्व देते हैं। हॉर्न ने इस संबंध में कहा है, ''विद्यार्थी एक परिमित व्यक्ति है किन्तु उचित शिक्षा मिलने पर वह परम पुरूष के रूप में विकसित होता है। उसकी मूल उत्पत्ति दैविक है, स्वतंत्रता उसका स्वभाव है और अमरत्व की प्राप्ति उसका लक्ष्य है।''

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र. 1 ''अध्यापक सही चरित्र का आध्यात्मिक प्रतीक है'' यह परिभाषा है-

(अ) फ्रॉवेल (ब) जेण्टील (स) रॉस (द) फिक्टे

प्र. 2 ''प्रकृतिवादी तो जंगली गुंलाब से संतुष्ट हो सकता है किन्तु आदर्शवादी तो एक सुन्दर व सुविकसित गुलाब की परिकल्पना करता है।'' यह परिभाषा है-

(अ) फ्रॉवेल (ब) जेण्टील (स) रॉस (द) फिक्टे

प्र. 3 ''अध्यापक में स्व-अध्ययन का गुण होना चाहिए, जिससे वह निरन्तर नवीन ज्ञान की ओर उन्मुख हो सके।'' यह विचारधारा है-

(अ) प्रकृतिवादियों (ब) आदर्शवादियों (स) अस्तित्ववादिया
(द) प्रयोजनवादियों

प्र. 4 ''सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'' को शिक्षा का आधार मानते है-

(अ) प्रकृतिवादी (ब) आदर्शवादी (स) अस्तित्ववादी (द) प्रयोजनवादी

प्र. 5 आत्मानुशासन व आत्म-नियंत्रण पर बल देता है-

(अ) आदर्शवादी (ब) प्रकृतिवादी (स) प्रयोजनवादी (द) अस्तित्ववादी

9.6 सारांश (Summary)

आदर्शवादी शिक्षा को पवित्र कार्य मानता है। शिक्षार्थी का व्यक्तित्व उसके लिए महान है। अतः वह छात्र के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना चाहता है। यह विकास सही दिशा में होना चाहिए। विकास की दिशा ऐसी हो कि बालक आत्मानुभूति की ओर बढ़ सके और ''सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'' का दर्शन कर सके। विश्व में इससे बढ़कर न तो कोई लक्ष्य हो सकता है, न ही इससे बढ़कर कोई उपलब्धि हो सकती है। आदर्शवादी परम-सत्य में विश्वास करता है। वह परम-सत्य लक्ष्यों का लक्ष्य है, विभिन्न सत्यों का आधार, सुन्दरों में सौन्दर्य का मूल तथा साक्षात् शिवम् है। जीवन की पूर्णता उसी दिशा में चलने में है। अतः हम यह कह सकते हैं कि आदर्शवाद ने शिक्षा की दिशा निश्चित करने में शिक्षाशास्त्रियों का मार्ग-दर्शन किया है। शिक्षा के उद्देश्य निश्चित करते समय हम कभी-कभी दूर दृष्टि से काम नहीं लेते। आदर्शवाद हमें इस खतरे से सावधान करता है। आदर्शवादने

आत्मानुभूति जैसा शिक्षा का उद्देश्य देकर, अनेकता में एकता की अंतदृष्टि प्रदान करके एवं ''सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'' की प्राप्ति की दूर-दृष्टि देकर शिक्षा का बड़ा उपकार किया है।

आदर्शवाद ने शिक्षक के स्थान को बड़ा महत्व दिया है। इसका परिणाम यह होता है कि शिक्षक अत्यधिक सक्रिय रहता है और छात्र निष्क्रिय हो जाते हैं। छात्र इससे निरूत्साहित होता है और स्वयं सीखने के लिए इच्छा नहीं करता।

उपर्युक्त दोषों में कुछ सत्यता अवश्य है, किन्तु कभी-कभी किसी दार्शनिक विचारधारा को ठीक से न समझने के कारण ही उसकी आलोचना की जाती है। आदर्शवाद का परम-सत्य सबकी समझ में नहीं आ पाता। अतः वे उसे काल्पनिक और अयथार्थ समझते हैं। जहां तक शिक्षण-विधियों का प्रश्न है, आदर्शवाद ने अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जिस विधि को उचित समझा, उसे अपनाया।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि जहंा तक शिक्षा के उद्देश्यों का संबंध है, आदर्शवाद के सामने कोई दूसरी विचारधारा टिक नहीं सकती। शिक्षा के अन्य अंगों के क्षेत्र में आदर्शवाद ने अधिक ध्यान नहीं दिया।

9.7 शब्दावली (Glossary)

जगत - जगत से हमारा अभिप्राय संसार अर्थात् पूरे विश्व में व्याप्त भूमण्डल।

आध्यात्मिक - आध्यात्मिक से हमारा अभिप्राय धार्मिक क्रिया-कलापों, पूजा-पाठ व ईश्वर में ध्यान, सत्य का मार्ग आदि।

नश्वर - इस संसार में प्रत्येक वस्तु नश्वर है। अर्थात् जिसका जन्म हुआ है या निर्माण हुआ वह एक दिन समाप्त अवश्य ही होती है।

संस्कृति - संस्कृति से हमारा अभिप्राय हमारे रीति-रिवाज, परम्पपराएं, आचरण व धार्मिक क्रिया-कलाप, हमारी संस्कृति हैं।

9.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice question)

भाग-एक

उत्तर 1 (अ) एडम्स

2 (ब) विचारधारा या प्रत्यवाद

3 (द) आदर्शवाद

4 (ब) आदर्शवाद

5 (अ) सुकरात

9.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

9.10 उपयोगी सहायक ग्रन्थ (Useful Books)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार 2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स: नई दिल्ली।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

6. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शिक्षा दर्शन , एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स: नई दिल्ली।

9.11 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

प्र. 1. आदर्शवाद से आप क्या समझते हैं? जीवन दर्शन के रूप में आदर्शवाद की विस्तृत चर्चा कीजिए।

प्र. 2. आदर्शवाद में शिक्षा के प्रमुख उद्देश्यों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्र. 3. आदर्शवादी पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धतियों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्र. 4. आदर्शवादी शिक्षक एवं बालकों के प्रमुख गुणों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

प.5 आदर्शवादी द्रष्टिकोण से अनुशासन के स्वरुप और शिक्षक की कल्पना को स्पष्ट कीजिय।

इकाई 10: प्रकृतिवाद और शिक्षा: उद्देश्य, प्रक्रिया, पाठयक्रम, अनुशासन, अध्यापक की भूमिका (Naturalism and Education: Aims, Progress, Curriculum, Discipline, Role/place of Teacher)

10.1 प्रस्तावना Introduction
10.2 उद्देश्य Objectives
भाग-1
10.3 प्रकृतिवाद और शिक्षाNaturalism and Education
10.3.1 प्रकृतिवादी दर्शन का अर्थ Meaning of Naturalistic Philosophy
10.3.2 प्रकृतिवाद की परिभाषाएं Definition of Naturalism
10.3.3 प्रकृतिवाद व प्रक्रिया (Naturalism and process)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-2
10.4 प्रकृतिवाद व शिक्षा के उद्देश्य Naturalism and aims of Education
10.4.1 प्रकृतिवाद व पाठ्यक्रम Naturalism and Curriculum
10.4.2 प्रकृतिवाद व अनुशासन Naturalism and Discipline
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-3
10.5 प्रकृतिवाद व अध्यापक Naturalism and Teacher
10.5.1 शिक्षा में प्रकृतिवाद की देन Contribution of Naturalism in Education
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
10.6 सारांश Summary
10.7 शब्दावली (Glossary)
10.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर Answer of Practice Questions
10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची References
10.10 उपयोगी सहायक ग्रन्थ Useful Books

10.11 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न Long Answer Type Question

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

दर्शन की समस्या के रूप में तत्व की खोज तो अनादि काल से हो रही है और इसी आधार पर दार्शनिकों को समूहों में बांट दिया गया है। जो एक तत्व मानते हैं वे एकतत्ववादी अथवा अद्वैतवादी, जो दो तत्वों में विश्वास करते हैं वे द्वितत्ववादी अथवा द्वैतवादी और बहुतत्व मानने वाले बहुततत्ववादी कहलाते हैं। साधारणतया एकतत्ववादी विचारधारा ही प्रबल है। ब्रह्माण्ड का मूल कारण चेतन है अथवा अचेतन? उसका रूप पौद्गलिक है अथवा मानसिक? इन प्रश्नों का उत्तर यह प्रकट कर देगा कि विचारक विचारवादी है अथवा प्रकृतिवादी। विचारवादी प्रत्ययों को शाश्वत मानता है और उन सब प्रत्ययों का भी मूल किसी एक प्रत्यय को ही मानता है। यह मूल तत्व उसके अनुसार मानसिक है। यह तत्व चेतन है। इस पर आधारित शिक्षा-प्रणाली उस शिक्षा प्रणाली से भिन्न होगी जो पुद्गल को ही प्रथम कारण मानते हैं और साथ-साथ उसे स्वयं प्रेरक, परिवर्तनशील और प्रयोजनहीन मानते हैं। यह मूल तत्व पुद्गल है और प्रयोजनहीन है तो शिक्षा का उद्देश्य प्रयोजनशील नहीं हो सकता। केवल जीवित रहने के योग्य बनाना ही शिक्षा का लक्ष्य रहेगा।

एक प्रकृतिवादी विचारधारा यांत्रिक भौतिकवाद से मिलती है। भौतिकवादी के लिए पुद्गल मूल तत्व है, मनस् है मस्तिष्क उसकी क्रिया। पुद्गल ही मनस् का उद्गम है, न कि मनस् पुद्गल का प्रेरक। चेतना इस मस्तिष्क का उपफल है। भौतिकवादी संसार को एक यंत्र मानते हैं और उनके लिए जीवित प्राणी तो केवल अणु-परमाणु इत्यादि का जोड़ है। प्राकृतिक चुनाव के द्वारा उच्च प्रकार की चेतन-मशीनों की उत्पत्ति संभव है। अतः भौतिकवादियों के लिए मनुष्य एक यंत्र है। प्रयोजनहीन, लक्ष्यहीन और निर्माण की शक्ति से च्युत मनुष्य केवल एक यंत्र है और मनोविज्ञान के लिए व्यवहारवादी शाखा इस दर्शन की देन है। व्यवहारवादी मनोविज्ञान के अनुसार मनोविज्ञान मनुष्य के केवल बाह्य व्यवहार का अध्ययन करता है और जिन्हें हम मानसिक क्रियायें कहते हजैं वे केवल बाह्य उत्तेजन की प्रतिक्रिया मात्र हैं। आत्मा और परमात्मा की मान्यता इस विचारधारा के अनुसार नहीं के बराबर है। चार्वाक का मत भी इस विचारधारा से मिलता-जुलता सा ही है।

10.2 उद्देश्य (Objectives)

1. प्रकृतिवाद के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
2. प्रकृतिवाद व शिक्षा के संबंध में जान सकेंगे।
3. प्रकृतिवादी दर्शन के अर्थ का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4. प्रकृतिवाद के दार्शनिक रूपों का अध्ययन कर सकेंगे।

5. प्रकृतिवाद के प्रमुख सिद्धान्तों के बारे में जान सकेंगे।

6. प्रकृतिवाद की प्रमुख विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।

10.3 प्रकृतिवाद और शिक्षा (Naturalism and Education)-

प्रकृतिवाद यह मानता है कि ''वास्तविक संसार भौतिक संसार है'' (Material word is the real word) इसी कारण हम प्रकृतिवाद को भौतिकवादी दर्शन भी कहते हैं। प्रकृतिवाद इस सृष्टि की रचना के लिए प्रकृति को ही उत्तरदायी मानता है। इसके अनुसार सभी दार्शनिक समस्याओं का प्रत्युत्तर प्रकृति में निहित होता है। (Nature alone Contain the final answer to all philosophical Problems)

दार्शनिक प्रकृति की व्याख्या सामान्यतया इस रूप में करते हैं कि प्रकृति सामान्य व स्वाभाविक रूप से विकसित होने वाली एक प्रक्रिया है। इस ब्रह्माण्ड की वह सभी वस्तुएं जिनकी रचना या निर्माण में मनुष्य का शून्य योगदान है, वही प्रकृति है। इसके साथ ही कुछ दार्शनिक विचारधारा मानती है कि प्रकृति वह है जो सर्वत्र तथा सर्वदा विद्यमान है और इसकी गतिविधियां निश्चित व प्राकृतिक नियमों द्वारा संचालित व नियंत्रित होती हैं। साथ ही इनका यह भी विचार है कि प्रकृति में अनेक पदार्थ होते हैं जिनके परस्पर सहयोग से विभिन्न प्रकार की रचनाएं जन्म लेती हैं। यह पदार्थ गतिशील व क्रियाशील होते हैं। इसी कारण प्रकृतिवाद, भौतिकवाद भी कहा जाता है। दर्शनशास्त्र में प्रकृति को ही सर्वोपरि सत्ता के रूप में स्वीकार किया जाता है परन्तु प्राकृतिक दार्शनिक विचारधारा बहुत ही व्यापक रूप में प्रकृति को स्वीकार करती है। एक ओर तो वह प्रकृति को भौतिक जगत के रूप में देखती है, जिसका हम प्रत्यक्ष दर्शन कर सकते हैं तो दूसरी ओर प्रकृति की व्याख्या जीव-जगत के रूप में भी की जाती है। साथ ही तीसरे अर्थ में देश-काल की सभ्ज्ञी बातें भी प्रकृति में निहित होती हैं।

10.3.1 प्रकृतिवादी दर्शन का अर्थ (meaning of Naturalistic Philosophy)-

प्रो. सोर्ले के अनुसार प्रकृतिवाद को नकारात्मक रूप से भली-भांति समझाया जा सकता है। यह वह विचारधारा है जिसके अनुसार स्वाभाविक या निर्माण की शक्ति मनुष्य के शरीर को नहीं दी जा सकती। प्रकृतिवादी विचारक बुद्धि का स्थान मानते हैं, पर कहते हैं कि उसका अर्थ केवल बाह्य परिस्थितियों तथा विचारों को काबू में लाना है जो उसकी शक्ति से बाहर जन्म लेते हैं। एक प्रकार से प्रकृतिवादी भी भौतिकवादियों की भांति आत्मा-परमात्मा, स्पष्ट प्रयोजन, इत्यादि की सत्ता में विश्वास नहीं करते। प्रकृतिवाद सभ्यता की जटिलता की प्रतिक्रिया के रूप में हमारे सम्मुख आया है। इसके मुख्य नारे ''प्रकृति की ओर लौटो'', ''समाज के बंधनों को तोड़ो'' इत्यादि हैं। सभ्यता का

लचीलापन समाप्त होने पर यह वाद जन्म लेता है। पर प्रकृति का अर्थ क्या है ? सर जान एडम्स ने कहा है कि यह शब्द बड़ा ही जटिल है। इसकी अस्पष्टता के कारण बहुत सी भूलें और अन्धकार का फैलाव होता है। इसका अर्थ तीन प्रकार से किया जा सकता है। प्रथम अर्थ में प्रकृति का तात्पर्य है निहित गुण और विशेषकर वे गुण जो जीवन के विकास और क्रमशः उन्नति की ओर ले जाने के लिए सहायक हों। यदि हम बालक को पढ़ाना चाहते हैं तो उसके विकास के नियम हमें ज्ञात होने चाहिए। प्रकृति का इस प्रकार अर्थ करने का गौरव रूसो को प्राप्त है। डॉ. हॉल जिसे बाल-केन्द्रित शिक्षा कहते हैं, उसे रूसो ने प्रेरणा दी थी, यद्यपि उससे पूर्व क्विन्टिलियन भी इसे जानता था। इस संदर्भ में हम कह सकते हैं कि प्रथम अर्थ में प्रकृति का तात्पर्य बहुत कुछ स्वभाव से लगाया जाता है।

प्रकृति का द्वितीय अर्थ है बनावट के ठीक विपरीत। जिस कार्य में मनुष्य ने सहयोग न दिया वही प्राकृतिक है। यह सत्य है कि मनुष्य प्रकृति में अपनी क्रियात्मकता से परिवर्तन लाया करता है। पर इसका अर्थ बनावट तो नहीं है। क्योंकि उक्त परिवर्तन अप्राकृतिक कैसे हो सकता है, जबकि मनुष्य स्वयं प्रकृति के कारण जीवित है और वह प्राकृतिक प्राणी है। बस इसका अर्थ यह है कि हम आदि काल की बात सोचने लगें। उस समय मनुष्य पशु था अथवा एक साधु अवस्था में, इसका निर्णय कठिन है। फिर एक चोर चोरी करने में क्या अपने स्वभाव का सहारा नहीं लेता ? फिर उसे सजा क्यों मिलती है ? क्या हमें बालक को मूल्य प्रवृत्ति या संवेगों की शिक्षा देनी है ? हम ठीक नहीं बता सकते। हमारा हृदय केवल उपयुक्त और हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों को ही जीवित रहने में सहायता पहुंचाना नहीं है वरन् आधे से अधिक मनुष्यों को जीवित रखने के योग्य बनाना है और हम यहां प्रकृति को स्वाभाविक तथा बनावटी दोनों ही रूपों में लेते हैं।

प्रकृति का तृतीय अर्थ है समस्त विश्व तथा उसकी क्रिया और इस अर्थ में मनुष्य जो कुछ भी करता है वह प्राकृतिक है। शिक्षा में इसका अर्थ होगा विश्व की क्रिया का अध्ययन और उसे जीवन में उतार देना। इसका अर्थ हुआ कि एक सुस्त और कामचोर को भी इस प्रकार कहने का अवसर मिल सकता है कि वह बहुत से कीटाणुओं की भांति स्वाभाविक रूप से कार्य नहीं कर सकता। इस प्रकार हिंसक प्रवृत्ति का व्यक्ति अपनी हिंसात्मक कार्यवाहियों को भी प्राकृतिक कहने की धृष्टता कर सकेगा। कुछ विद्वानों का मत है कि मनुष्य को प्रकृति की विकासवादी श्रृंखला में बाधक नहीं बनना चाहिए वरन् उसे उस क्रिया से अलग ही रहना ठीक है। विकास किसी व्यक्तित्व के बिना नहीं हो सकता, व्यक्तित्व बिना प्रयोजन काम नहीं कर सकता। इसलिए हमें कुछ विद्वानों के अनुसार इस विकास के नियम का अध्ययन करना चाहिए तथा प्रकृति का अनुयायी हो जाना चाहिए। शिक्षा का उद्देश्य इस विकास को समझाना तथा इसका अनुयायी बनने में सहायता करना है। शिक्षा संभव हो सके, इसलिए हमें बहुत सी बनावटी बातों पर भी बल देना होगा। इस प्रकार हमने देखा कि प्रकृति के

अर्थ का निर्णय कठिन है। फिर भी हम इस बात को जानते हैं कि हरबर्ट स्पेसर तथा रूसो को प्रकृतिवादी माना जाता है।

10.3.2 प्रकृतिवाद की परिभाषाएं (Definition of Naturalism) -

प्रकृतिवाद की परिभाषा को हम निम्न प्रकार समझ सकते हैं:-

जेम्स बार्ड- ''प्रकृतिवाद वह सिद्धान्त है, जो प्रकृति को ईश्वर से पृथक करता है, आत्मा को पदार्थ के अधीन करता है और अपरिवर्तनीय नियमों को सर्वोच्चता प्रदान करता है।''

थॉमस और लेंग के अनुसार- ''प्रकृतिवाद आदर्शवाद के विपरीत मन को पदार्थ के अधीन मानता है, और यह विश्वास करता है कि अंतिम वास्तविकता-भौतिक है, आध्यात्मिक नहीं।''

जायस के अनुसार- ''प्रकृतिवाद एक ऐसा दार्शनिक तंत्र है, जिसमें प्रभुत्व विशेषता के रूप में आध्यात्मिक, अन्त ज्ञानात्मक एवं पदार्थ जगत से परे की अनुभूतियों को बहिष्कृत किया जाता है।''

पैरी के अनुसार - ''प्रकृतिवाद, विज्ञान नहीं है, वरन् विज्ञान के बारे में दावा है। अधिक स्पष्ट रूप में यह इस बात का दावा है कि वैज्ञानिक ज्ञान अंतिम है, जिसमें विज्ञान से बाहर या दार्शनिक ज्ञान का कोई स्थान नहीं है।''

ब्राइस के अनुसार- ''प्रकृतिवाद एक प्रणाली है और जो कुछ आध्यात्मिक है, उसका बहिष्कार ही उसकी प्रमुख विशेषता है।''

रस्क के अनुसार- ''प्रकृतिवाद एक दार्शनिक स्थिति है जिसे वे लोग अपनाते हैं, जो दर्शन की व्याख्या वैज्ञानिक दृष्टिकोण से करते हैं।''

10.3.3 प्रकृतिवाद व प्रक्रिया (Naturalism and process)

प्रकृति ही वास्तविकता है (Nature is Ultimate Reality), प्रकृतिवाद प्रकृति को अंतिम सत्ता मानता है और मानव प्रकृति पर अधिक बल देता है। यह इस बात पर विश्वास करता है कि वास्तविकता व प्रकृति (Reality and Nature) में कोई अन्तर नहीं है। अर्थात् जो वास्तविक है, वह प्रकृति है या जो प्रकृति है, वह वास्तविक है। हॉकिंग (Hocking) के शब्दों में- ''प्रकृतिवाद इस बात को अस्वीकार करता है कि प्रकृति से परे, प्रकृति के पीछे या प्रकृति के अलावा कोई चीज अपना अस्तित्व रखती है, चाहे वह सांसारिक परिधि में हो या आध्यात्मिक परिधि में।'' (Naturalism denies existence of anything nature, behind nature such as the supernatural of other worldy)प्रकृतिवादी विचारधारा मन व शरीर में कोई अंतर नहीं

करती। वह यह मानती है कि मानव पदार्थ है, चाहे उसका मन हो या शरीर, दोनों ही इस पदार्थ का परिणाम हैं।

प्रकृतिवाद यह भी मानता है कि वैज्ञानिक ज्ञान ही उचित ज्ञान होता है और हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि हम इस वैज्ञानिक ज्ञान को जीवन से जोड़ सकें। वैज्ञानिक विधि द्वारा ज्ञान प्राप्ति पर बल (Emphasis on acquiring knowledge through scientific method) - प्रकृतिवाद के अन्तर्गत आगमन (Inductive) विधि द्वारा ज्ञानार्जन की चर्चा की गई है, साथ ही वह इस बात की भी चर्चा करते हैं कि ज्ञान-प्राप्ति का सर्वोचित तरीका निरीक्षण विधि है। ज्ञान-प्राप्ति हेतु इन्द्रियों की आवश्यकता (Need of sense for Acquiring Knowledge) है मानव इस जगत पर जो भी ज्ञान प्राप्त करता है, उसका माध्यम इन्द्रियां होती हैं। बिना इन्द्रिय सहयोग के मानव ज्ञानार्जन नहीं कर सकता। इस संसार में सर्वोच्च शक्ति प्रकृति के हाथों में ही निहित रहती है और प्रकृति के नियम अपरिवर्तनशील हैं।प्रकृतिवाद किसी आध्यात्मिक शक्ति में या आत्मा में विश्वास नहीं रखते। वह मानते हैं कि मानव की रचना प्रकृति के द्वारा हुई है और मनुष्य के शरी का नाश होते ही उसका चेतन तत्व भी समाप्त हो जाता है।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र.1. पुदगल से क्या अभिप्राय है ?

प्र. 2. प्रकृति से आप क्या समझते हैं ?

प्र. 3. ''प्रकृतिवाद आदर्शवाद के विरूद्ध मन को पदार्थ के अधीन मानता है और यह विश्वास करता है कि अंतिम वास्तविकता भौतिक है, आध्यात्मिक नहीं।'' यह परिभाषा किस विद्वान की है ?

(अ) जेम्स वार्ड (ब) थॉमस और लैग (स) जायस (द) पैरी

प्र. 4. यांत्रिक प्रकृतिवाद से आप क्या समझते हैं ?

10.4 प्रकृतिवाद व शिक्षा के उद्देश्य Naturalism and aims of Education

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री रूसो (Rousseau) ने कहा कि शिक्षा का शिक्षा का उद्देश्य मानव को प्रकृति के अनुकूल जीवन व्यतीत करने हेतु योग्य बनाना है। शिक्षा के द्वारा हम मानव में कुछ नया उत्पन्न नहीं करते वरन् मानव की मौलिकता को बनाये रखने का प्रयास करते हैं और मानव संसर्ग के फलस्वरूप उसमें जो कृत्रिमता आ जाती है, उसका विनाश करने का प्रयास करते हैं। रूसो ने कहा कि ''रोजमर्रा के व्यवहार को (समाज-सम्मत व्यवहार को) बदल डालो और सदा सर्वदा तुम्हारा

कृत्य सही होगा।'' रूसो ने हर स्थान पर सामाजिक संस्थाओं की अवहेलना की है। वह कहता है कि ''मानवीय संस्थाएं मूर्खता तथा विरोधाभास के समूह हैं।'' परन्तु वह प्रकृति को ईश्वरीय सृष्टि मानता है और मनुश्य को ईश्वरीय कृति।

जैवकीय प्रकृतिवाद के अनुसार शिक्षा के तीन प्रमुख उद्देश्य माने जाते हैं:-

1 व्यक्ति को इस योग्य बनाना जिससे कि वह इस जगत में अपने आपको जिन्दा रख सके, जीवन के संघर्षो का मुकाबला कर सके तथा सफलता प्राप्त करने हेतु प्रयास कर सके।

2 शिक्षा का उद्देश्य है व्यक्ति को उसके वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करने की योग्यता प्रदान करना।

3.बर्नार्ड शॉ के अनुसार, ''शिक्षा का उद्देश्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक जातीय संस्कृति का संरक्षण, हस्तान्तरण व वृद्धि होना चाहिए। यह उद्देश्य आदर्शवादी उद्देश्य के निकट है।''

संक्षेप में, प्रकृतिवाद के अनुसार हम शिक्षा के निम्न उद्देश्य बता सकते हैं -

1. शिक्षा द्वारा बालक को प्राकृत जीवन व्यतीत करने हेतु तैयार करना।

2. बालक की प्राकृतिक शक्तियों का विकास करना।

3. बालक को इस प्रकार का ज्ञान व दक्षता प्रदान करना जिससे कि वह अपने पर्यावरण के साथ समायोजित हो सके।

4 मानव में उचित तथा उपयोगी सहज क्रियाओं को उत्पन्न करना अर्थात् मनुष्य में शिक्षा द्वारा ऐसी आदतोंएवं शक्तियों का विकास करना जो मशीन के पुर्जे की भांति अवसरानुकूल प्रयुक्त की जा सकें।

5. बालक को जीवन संघर्षो के योग्य बनाना।

6. जातीय निष्पत्तियों का संरक्षण करना व विकास करना।

7. बालक का आत्मसंरक्षण व आत्मसंतोष की प्राप्ति।

8. मूल प्रवृत्तियों का शोधन एवं मार्गान्तरीकरण।

9. बालके के व्यक्तित्व का स्वतंत्र विकास।

10.4.1 प्रकृतिवाद व पाठ्यक्रम Naturalism of Curriculum-

प्रकृतिवाद के शिक्षा के उद्देश्य के संबंध में स्पेन्सर ने पांच उद्देश्यों की चर्चा की है। वह प्रकृतिवाद के पाठ्यक्रम को भी इन उद्देश्यों की पूर्ति का एक सासधन मानते हुए कहते हैं:-वास्तव में यदि देखा जाए तो प्रकृतिवादी पाठ्यक्रम का संगठन अपने ही ढंग से करते हैं और मानते हैं कि बालक की प्रकृति, नैसर्गिक रूचि, योग्यता, अनुभव व स्वाभाविक क्रियाओं के आधार पर ही पाठ्यक्रम का संगठन होना चाहिए और पाठ्यक्रम में वह विषय रखे जाने चाहिए जो बालक के विकास की विभिन्न अवस्थाओं के अनुरूप हों। पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों के संबंध में प्रकृतिवादी विचारधारा इस प्रकार हैः-

1. पाठ्यक्रम निर्माण का आधार बाल हो।
2. पाठ्यक्रम में विज्ञान विषयों को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाये।
3. पाठ्यक्रम व्यावहारिक व जीवनोपयोगी हो।
4. पाठ्यक्रम अनुभव-केन्द्रित हो।

10.4.2 प्रकृतिवाद व अनुशासन Naturalism and Discipline

प्रक्रतिवादी दार्शनिक बाध्य अनुशासन पर विश्वास नही करते । वे स्वतंत्रता के पक्षधरहै। रूसो के अनुसार "बच्चो को कभी दन्डित नही किया नही जाना चाहिय, स्वतंत्रता,न कि शक्ति, सबसे अच्छी चीज है।" प्रकतिवादी प्राकृतिक परिणामो के द्वारा प्रेरित अनुशासन पर बल देते है। उदाहरणार्थ – जब बालक गिरता है या अपने सिर को मेंज पर पटकता है, तो उसे दर्द मालूम पडता है। इस की याद उसे और अधिक सावधान बना देती है। दर्द के इस प्रकार के बार-बार होने वाले अनुभवो के कारण वह अंत में अपने कार्यों में अनुशासित हो जाता है। परंतु यह सिद्धांत प्रत्येक आयु वर्ग के बाल्को पर लागू नही हो सकता ।

10.5 प्रकृतिवाद व अध्यापक Naturalism and Teacher

शिक्षा व्यवसथा में शिक्षक का स्थान मुख्य है। लेकिन प्रगतिवादी दर्शन शिक्षक को शिक्षा व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान नही देता है उनके अनुसार प्रकति ही बालक का वास्तविक शिक्षक है। बालक स्वतः प्रकृति के इशारे पर जीवन की शिक्षा ग्रहण करता है। उसे किसी शिक्षक की आवश्यकता नही है। केवल उसे ऐसे वातावरण में रखा जाय जो समाज के दोषो से रहित और प्रकृति का शांत वातावरण हो। ऐसे वातावरण में शिक्षक का कोई स्थान नही है। क्योकि शिक्षक भी समाज का सदस्य होता है अतः समाज की कमियो की छाप भी शिक्षक पर पडना अवश्य है रॉस का विचार है " यदि शिक्षक क कोई स्थान है तो वह पर्दे के पिछे है वह बालक के विकास का निरीक्षण करने

वाला है- न कि उसको सूचनाओ, विचारो, आदर्शो और इच्छा-शक्ति को देने वाला या उसके चरित्र का निर्माण करने वाला। बालक इन बातो को स्वमॅ ही कर लेगा। वह किसी भी शिक्षक की अपेक्षा अच्छी तरह जानता है कि उसे क्या, कब और कैसे सीखना है? उसकी शिक्षा –उसकी रुचियो और प्रेरणाओ का स्वतंत्र विकास है,न कि इसके लिय शिक्षक द्वारा किया गया क्रत्रिम प्रयास।

10.5.1 शिक्षा में प्रकृतिवाद की देन (Contribution of naturalism in education)

1. बालक का प्रमुख स्थान प्रकृतिवाद की विशेषता है। आज हमें इस बात पर आश्चर्य नहीं होता किन्तु 19वीं शताब्दी के अन्त तक लोग बालक को प्रौढ़ का छोटा रूप मानते थे, उसका अलग व्यक्तित्व मानने को तैयार न थे। 'बाल केन्द्रित शिक्षा' प्रकृतिवाद की देन है।

2. बाल-मनोविज्ञान के अध्ययन की प्रेरणा भी इसी विचारधारा ने दी। बालक को पढ़ाने के लिए उसके मनोविज्ञान को जाने की आवश्यकता की पूर्ति हेतु मनोविज्ञान के क्षेत्र में खोज प्रारम्भ हुई। मनोविज्ञान ने बताया कि बालक विकास काल में विभिन्न स्थितियों से होकर गुजरता है। यही नही मनोविज्ञान की एक विशेष शाखा-मस्तिष्क विश्लेषण को तो विशेष प्रोत्साहन मिला। बालक को व्यर्थ ही दबाना नहीं चाहिए। लिंग-भेद की ओर इस मनोविज्ञान की विशेष देन है। इसके प्रति इसने एक स्वस्थ विचारधारा को जन्म दिया।

3. शिक्षा की विधि में प्रकृतिवाद ने शब्दों की अपेक्षा अनुभवों पर बल दिया। केवल शब्द शिक्षा के लिए आवश्यक गुण नहीं है, अनुभव भी आवश्यक हैं। इसलिए अब भूगोल तथा इतिहास के पाठ केवल कक्षा की चाहरदीवारी के अन्दर न पढाकर परिभ्रमण एवं शिक्षा-यात्राओं के माध्यम से पढाये जाते हैं।

4. शिक्षा में खेल की प्रमुखता इस विचारधारा की ही देन है। इससे पूर्व खेल व्यर्थ की चीज समझा जाता था। प्रकृतिवाद ने खेल को स्वाभाविक तथा आवश्यक सिद्ध किया।

5. 'प्रकृति की ओर लौटो' इस विचारधारा का नारा है। इसका कथन है 'सभ्यता की जटिलता से दूर प्रकृति की शान्तिमयी गोद की ओर चलो।' इस प्रवृत्ति ने प्रकृति-प्रेम में वृद्धि की।

6.केवल पुस्तकीय ज्ञान को हटाकर अनुभव तथा ज्ञान को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

अन्त में यह कह देना आवश्यक होगा कि इंग्लैण्ड में नील के स्कूल में तथा डोरा रसेल के स्कूल में इस प्रक्रियावादी विचारधारा पर आधारित, स्वतंत्रता तथा सरलता के वातावरण में, मूल प्रवृत्ति के आधार पर, स्वयंचालित शिक्षा दी जाती थी। इन स्कूलों में भेद न होने के कारण तथा स्वस्थ विचारधाराओं के कारण चरित्र संबंधी शिकायत कभी नहीं चलती थी। यहां शिक्षा भी खेल के ऊपर

आधारित थी। पुस्तकीय ज्ञान का महत्व कम है। अतः डोरा रसेल के विद्यालय में इस पर अधिक बल नहीं था। पर, यह कहना भ्रामक न होगा कि केवल प्रकृतिवाद ही बालक की रूचि पर बल देने वाली विचारधारा नहीं है। आदर्शवाद भी बालक के महत्व को कम न करेगा। कहना न होगा कि यदि प्रकृति को आदर्शवाद का संबल मिल जाये तो पाशविक एवं आध्यात्मिक दोनों अवस्थाओं से मनुष्य का उचित संबंध स्थापित हो जाएगा।

अपनी उन्नति जानिए ((Check your Progress))

प्र.1. ''मन व शरीर में कोई अन्तर नहीं है।'' ;(No distinction between mind and body) विचारधारा है-

(अ) आदर्शवाद (ब) प्रयोज्यवाद (स) अस्तित्ववाद (द) प्रकृतिवाद

प्र.2. ''वैज्ञानिक ज्ञान ही उचित ज्ञान होता है। हम इस वैज्ञानिक ज्ञान को जीवन से जोड़ सकें।'' यह विचारधारा है-

(अ) आदर्शवाद (ब) प्रकृतिवाद (स) प्रयोजनवाद (द) अस्तित्ववाद

प्र.3. ''इस संसार में सर्वोच्च शक्ति प्रकृति के हाथों में निहित है और प्रकृति के नियम अपरिवर्तनशील हैं''। यह विचारधारा है-

(अ) आदर्शवाद (ब) प्रकृतिवाद (स) अस्तित्ववाद (द) प्रयोजनवाद

प्र. 4. किसने शिक्षा की विधि में शब्दों की अपेक्षा अनुभवों पर बल दिया है ?

(अ) प्रकृतिवाद (ब) प्रयोजनवाद (स) आदर्शवाद (द) अस्तित्ववाद

प्र.5. ''सभ्यता की जटिलता से दूर प्रकृति की शान्तिमयी गोद की ओर चलो''। यह विचारधारा है-

(अ) अस्तित्ववाद (ब) प्रकृतिवाद (स) प्रयोजनवाद (द) आदर्शवाद

10.6 सारांश (Summary)

शिक्षा के क्षेत्र में प्रकृतिवाद का प्रभाव दो रूपों में दिखलाई पड़ता है- एक तो दर्शन के रूप में उसने शिक्षा के लक्ष्यों और उद्देश्यों को निश्चित किया है। दूसरे उसने मानव प्रकृति की व्याख्या

करके शिक्षण विधियों और शिक्षा के साधनों की व्याख्या की है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रकृतिवाद न तो भौतिक जगत का प्रकृतिवाद है, न यांत्रिक प्रकृतिवाद और न जैवकीय प्रकृतिवाद। इन तीनों से भिन्न वह एक नमनीय व्याख्या है जो कि शिक्षा को बालक के संपूर्ण अनुभव पर आधारित करना चाहती है और किताबी ज्ञान के विरूद्ध अर्थात् प्रकृतिवाद के बनाए हुए शिक्षा के चित्र में बालक सबसे आगे होता है। शिक्षक, विद्यालय, पुस्तकें, पाठ्यक्रम आदि सब पृष्ठभूमि में होते हैं। सर जॉन एडम्स ने इस प्रवृत्ति को बाल केन्द्रित अभिवृत्ति (Paidocentric attitude) कहा है। प्रकृतिवादियों के अनुसार बालक पर पूर्ण आयोजित शिक्षा लादी नहीं जानी चाहिए। चाहे वह कितनी भी वैज्ञानिक क्यों न हो। शिक्षा में बालक को स्वतंत्र चुनाव का अवसर देना चाहिए। वह क्या पढ़ेगा, किस तरह व्यवहार करेगा, किस तरह खेलेगा-कूदेगा, कैसे बैठेगा आदि बातें उसकी इच्छा पर छोड़ देनी चाहिए। साथ ही शिक्षा का स्थान शासक का नहीं बल्कि मित्र और साथी का है। शिक्षक का कार्य उसे सामग्री जुटाना, अवसर उत्पन्न करना, आदर्श परिवेश का निर्माण करना है। जिससे बालकों का सर्वांगीण विकास हो सके। प्रकृतिवादी शिक्षा-प्रणालियो के विषय में खेल प्रणाली पर जोर देता है तथा पाठ्यक्रम बहुमुखी और व्यापक हो, इसमें समाजशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक प्रवृत्ति के अतिरिक्त शिक्षा के लक्ष्यों और पाठ्यक्रम की ओर समाहारक प्रवृत्ति दिखलाई पड़ती है। लगभग बहुमुखी पाठ्यक्रमों और पाठ्यक्रमोत्तर कार्यक्रमों का महत्व स्वीकार किया गया है।

10.7 शब्दावली (Glossary)

1. भौतिक जगत का प्रकृतिवाद- यह सिद्धान्त मानव-क्रियाओं, व्यक्तिगत अनुभवों, संवेगों, अनुभूतियों आदि की भौतिक विज्ञान से व्याख्या करना चाहता है। यह भौतिक विज्ञान के द्वारा समस्त जगत की व्याख्या करना चाहता है।

2. स्वचालित आत्म-क्रिया (Spontaneous Self-activity) - स्पेन्सर का विचार है कि बालक किन्हीं अन्य के प्रयासों द्वारा नहीं सीखता, अपितु वह स्वयं अपनी आत्म-क्रिया से सीखता है और स्वयं के प्रयासों द्वारा अर्जित ज्ञान ही वास्तविक व चिरस्थाई होता है।

3. प्रकृतिवाद की ओर लौटो- प्रकृतिवादी चाहते हैं कि सभ्यता की जटिलता से दूर प्रकृति की शान्तिमयी गोद की ओर चलो ताकि बालक का नैसर्गिक विकास हो सके।

4. यांत्रिक प्रकृतिवाद- इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त जगत एक यंत्र के समान कार्य कर रहा है। व्यक्ति एक सक्रिययंत्र से अधिक कुछ नहीं है। उसमें परिवेश के प्रभाव के कारण कुछ सहज क्रिया होती है। यंत्रवाद के प्रभाव से मनोविज्ञान में व्यवहारवादी सम्प्रदाय का जन्म हुआ।

10.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)

भाग-1

उत्तर-1 भौतिकवाद के लिए पुदगल मूल तत्व है, मनस् है मस्तिष्क $ उसकी क्रिया। पुदगल ही मनस का उद्गम है, न कि मनस पुदगल का प्रेरक। चेतना इस मस्तिष्क का उपफल है। भौतिकवादी संसार को एक यंत्र मानते हैं और उनके लिए जीवित प्राणी तो केवल अणु-परमाणु इत्यादि का जोड़ है।

उत्तर-2 प्रकृति से हमारा अभिप्राय समस्त विश्व तथा उसकी क्रिया और इस अर्थ में मनुष्य जो कुछ भी करता है, वह प्राकृतिक है। शिक्षा में इस का अर्थ होगा विश्व की क्रिया का अध्ययन और उसे जीवन में उतार देना।

उत्तर-3 (ब) थॉमस और लैग

उत्तर-4 यांत्रिक प्रकृतिवाद (Mechanical Naturalism) समस्त जगत एक यंत्र के समान कार्य कर रहा है और वह यंत्र जड़तत्व का बना है, जिसमें स्वयं उसको चलाने की शक्ति है। इस प्रकार प्रकृतिवाद का यह रूप जड़वाद है। व्यक्ति एक सक्रिय यंत्र से अधिक कुछ नहीं है। उसमें परिवेश के प्रभाव के कारण कुछ सहज क्रियाएं होती हैं।

भाग-2

उत्तर-1 (i) प्रकृतिवाद के अनुसार समाज व्यक्ति के लाभ के लिए है। अतः समाज का स्थान व्यक्ति के बाद आता है।

(ii) प्रकृति के नियम अपरिवर्तनीय हैं। अपरिवर्तनीय प्राकृतिक नियम सब घटनाओं को भली प्रकार स्पष्ट करते हैं।

उत्तर-2 (A) रूसो

उत्तर-3 (i) शिक्षा द्वारा बालक को प्राकृत जीवन व्यतीत करने हेतु तैयार करना।

(ii) बालकों को इस प्रकार का ज्ञान व दक्षता प्रदान करना जिससे कि वह अपने पर्यावरण के साथ समायोजित हो सके।

उत्तर-4 प्रकृतिवाद की दो शिक्षण विधियां हैं:-

(i) प्रकृति के अनुरूप शिक्षा (Education According to Nature)

(ii) शिक्षा आनन्द प्रदायनी (Education is for Enjoyment)

उत्तर-5 प्रकृतिवाद में नियमानुसार शामिल हैं, जैसे-शरीर विज्ञान, रोजगार हेतु गणित, सामाजिक अध्ययन के सभी विषय, साहित्य, संगीत, ललितकला, मनोविज्ञान आदि।

भाग-3

उत्तर- 1 (D)

3 (D)

4 (A)

5 (B)

10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड

डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई

दिल्ली।

6. शर्मा, रामनाथ व शर्मा राजेन्द्रकुमार (2006) एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

10.10 उपयोगी सहायक ग्रन्थ (Useful Books)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड

डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन, नई

दिल्ली।

10.11 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long answer type Question)

प्र.-1 प्रकृतिवाद के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों और पाठ्यक्रम के स्वरूप की व्याख्या कीजिए।

प्र-2 प्रकृतिवादी शिक्षा के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।

प्र-3 प्रकृतिवाद का क्या अर्थ है? शिक्षा के सिद्धान्त को इसने किस प्रकार प्रभावित किया है ?

प्र-4 प्रकृतिवादी दर्शन की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं ? व्याख्या कीजिए।

प्र-5 प्रकृतिवादी शैक्षिक उद्देश्यों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

प्र-6 प्रकृतिवाद के विविध रूप कौन-कौन से हैं

इकाई-11: प्रयोजनवाद और शिक्षा- उद्देश्य, प्रक्रिया, पाठ्यक्रम, अनुशासन, अध्यापक की भूमिका (Pragmatismand Education Aims, Process, Curriculam, Discipline, Role of teacher)

11.1 प्रस्तावना Introduction
11.2 उद्देश्य Objectives
भाग-1
11.3 प्रयोजनवाद और शिक्षा Pragmatism and Education
11.3.1प्रयोजनवाद की तत्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा, आचार मीमांसा
Metaphysics, Epistemology and Ethics of Pragmatism
11.3.2 प्रयोजनवाद का अर्थ Meaning of Pragmatism
11.3.3 प्रयोजनवाद की परिभाषाएं Definition of Pragmatism
11.3. प्रयोजनवाद प्रक्रिया (Pragmatism Process)
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-2
11.4 प्रयोजनवाद की शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Pragmatism)
11.4.1प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम Pragmatism Curriculum
11.4.2 प्रयोजनवादी तथा अनुशासन Pragmatic and Discipline
अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
भाग-3
11.5 प्रयोजनवाद व शिक्षक (Pragmatism and teacher)
11.5.1 प्रयोजनवाद का आधुनिक शिक्षा पर प्रभाव Impact of Pragmatism on Modern Education

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)
11.6 सारांश Summary
11.7 शब्दावली (Glossary)
11.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर Answer of Practice Questions

11.9 सन्दर्भ Reference
11.10 सहायक/उपयोगी पुस्तकें Useful Books
11.11 निबन्धात्मक प्रश्न Essay Types Question

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रयोगवाद एक आधुनिक अमेंरिकी जीवन दर्शन है। यह अमेंरिकी राष्ट्र के जीवन तथा विचार का प्रतिनिधित्व करता है। वस्तुतः अमेंरिका नव निवासियों का देश है। विशेषकर पश्चिमी यूरोप के प्रगतिशील निवासी ही वहां जाकर 16वीं-17वीं शताब्दी में बस गए। वहॉ उन्हें सर्वथा नई स्थितियां, समस्याओं एवं वातावरण का सामना करने के लिए कोई पूर्व निर्मित समाधान नहीं था। इसलिए वे अपने जीवन का मार्ग खुद प्रस्त किये। जीवनगत समस्याओं का समाधान भी उन्हें नये तरीके से स्वयं ढूंढना पड़ा। यहां तक कि पूर्व मान्यताएं स्वतः ही बिखरने लगीं तथा नवीन उपयोगी विचारधारा का जन्म हुआ। यही विचारधारा प्रयोजनवाद के नाम से अभिहित हुई। उसके अनुसार वही दर्शन सही है जिसका नाता मानव जीवन तथा मानव क्रियाकलापों से ही प्रयोजनवाद निश्चित एवं शाश्वत् मूल्यों के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करता है। वह तो जीवन और समाज के लिए उपयोगी एवं व्यावहारिक सिद्धान्तों को स्वीकार करता है। जिनके सहारे मानव अपनी जीवनगत समस्याओं का समाधान ढूंढने में सफल होता है। यह आसमान को कम, धरती को ज्यादा महत्व देता है।

प्रयोजनवाद का उत्पत्ति स्थल अमेंरिका है, जहां एक दर्शन के रूप में इसका विकास हुआ। चार्ल्स पियर्स तथा विलियम जेम्स इस विचारधारा के प्रतिपादक माने जाते हैं। जेम्स ने मानव अनुभव के महत्व को स्पष्ट किया और मानव को समस्त वस्तुओं और क्रियाओं की सत्यता की कसौटी बताया। जेम्स के बाद अमेंरिका के ही एक विचारक जॉन डीवी ने इस विचारधारा को आगे बढ़ाया। डीवी ने व्यक्ति की इच्छा को सामाजिक परिप्रेक्ष्य में स्वीकार किया। उनके अनुसार मानव प्रगति का आधार सामाजिक बुद्धि ही होती है। डीवी के बाद अमेंरिका में उनके शिष्य किलपैट्रिक ने इस विचारधारा को आगे बढ़ाया और इंग्लैण्ड में शिलर महोदय ने। इन सबमें डीवी का योगदान सबसे अधिक है। प्रयोजनवादी किसी निश्चित सत्य में विश्वास नहीं करते। उनके विचार से दर्शन भी सदा निर्माण की स्थिति में रहता है। चूंकि मानव जीवन परिवर्तनशील है, अतः इस प्रकार की शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्य चर्चा आदि का निर्माण न करके उनके निर्माण के सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं। इस विचारधारा के प्रमुख दार्शनिक एवं शिक्षाविद् जॉन डीवी माने जाते हैं।

11.2 उद्देश्य (Objectives)

1. प्रयोजनवाद व शिक्षा के संबंध में जान सकेंगे।

2. प्रयोजनवाद दर्शन के अर्थ और परिभाषाएं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3. प्रयोजनवाद के दार्शनिक रूपों का अध्ययन कर सकेंगे।

4. प्रयोजनवाद के प्रमुख सिद्धान्तों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

5. प्रयोजनवाद की प्रमुख विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।

6. अस्तित्ववादी शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

7. अस्तित्ववादी शिक्षक, विद्यार्थी व शिक्षण विधि के बारे में जान सकेंगे।

भाग-1

11.3 प्रयोजनवाद (Pragmatism)

प्रयोजनवाद एक व्यावहारिक व अद्वितीय दर्शन है, जिसमें प्रकृतिवाद व आदर्शवाद की प्रमुख विशेषताओं को समन्वित करने का प्रयास किया है। जॉन ड्यूवी ने अर्थ क्रियावाद की उपयोगिता को शिक्षा के क्षेत्र में भी बहुत अधिक माना है। कुछ शिक्षा दार्शनिक तो यहां तक कहते हैं कि आधुनिक शिक्षा का युग प्रयोजनवाद का युग है। प्रसिद्ध दार्शनिक ड्यूवी ने शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा है, ''शिक्षा अनुभव का पुनर्निर्माण अथवा पुनर्रचना करने वाली प्रक्रिया है जिससे कि विवृद्ध वैयक्तिक कुशलता के माध्यम द्वारा उसे अधिक सामाजिक मूल्य प्राप्त होता है।'' वह यह मानता है कि मनुष्य की शिक्षा की प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है। चूंकि अनुभव द्वारा वह कुछ न कुछ ग्रहण करता रहता है। नित्य प्रति मानवीय परिस्थितियां बदलती हैं और मनुष्य उनके अनुकूल अपनी क्रियाओं को भी बदल लेता है। नये परिवेश में व्यक्ति जब अपनी समस्याओं का हल ढूंढता है तो उसके अनुभव विकसित होने लगते हैं। यह समृद्ध अनुभव ही शिक्षा है। जॉन ड्यूवी शिक्षा को एक व्यापक प्रक्रिया के रूप में देखते हैं जो विद्यालय के साथ ही समाज में भी चलती रहती है। इसी कारण अर्थ क्रियावादी यह मानता है कि शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली एक प्रक्रिया है अथवा शिक्षा जीवन है और जीवन शिक्षा।

11.3.1 प्रयोजनवाद की तत्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा, आचार मीमांसा

Metaphysics, Epistemology and Ethics of Pragmatism

प्रयोजनवाद की तत्व मीमांसा Metaphysics of Pragmatism

प्रयोजनवादी इस ब्रह्माण्ड की रचना के संबंध में विचार करने के स्थान पर मनुष्य जीवन के वास्तविक पक्ष पर अपना ध्यान केन्द्रित रखते हैं। वे इस ब्रह्माण्ड के बारे में केवल इतना ही कहते हैं कि यह अनेक वस्तुओं और अनेक क्रियाओं का परिणाम है, वस्तु और क्रियाओं की व्याख्या के

झमेंले में ये नहीं पड़ते। इस इन्द्रियग्राह संसार के अतिरिक्त ये किसी अन्य संसार के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते। ये आत्मा-परमात्मा के अस्तित्व को भी नहीं स्वीकारते। इनके अनुसार मन का ही दूसर नाम आत्मा है और मन एक पदार्थ जन्म क्रियाशील तत्व है।

प्रयोजनवाद की ज्ञान मीमांसा Epistemology of Pragmatism

प्रयोजनवादियों के अनुसार अनुभवों की पुनर्रचना ही ज्ञान है। ये ज्ञान को साध्य नहीं अपितु मनुष्य जीवन को सुखमय बनाने का साधन मानते हैं। इसकी प्राप्ति सामाजिक क्रियाओं में भाग लेने से स्वयं होती है। कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों को ये ज्ञान का आधार मानते हैं और मस्तिष्क तथा बुद्धि को ज्ञान का नियंत्रक।

प्रयोजनवाद की आचार मीमांसा Ethics of Pragmatism

प्रयोजनवादी निश्चित मूल्यों और आदर्शो में विश्वास नहीं करते इसलिए ये मनुष्य के लिए कोई निश्चित आचार संहिता नहीं बनाते। इनका स्पष्टीकरण है कि मनुष्य जीवन में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है इसलिए उसके आचरण को निश्चित नहीं किया जा सकता। उसमें तो वह शक्ति होनी चाहिए कि वह बदले हुए पर्यावरण में समायोजन कर सके। वे बच्चों में केवल सामाजिक कुशलता का विकास करना चाहते हैं। सामाजिक कुशलता से व्यावहारिकतावादियों का तात्पर्य समाज में समायोजन करने, अपनी जीविका कमाने, मानव उपयोग की वस्तु एवं क्रियाओं की खोज करने और नई-नई समस्याओं का समाधान करने की शक्ति से होता ह

11.3.2 प्रयोजनवाद का अर्थ Meaning of Pragmatism

प्रयोजनवाद आंग्ल भाषा के 'प्रैग्मैटिज्म' (Pragmatism) शब्द का हिन्दी रूपान्तर है, जिसकी व्युत्पत्ति ग्रीक भाषा के 'प्रैग्मा' (Prama)शब्द से हुई है, जिसका तात्पर्य है 'क्रिया' अर्थात् 'व्यावहारिक' या 'व्यवहार्य'। दूसरे शब्दों में प्रयोजनवाद वह विचारधारा है जो उन्हीं बातों को सत्य मानती है, जो व्यावहारिक जीवन में काम आ सकें। प्रयोजनवादी मूर्त वस्तुओं, शाश्वत सिद्धान्तों और पूर्णता तथा उत्पत्ति में विश्वास नहीं करते। इनके अनुसार सदैव देशकाल तथा परिस्थिति के अनुसार सत्य परिवर्तित होता रहता है, क्योंकि एक वस्तु जो एक देश, काल तथा परिस्थिति में उपयोगी होती है वह दूसरे में नहीं। प्रयोगवाद को 'प्रयोजनवाद' भी कहा जाता है, क्योंकि यह 'प्रयोग' (Experiment0 को ही सत्य की एकमात्र कसौटी मानता है। इसे हम 'फलवाद' भी कह सकते हैं, क्योंकि इसमें किसी कार्य का मॅलय उसके परिणाम या फल के आधार पर आंका जाता है।

इस प्रकार, ''प्रयोजनवाद जिसे हम प्रयोगवाद या फलवाद भी कह सकते हैं, वह विचारधारा है जो उन्हीं क्रियाओं, वस्तुओं, सिद्धान्तों तथा नियमों को सत्य मानती है, जो किसी देश, काल और परिस्थिति में व्यावहारिक तथा उपयोगी हो।''

11.3.3 प्रयोजनवाद की परिभाषाएं Definition of Pragmatism

(1) रस्क के अनुसार (According to Rusk) - ''प्रयोजनवाद एक प्रकार से नवीन आदर्शवाद के विकास की अवस्था है, एक ऐसा आदर्शवाद जो वास्तविकता के प्रति पूर्ण न्याय करेगा, व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का समन्वय करेगा और इसके परिणामस्वरूप उस संस्कृति का निर्माण होगा जिसमें निपुणता का प्रमुख स्थान होगा, न कि उसकी उपेक्षा होगी।''

(2) जेम्स के अनुसार (According to Jams) - ''प्रयोजनवाद मस्तिष्क का स्वभाव तथा मनोवृत्ति है। यह विचारों की प्रकृति एवं सत्य का भी सिद्धान्त है और अपने अंतिम रूप में यह वास्तविकता का सिद्धान्त है।'' (Pragmatism is a temper of mind an attitude. It Is also a thing of nature of ideas and truth and finally it is a thing about reality)

(3) रॉस के अनुसार (According to Ross)- ''प्रयोजनवाद एक मानवीय दर्शन है जो यह स्वीकार करता है कि मनुष्य क्रिया की अवधि में अपने मूल्यों का निर्माण करता है और यह स्वीकार करता है कि वास्तविकता सदैव निर्माण की अवस्था में रहती है।'' (Pragmatism is essently a humanistic philosophy, maintain that man creates his own values in course of activity, that reality is still in making and awaits its past of completion from that future)

(4) जैम्स प्रैट के अनुसार (According to Jams Prett) - ''प्रयोजनवाद हमें अर्थ का सिद्धान्त, सत्य का सिद्धान्त, ज्ञान का सिद्धान्त और वास्तविकता का सिद्धान्त देता है।'' (Pragmatism offers us a theory of meaning, a theory of truth , a theory of knowledge and a theory of Knowledge.)

(5) रोजन के अनुसार (According to Rosen) - ''प्रयोजनवाद के अनुसार सत्य को उसके व्यावहारिक परिणामों द्वारा जाना जा सकता है। इस कारण सत्य निरपेक्ष न होकर व्यक्तिगत या सामाजिक समस्या है।'' (Pragmatism states that truth can be known only through its practical consequence and is thus an Individual or social matter rather than an absolute)

वास्तव में देखा जाए तो अर्थ क्रियावाद व्यावहारिकता या क्रिया पर बल देता है।

11.3.4 प्रयोजनवाद प्रक्रिया (Pragmatism Process)

प्रयोजनवाद किसी निश्चित अथवा शाश्वत सत्य अथवा सिद्धान्त की सत्ता को स्वीकार नहीं करता। वह यह मानते हैं कि मूल्य तो मानव की व्यक्तिगत व सामाजिक घटनाओं के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं जो सदैव परिवर्तनशील होते हैं। वह यह मानते हैं कि विश्व गतिशील है। अतः मूल्य भी गतिशील होते हैं। वास्तव में मूल्यों का निर्माण तो व्यक्ति स्वयं अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप करता है। आज जो 'सत्य' है, वह कल भी 'सत्य' होगा। सोचना गलत है चूंकि सत्य तो देश, काल व परिस्थितियों के अनुकूल बदलता रहता है। प्रयोजनवाद क्रिया को सर्वोच्च स्थान देता है व यह मानता है कि कोई भी विचार तभी सार्थक हो सकता है जब हम उसे क्रिया रूप में हस्तांतरित करें। वास्तव में देखा जाए तो क्रिया ही विचारों को अर्थ प्रदान करती है और उनका महत्व निर्धारित करती है। हॉ, इस बात को भी स्वीकार करते हैं कि विचार आंतरिक वस्तु है व क्रिया बाह्य। अर्थ क्रियावाद निर्धारित आस्थाओं का विरोधी है। प्रकृतिवाद द्वारा प्रकृति के अस्थित्व में विश्वास रखना अथवा आदर्शवाद द्वारा एक चिरस्थायी सत्य को यह स्वीकार नहीं करता। यह विचारों की अपेक्षा क्रिया को अधिक महत्व देता है व यह मानता है कि वास्तविकता एक निर्माणशील प्रक्रिया है और उसके संबंध में हम किसी भी सामान्य सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं कर सकते हैं। वह यह मानते हैं कि सत्य तो व्यावहारिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है और ज्ञान भी क्रियाओं का ही परिणाम है। क्रियाओं को सुचारू रूप से चलाने हेतु ज्ञान की आवश्यकता होती है।

अर्थ क्रियावाद प्रजातंत्र शासन व्यवस्था पर बल देकर उसके प्रति अपनी आस्था अभिव्यक्त करता है। वह प्रजातंत्र को जीवन का एक तरीका व अनुभवों का आदान-प्रदान करने की एक व्यवस्था के रूप में देखता है। वह जीवन, शिक्षा व प्रजातंत्र को एक-दूसरे से संबंधित प्रक्रिया मानते हैं। प्रयोजनवाद ईश्वरीय सत्ता को स्वीकार नहीं करता। वह यह मानता है कि ईश्वरा मिथ्या है। आत्मा के अस्तित्व को वह मानता अवश्य है परन्तु उसे एक क्रियाशील तत्व के रूप में स्वीकार करता है। उनके अनुसार सर्वोच्च सत्ता समाज की होती है। इस संसार की रचना अनेक तत्वों से मिलकर हुई है और इन तत्वों के मध्य क्रिया चलती रहती है, जिसके परिणामस्वरूप रचनात्मक कार्य होता है। सबसे बड़ी बात यह है कि यह क्रिया सदैव चलती रहती है व संसार की रचना करती रहती है। इसी कारण प्रयोजनवाद के अनुसार यह संसार सदैव निर्माण की अवस्था में रहता है। मनुष्य इस संसार का सृजनशील प्राणी है। अतः मनुष्य भी सदैव क्रियाशील रहता है। प्रयोजनवाद मनुष्य को एक मनोशारीरिक प्राणी मानता है। इनके अनुसार मनुष्य को विचार व क्रिया करने की शक्तियां प्राप्त हैं, जिनके माध्यम से मनुश्य समस्या को समझने व उनका हल ढूंढने का प्रयास करता है और अन्ततोगत्वा वह स्वयं को अपने वातावरण के अनुकूल ढालने का प्रयास करता है।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र. 1 प्रयोजनवाद की उत्पत्ति स्थल किस देश को माना जाता है?

A. भारत B. अमेंरिका C. इंग्लैण्ड D. रूस

प्र. 2 जॉन ड्यूवी किस देश के रहने वाले थे?

A. भारत B. चीन C. अमेंरिका D. जर्मनी

प्र. 3 प्रयोजनवाद को किस-किस नाम से जाना जाता है?

प्र. 4 प्रयोजनवाद क्रिया को सर्वोच्च स्थान देता है

A. सत्य B. असत्य

प्र. 5 प्रयोजनवाद क्रिया की अपेक्षा विचारों को अधिक महत्व देता है-

A. सत्य B. असत्य

प्र. 6 ''शिक्षा बालक के लिए है, बालक शिक्षा के लिए नहीं'' यह विचारधारा है-

A. प्रयोजनवाद B. प्रकृतिवाद C. आदर्शवाद D. अस्तित्ववाद

भाग-2

11.4 प्रयोजनवाद की शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Pragmatism)

प्रयोजनवादी मानव की शक्ति पर विशेष बल देता है, क्योंकि वह उसके द्वारा अपनी आवश्यकतओं के अनुसार वातावरण बना लेता है। वह सफलतापूर्वक समस्याओं का समाधान करके अपने लिए सुन्दर वातावरण निर्मित कर लेता है। प्रयोजनवाद बहुत्ववाद का समर्थक है। रस्क महोदय ने इस तथ्य पर विचार करते हुए लिखा है-''प्रकृतिवाद प्रत्येक वस्तु को जीवन या (भौतिक तत्व), आदर्शवाद मन या आत्मा मानता है। प्रयोजनवाद बहुत्ववादी है।'' प्रयोजनवाद के अनुसार केवल वही वस्तु अथवा विचार ठीक है जो हमारे लिए उपयोगी है और इसके विपरीत जो वस्तु या विचार हमारे लिए उपयोगी नहीं है वह हमारेलिए व्यर्थ है। । प्रयोजनवादी व्यावहारिक जीवन से संबंध रखना उचित समझते हैं। ईश्वर, आत्मा, धर्म इत्यादि का व्यावहारिक जीवन से संबंध न होने के कारण इनका कोई महत्व नहीं है। हॉ, यदि व्यावहारिक जीवन में उनकी आवश्यकता अनुभव हो तो वे उन्हें स्वीकार करने में भी नहीं चूकते। कुछ भी हो प्रयोजनवादी आध्यात्मिक तत्वों की उपेक्षा करते हैं।

प्रयोजनवाद की शिक्षा का उद्देश्य न केवल व्यक्ति के जीवन की सफलता है वरन सामाजिक जीवन की सफलता है इसलिय सभ्यता,व्यावसायिक तथा उदार शिक्षा के मूल्य,सभी उसमें आवश्यक है।

शिक्षा के उद्देश्यो को निम्न प्रकार व्यक्त कर सकते है।

1. ज़ीवन का वास्तविक अनुभव प्रदान करना :- यह शिक्षा 'क्रिया के द्वारा सीखने ' के सिद्धांत की पोषिका है। यह शिशू को जिवन का वास्तविक अनुभव प्रदन कर व्यावहारिक एवँ सक्षम नागरिक बनाना चाहती है।

2. पूर्वाग्रह एव रूढि से मुक्ति :- मानव युगो से परम्पराओ एवँ रुढियो का शिकार रहा है। अतः प्रयोजंनवादी शिक्षा उसे मुक्ति दिलाकर प्रगति एवँ विकास के पथ पर अग्रसर करना चाहती है।

3. गतिशील निर्देशन :- प्रयोजंवादयो के अनुसार शिक्षा का एक उद्देश्य छात्रो को गतिशील निर्देशन करना है। पर केवल इतना कह देना ही काफी नही है। गतिशील निर्देशन की व्याख्याकी जानी आवश्यक है।

4.विधार्थियो क विकास :- प्रयोकजनवादियो के अनुसार शिक्षा का एक उद्देश्य है- विधार्थियो क विकास । इस उद्देश्य की दो कारणो से अति कटु आलोचना की गयीहै। इस विकास क न तो कोई अंत है। और न कोई लक्ष्य- सिवाय इसके की विकास का और अधिक विकास हो। दूसरा विकास की दिशा गलत हो सकती है। अतः प्रयोजनवादियो को विकास की दिशा भी स्पष्ट होनी चाहिय थी।

5.सामाजिक एवँ उपयोगी मानव कानिर्माण:- इस शिक्षा का दूसरा बडा उद्देश्य है कि सामाजिक एवँ मानव का निर्माण। सामाजिक दक्षता एवँ नागरिकता के गुणो से मानव को विभूषित करना इस शिक्षा का विशेष उद्देश्य है।

6. मूल्यो एवँ आदर्शो के निर्माण करने की क्षमता का विकास :- प्रयोजंवादी दार्शनिको के अनुसार बालक को स्वम अपने मूल्यो और आदर्शो का निर्माता होना चाहिय। इस प्रकार प्रयोजनवादी शिक्षा का कोई उद्देश्य हो सकता है। तो वह यह है- बालक को अपने मूल्यो और आदर्शो का निर्माण करने के योग्य बनाना। इस उद्देश्य की प्रप्ति के लिय प्रयोजनवादी उन परिस्थितियो का निर्माण करने में सहायता देती है।

11.4.1 प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम Pragmatism Curriculum)

प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम निम्नलिखित बातों पर आधारित हैः-

1. उपयोगिता सिद्धान्त (Principle of Utility) - प्रयोजनवादियों के अनुसार पाठ्यक्रम में ऐसे नियमों को स्थान देना चाहिए जो बालकों के भावी जीवन में काम दें और उन्हें ज्ञान तथा सफल जीवन की क्षमता प्रदान करें। इस दृष्टि से उनके अनुसार पाठ्यक्रम में भाषा, स्वास्थ्य विज्ञान, शारीरिक प्रशिक्षण, इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान-बालिकाओं को गृह-विज्ञान आदि विषयों को स्थान देना चाहिए जो कि मानव प्रगति में सहायक हों।

2. सानुबंधित का (Principle of Integration) - प्रयोजनवादियों का विचार है कि जो विषय पाठ्यक्रम में निर्धारित किए जायें उन सबमें आपस में संबंध होना चाहिए, क्योंकि ज्ञान का पृथक-पृथक विभाजन नहीं होता। उनका विचार है कि बालकों को समस्त विषय एक-दूसरे से संबंधित कर पढ़ाने चाहिए, जिससे न केवल बालकों का ज्ञान प्राप्त करना सार्थक हो वरन् शिक्षकों को पढ़ाने में भी सुविधा हो।

3. बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम (Child-Centered Curriculum)- प्रयोजनवादियों का विचार है कि पाठ्यक्रम का संगठन इस प्रकार करना चाहिए कि उसमें बालक की प्राकृतिक अभिरूचियों को पूर्ण स्थान हो। बालक की ये अभिरूचियां मुख्य रूप से चार हैं- 1. बातचीत करना, 2. खोज करना, 3. कलात्मक अभिव्यक्ति एवं 4. रचनात्मक कार्य करना। इस दृष्टि से पाठ्यक्रम में लिखने, पढ़ने, गिनने, प्रकृति विज्ञान, हस्तकार्य एवं ड्राइंग का अध्ययन करने के साधनों को स्थान मिलना चाहिए।

4. बालक के व्यवसाय, क्रियाओं एवं अनुभव पर आधारित (On the base of Child's Occupation Activities and Experience)- प्रयोजनवादियों का विचार है कि पाठ्यक्रम का संगठन बालक के व्यवसायों एवं अनुभव पर आधारित होना चाहिए। उनका विचार है कि किताबों को केवल रट लेना शिक्षा नहीं है बल्कि यह तो एक सुविचार प्रक्रिया है, फलस्वरूप पाठ्यक्रम में शिक्षा विषयों के अतिरिक्त सामाजिक, स्वतंत्र एवं उद्देश्यपूर्ण क्रियाओं को स्थान मिलना चाहिए, जिससे कि बालकों में नैतिक गुणों का विकास होगा, स्वतंत्रता की भावना का संचार होगा, उन्हें नागरिकताकी प्रतिक्षा मिलेगी तथा उनमें आत्म-अनुशासन की भावना पैदा होगी।

11.4.2 प्रयोजनवादी तथा अनुशासन Pragmatic and Discipline

प्रयोजनवादी विचार अथवा शब्द की अपेक्षा क्रिया पर अधिक जोर देते हैं। उनका विचार है कि बालकों को पुस्तकों की अपेक्षा क्रियाओं और अनुभवों से अधिक सीखना चाहिए जिससे कि उनके ज्ञान का व्यावहारिक मूल्य अधिक हो, फलस्वरूप वह 'करके सीखने अथवा स्वानुभव द्वारा सीखने' (Learning by doing or Experience) पर विशेष महत्व देते हैं। शिक्षा इस प्रकार होनी चाहिए जो बालक की अभिरूचियों, आवश्यकताओं, उद्देश्यों आदि के अनुकूल हो, जिससे कि बालक प्रसन्नतापूर्वक अपने जीवन में काम आने वाली शिक्षा ग्रहण कर सके। समस्त विषयों को परस्पर संबंधित कर पढ़ाना चाहिए, जिससे बालक जो ज्ञान और कौशल सीखते हैं, उनमें एकता स्थापित हो जाती है।

शिक्षा जब छात्र की समस्याओ तथा आवश्यकता की पूर्ति के लिय होगी तो अनुशासनहीनता की समस्या ही नही उठेगी । सामूहिक वातावरण में, स्वतंत्रता तथा रचनात्मक क्रियाओ में बालक स्वभाव से ही नियंत्रित रहता है। उसमें आत्मनिर्भरता, स्वालम्बन, सामाजिकता , सहयोग तथा

सहानुभूति आदि गुणो का विकास स्वाभाविक है। उसकी मूल-प्रवृतियो का सुधार स्वम हो जायगा। वैयक्तिक अनुशासन की आवश्यकता इस प्रणाली में नही है।

अपनी उन्नति जानिए ((Check your Progress))

प्र. 1 ''सत्य सदैव देश, काल एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होता रहता है, जो वस्तु एक स्थान पर सत्य है आवश्यक नहीं कि वह दूसरे स्थान पर भी सत्य होगी।'' यह विचारधारा है-

A. अस्तित्ववाद B. प्रयोगवाद C. आदर्शवाद D. प्रकृतिवाद

प्र. 2 प्रयोजनवाद समर्थन करता है-

A. एकत्ववाद (Mononism) B. द्वैतवाद (Dualism) C.बहुत्ववाद (Pluralism)

प्र. 3 ''विभिन्नता में एकता के सिद्धान्त (Principal of Utility In Diversity) का समर्थन करते हैं।'' यह विचारधारा है-

A. फलवाद/प्रयोजनवाद B. आदर्शवाद C. प्रकृतिवाद D. अस्तित्ववाद

प्र. 4 ''प्रत्येक शिक्षण पद्धति को बाल केन्द्रित (Child-Cented) होना चाहिए।'' यह विचारधारा है-

A. प्राचीनकालीन B. आधुनिक C. अस्तित्ववादी D. प्रयोजनवादी

प्र. 5 ''मूल्य तो मानव की व्यक्तिगत व सामाजिक घटनाओं के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं जो सदैव परिवर्तनशील होते हैं।'' यह विचारधारा है-

A. प्रयोजनवाद B. अस्तित्ववाद C. प्रकृतिवाद D. आदर्शवाद

प्र. 6 प्रयोग (Experiment) को ही सत्य की एकमात्र कसौटी कौन मानता है ?

A. प्रकृतिवाद B. अस्तित्ववाद C. प्रयोजनवाद D. आदर्शवाद

भाग-3

11.5 प्रयोजनवाद व शिक्षक (Pragmatism and teacher)

किसी भी तरह की शिक्षण प्रक्रिया हो, शिक्षक की प्रमुख और निर्णायक भुमिका होती है। यथार्थ वादी विचारको के अनुसार शिक्षक को अपने विषय में विशेषज्ञता प्राप्त होनी चाहिय एवँ उससे

सम्बन्धित क्रियाओ में निपुण होना चाहिय। प्रयोजनवादी दार्शनिको के मतानुसार शिक्षको को छात्रो के अन्दर रहंत विधा का विकास कर्ना चाहिय जिससे बच्चे स्वावलम्बी बने और स्वम सही निर्णय लेने में समर्थ हो सके। इसके लिय अध्यापक को एक पथ प्रदर्शक और निरीक्षक की भूमिका निभानी चाहिय। शिक्षको क कर्तव्य है कि वे बच्चो को समस्याओ के प्रति सवेदंशील और उनके हल ढूढंने के लिए क्रियाशील बनाय जिससे वे अपने जीवन में किसी भी क्षण किसी भी समस्या को हल कर सके। उसे हर समय बहुत सर्तक रहना चाहिय औरबच्चो के साथ प्रेम एव सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिय। जिससे बच्चो में सामाजिक आदतो, सामाजिक रुचियो एवँ सामाजिक दृश्टिकोण का विकास सम्भव हो सके। प्रयोजनवाद में शिक्षको का महत्व निम्न दो बातो में निहित है।

1. उसे अपने विधार्थिओ को उचित समस्याओ वाली परिस्थिति में रखना चाहिय।
2. उसे विधार्थियो को इस बात के लिय प्रेरित करना चाहिय कि वे अपनी रुचियो के अनुसार समस्याओ को कुशलता, चतुराई , बुद्धिमानी एवँ आपसी सहयोग से हल कर सके।

11.5.2 प्रयोजनवाद का आधुनिक शिक्षा पर प्रभाव (Impact of Pragmatism on Modern Education)

दर्शन के रूप में नहीं वरन् व्यवहार के रूप में प्रयोजनवाद ने आधुनिक शिक्षा पर बहुत प्रभाव डाला है। शिक्षा एक व्यावहारिक कला है और व्यावहारिक दृष्टि से प्रयोजनवाद शिक्षा से पुनःनिर्माण में बहुत सहायक सिद्ध हुआ। प्रयोजनवादी शिक्षा की निम्नलिखित धाराएं आज भी भारतीय शिक्षा में स्पष्ट हैः-

1. शिक्षा व्यापक रूप से विकास वृद्धि या व्यहार परिवर्तन का रूप लेती है।

2. शिक्षा के निकट के उद्देश्य बहुत महत्व रखते हों और उनकी प्राप्ति के लिए शिक्षण विधियां प्रगतिशील हों।

3. शिक्षा जीवन केन्द्रित हो और एक प्रगतिशील समाज में वह भी प्रगति का परिचय दे।

4. शिक्षा के सामाजिक प्रक्रिया है और समाज का पोषण है।

5. समाज शिक्षा संस्थाओं को अपने आदर्शो की पूर्ति के लिए स्थापित करता है। अतः शिक्षण संस्थाएं समाज का बन्धु रूप है।

6. जनतंत्रीय समाज के लिए जनतंत्रीय शिक्षा की आवश्यकता है।

7. ज्ञान की उत्पत्ति क्रिया से होती है, क्रिया प्रधान है, सफलतापूर्वक क्रिया का संपादन करने के लिए वह ज्ञान आता है और बालक क्रिया द्वारा सीखता है।

8. शिक्षा बालक की नैसर्गिक प्रवृत्तियों, रूचियों, शक्तियों आदि को केन्द्र बनाकर दी जाये परन्तु उसको साथ ही साथ सामाजिक रूप भी दिया जाये। बालक अपने हित के साथ-साथ समाज का हित करने की क्षमता भी सीख ले।

9. परम्परागत, रूढ़िगत तथा कठोर विधियों व विचारों को शिक्षा में लाकर एक लचकदार समाज में एक लचकदार शिक्षा की आवश्यकता है।

10. शिक्षा जीवन की तैयारी ही नहीं जीवन का लक्ष्य है। भविष्य अनिश्चित है। अतः वर्तमान अधिक मूल्य रखता है। शिक्षा द्वारा बालकों को वह गुण, ज्ञान, मनोवृत्तियां व कौशल दिये जायें जो उन्हें एक बदलते हुए समाज में परिस्थितियों के अनुकूल अपना समाज में स्थान लेने योग्य बनाएं।

अपनी उन्नति जानिए ((Check your Progress))

प्र. 1 प्रयोजनवादी शाश्वत मूल्यों पर विश्वास करते हैं:-

A. सत्य B. असत्य

प्र. 2 प्रयोजनवादी भावना तथा परिस्थितियों से अधिक बुद्धि को अधिक महत्व देते हैं:-

A. सत्य B. असत्य

प्र. 3 प्रयोजनवादी शिक्षा में गतिशीलता व परिवर्तनशीलता पायी जाती है:-

A. सत्य B. असत्य

प्र. 4 प्रयोजनवादी 'पुद्गल' (Matter) से संसार की समस्त वस्तुओं तथा विचारों की उत्पत्ति मानते हैं। इस तरह से वे एक तत्ववादी हैं-

A. सत्य B. असत्य

प्र. 5 ''परम्परागत, रूढ़िगत तथा कठोर विधियों व विचारों को शिक्षा में लाकर एक लचकदार समाज में एक लचकदार शिक्षा की आवश्यकता है।'' यह विचारधारा है-

A. अस्तित्ववादी B. प्रकृतिवादी C. आदर्शवादी D. प्रयोजनवादी

11.6 सारांश (Summary)

शिक्षा दर्शन के रूप में प्रयोजनवाद का एक प्रगतिशील दर्शन है। वह शिक्षा को सामाजिक (Social) , गतिशील (Dynamic) और विकास की प्रक्रिया (Process of Development0 मानता है। उसके इस विचार ने प्रगतिशील शिक्षा (Progressive Education) को जन्म दिया है। वास्तववाद और प्रकृतिवाद ने शिक्षा को मनोवैज्ञानिक और वैज्ञानिक आधार ही दिए थे, व्यावहारिकतावाद ने उसे एक तीसरा आधार भी दिया, जिसे हम सामाजिक आधार कहते हैं।

जहां तक शिक्षा के उद्देश्यों की बात है, व्यावहारिकतावाद उन्हें निश्चित करने के पक्ष में नहीं है। उसका स्पष्टीकरण है कि यह संसार और मनुष्य जीवन परिवर्तनशील है, इसलिए शिक्षा के कोई निश्चित उद्देश्य नहीं हो सकते, अगर शिक्षा का कोई उद्देश्य हो सकता है तो यही कि उसके द्वारा मनुष्य का सामाजिक विकास कर उसे इस योग्य बनाया जाए कि वह बदलते हुए समाज में अनुकूलन कर सके और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामाजिक पर्यावरण पर नियंत्रण रख सके और उसमें परिवर्तन कर सके। परन्तु जब तक मनुष्य यह नहीं जानता कि उसे सामाजिक पर्यावरण में किस सीमा तक अनुकूलन करना है और उसे अपनी किन आवश्यकताओं की पूर्ति करनी है तब तक वह उचित मार्ग पर नहीं चल सकता। व्यावहारिकतावाद इन प्रश्नां के सही उत्तर नहीं देता, इसलिए उसके द्वारा निश्चित शिक्षा के ये उद्देश्य अपने में अपूर्ण हैं। डीवी महोदय ने सामाजिक कुशलता के विकास और किलपैट्रिक महोदय ने लोकतंत्रीय जीवन के विकास पर बल दिया है। हमारी दृष्टि से तो शिक्षा को मनुष्य का सर्वागीण विकास करना चाहिए।

शिक्षण विधियों के क्षेत्र में प्रयोजनवादियों की देन बड़ी मूल्यवान है। जिन मनोवैज्ञानिक तथ्यों का उद्घाटन एवं प्रयोग वास्तववादियों और प्रकृतिवादियों ने किया, व्यावहारिकतावादियों ने उसमें सामाजिक पर्यावरण के महत्व को और जोड़ दिया। उन्होंने बच्चों की जन्मजात शक्तियों को पहचाना, उनके व्यक्तिगत भेदों का आदर किया और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा सीखने, करके सीखने और अनुभव द्वारा सीखने पर बल दिया और इसके साथ-साथ इस बात पर भी बल दिया कि बच्चों को जो कुछ भी सिखाया जाये उसका संबंध उनके वास्तविक जीवन से होना चाहिए और उन्हें व्यावहारिक क्रियाओं के माध्यम से अनुभव करने के अवसर देने चाहिए। समस्त विषयों एवं क्रियाओं की शिक्षा एक ईकाई के रूप में देने पर भी इन्होंने बल दिया है। इन सिद्धान्तों पर डीवी महोदय ने समस्या समाधान विधि (Problem Solving Method) और किलपैट्रिक ने प्रोजेक्ट विधि (Project Method) का निर्माण किया। ईकाई विधि (Unit Technique0 भी इन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित है। आज संसार के सभी देशों की शिक्षा में इन विधियो को अपनाया जाता है। प्रयोजनवादी व्यक्ति और समाज दोनों के हित साधन के लिए विद्यालयों को समाज के सच्चे प्रतिनिधि के रूप् में देखना चाहते हैं। उनके इस विचार ने विद्यालयों को सामुदायिक केन्द्रो (Community Centered) में बदल दिया है। अब विद्यालय कोई कृत्रिम संस्थाएं नहीं माने जाते

अपितु बच्चों की जैविक प्रयोगशालाओं के रूप में स्वीकार किये जाते हैं, जहां बच्चे वास्तविक क्रियाओं में भाग लेते हैं, स्वयं क्रिया करते हैं, निरीक्षण करते हैं और वास्तविक जीवन की शिक्षा प्राप्त करते हैं।

11.7 शब्दावली (Glossary)

प्रयोजनवाद की तत्व मीमांसा Metaphysics of Pragmatism

यह अनेक वस्तुओं और अनेक क्रियाओं का परिणाम है, वस्तु और क्रियाओं की व्याख्या के झमेंले में ये नहीं पड़ते। इस इन्द्रियग्राह संसार के अतिरिक्त ये किसी अन्य संसार के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते। ये आत्मा-परमात्मा के अस्तित्व को भी नहीं स्वीकारते। इनके अनुसार मन का ही दूसर नाम आत्मा है और मन एक पदार्थ जन्म क्रियाशील तत्व है।

प्रयोजनवाद की ज्ञान मीमांसा Epistemology of Pragmatism

प्रयोजनवादियों के अनुसार अनुभवों की पुनर्रचना ही ज्ञान है। ये ज्ञान को साध्य नहीं अपितु मनुष्य जीवन को सुखमय बनाने का साधन मानते हैं। इसकी प्राप्ति सामाजिक क्रियाओं में भाग लेने से स्वयं होती है। कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों को ये ज्ञान का आधार मानते हैं और मस्तिष्क तथा बुद्धि को ज्ञान का नियंत्रक।

प्रयोजनवाद की आचार मीमांसा Ethics of Pragmatism

प्रयोजनवादी निश्चित मूल्यों और आदर्शो में विश्वास नहीं करते इसलिए ये मनुष्य के लिए कोई निश्चित आचार संहिता नहीं बनाते। इनका स्पष्टीकरण है कि मनुष्य जीवन में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है इसलिए उसके आचरण को निश्चित नहीं किया जा सकता। उसमें तो वह शक्ति होनी चाहिए कि वह बदले हुए पर्यावरण में समायोजन कर सके।

11.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)

भाग-1

उत्तर-1 B. अमेंरिका उत्तर-2 C. अमेंरिका

उत्तर-3 प्रयोजनवाद को हम प्रयोगवाद, फलवाद, क्रियावाद, व्यवहारवाद, कारणवाद, नैमितिकवाद, अनुभववाद आदि नामों से पुकारते हैं।

उत्तर-4 A. सत्य उत्तर-5 B. असत्य

उत्तर-6 प्रयोजनवाद

भाग-2

उत्तर-1 B. प्रयोगवाद उत्तर-2 C. बहुत्ववाद उत्तर-3 A. फलवाद (प्रयोजनवाद)

उत्तर-4 D. प्रयोजनवाद उत्तर-5 A. प्रयोजनवाद उत्तर- C. प्रयोजनवाद

भाग-3

उत्तर-1 B. असत्य उत्तर-2 B. असत्य उत्तर-3 A. सत्य

उत्तर-4 B. असत्य उत्तर-5 D. प्रयोजनवादी

11.9 सन्दर्भ Reference

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

6. शर्मा, रामनाथ व शर्मा राजेन्द्रकुमार (2006) एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

11.10 सहायक/उपयोगी पुस्तकें (Useful Books)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

11.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Question)

प्र. 1 प्रयोजनवाद से आप क्या समझते हैं? प्रयोजनवाद एवं शिक्षा के संबंधों की चर्चा विस्तृत रूप से कीजिए।

प्र. 2 प्रयोजनवाद में तत्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा एवं आचार मीमांसा के बारे में विस्तृत रूप से वर्णन कीजिए।

प्र. 3 प्रयोजनवाद की विशेषताओं की विस्तृत रूप से व्याख्या कीजिए।

प्र. 4 प्रयोजनवाद के आधारभूत सिद्धान्तों की व्याख्या कीजिए।

प्र. 5 प्रयोजनवादी शिक्षण पद्धति की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

प्र. 6 प्रयोजनवाद की दो परिभाषाएं देते हुए प्रयोजनवाद का आधुनिक शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

इकाई-12 क्षेत्रीय विकास और राष्ट्रीय एकता में शिक्षा की भूमिका (Role of Education for Regional Development and National Integration)

12.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION
12.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)
भाग-एक (PART- I)
12.3 क्षेत्रवाद का अर्थ (Meaning of Regionalism)
12.3.1 क्षेत्रवाद के कारण
12.3.2 क्षेत्रवाद के निवारण के उपाय
अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)
भाग-दो (PART- II)
12.4 राष्ट्रीय एकता का अर्थ (MEANING OF NATIONAL INTEGRATION)
12.4.1 राष्ट्रीय एकता की परिभाषाएं ((DEFINITION)S OF NATIONAL INTEGRATION)
12.4.2 भारत में राष्ट्रीयता के मार्ग में बाधाएं
(OBSTACLES IN THE WAY OF NATIONALITY IN INDIA)
अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)
भाग-तीन (PART-III)
12.5 राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति हेतु शैक्षिक कार्यक्रम
(EDUCATION PROGRAMMES FOR ACHIEVING NATIONAL INTEGRATION)
अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)
12.6 सारांश (Summary)
12.7 शब्दावली (Glossary)
12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)
12.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (bibliography)
12.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (USEFUL BOOKS)

12.11 लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer QUESTIONS)

12.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION)

यूं तो भारतवर्ष में क्षेत्रवाद (Regionalism) किसी न किसी रूप में सदैव उपस्थित था, परन्तु न तो पहले वह कभी इतना बड़ था और न वह राष्ट्रीय हित के लिए इतना हानिकारक हुआ था। देश में अनेक राज्य होने पर उनमें क्षेत्रवाद से इतनी हानि न थी। परन्तु आज जबकि पूरा देश एक राष्ट्र हो गया है, उस समय क्षेत्रवाद से राष्ट्रीय एकता को भारी खतरा है।

हमें राष्ट्रीय व भावात्मक एकता के आदर्श को प्राप्त करने के लिए देश की शिक्षा की योजना भी उसी के अनुरूप बनानी चाहिए। यदि उपर्युक्त सावधानियां बरती जायें तो विघटनकारी तत्वों को शिक्षा द्वारा शनैः-शनैः समाप्त किया जा सकता है। देश में एकता की स्थापना करने के उत्तरदायित्व से शिक्षा अपना मुंह नहीं मोड़ सकती। भावात्मक एकता समिति ने अपने प्रतिवेदन के पृष्ठ 185 पर ठीक ही कहा है कि शिक्षा को एकता और राष्ट्रीयता की भावना का विकास करना है। समिति के ही शब्दों में, ''भावात्मक एकता को सुदृढ़ बनाने में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। यह अनुभव किया गया है कि शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान देना ही नहीं है वरन् छात्र के व्यक्तित्व के सभी पक्षों का विकास करना है। इसको चाहिए कि छात्रों के दृष्टिकोण को विस्तृत करे, एकता और राष्ट्रीयता तथा त्याग एवं सहिष्णुता की भावना का विकास करे जिससे कि संकीर्ण दलगत स्वार्थो को विशाल देश-हित में समाहित किया जा सके।

12.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)

1. क्षेत्रवाद का अर्थ व क्षेत्रवाद के कारणों को जान सकेंगे।
2. क्षेत्रवाद को रोकने के उपायों को जान सकेंगे।
3. राष्ट्रीय एकता की भावना को समझ सकेंगे।
4. राष्ट्रीयत एकता के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर कर सकेंगे।
5. राष्ट्रीयता के गुणों को अपने जीवन में उतार सकेंगे।

भाग-एक (PART- I)

12.3 क्षेत्रवाद का अर्थ ((DEFINITION OF REGIONALISM)

यह क्षेत्रवाद क्या है ? क्षेत्रवाद जैसा कि उसके नाम से स्पष्ट है-अपने अपने भौगोलिक क्षेत्रों के प्रति भक्ति और दूसरे क्षेत्रों के लोगों के प्रति भय, अविश्वास या घृणा का भाव है। इस प्रकार भारत में आज विभिन्न क्षेत्रों के लोग एक-दूसरे को विदेशी समझने लगये हैं। हर एक क्षेत्र अपने क्षेत्र में अपने ही क्षेत्र के लोगों का राज्य चाहता है और उनमें दूसरे क्षेत्रों से आये हुए लोगों को बिल्कुल स्थान नहीं देना चाहते, चाहे वे वहां कितने ही दिनों से रह रहे हों। इस प्रकार नागा क्षेत्र में कुछ लोगों ने एक पृथक् राज्य की मांग की है। पंजाब में अकाली दल ने पंजाबी सूबे की मांग की है। क्षेत्र के आधार पर बम्बई राज्य महाराष्ट्र और गुजरात दो राज्यों में विभाजित हो गया। इसके अलावा कुछ लोग दक्षिणी भारत में एक बिल्कुल ही पृथक् राज्य बनाने की मांग लाये हैं। भारत एक संघ राज्य है। राज्य के कार्य कुछ संघ सरकार और कुछ राज्य सरकारों को मिले हुए हैं। ये सब राज्य अधिकतर आन्तरिक मामलों में स्वतंत्र हैं। इसलिए देश की एकता तभी तक रह सकती है जब तक लोग पूरे देश को एक राष्ट्र और अपना देश समझें। यदि हर एक क्षेत्र के लोग अपने ही क्षेत्र के प्रति भक्ति रखें और उसमें राष्ट्रीय हितों की कोई परवाह न करें तो संघ सरकार का बने रहना कठिन हो जाएगा। इस प्रकार क्षेत्रवाद राष्ट्रीय हित के लिए एक भयंकर समस्या बन गई है।

12.3.1 क्षेत्रवाद के कारण (Reason of Regionalism)

देश के इस क्षेत्रवाद के मूल में निम्नलिखित कारण हैं:-

1. भौगोलिक कारण:- क्षेत्रवाद का मुख्य कारण भौगोलिक है। भिन्न-भिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में रहने वाले लोगों का रहन-सहन, पहनावा, खान-पान, रीति-रिवाज, इतिहास, भूगोल आदि कुछ न कुछ भिन्न होता ही है। इससे वे एक-दूसरे के प्रति भय और घृणा के भाव उत्पन्न हो जाते हैं।

2. ऐतिहासिक कारण:- जैसा कि पीछे संकेत किया जा चुका है क्षेत्रवाद के मूल में एक कारण ऐतिहासिक भी है। उदाहरण के लिए भारतवर्ष में आर्यो के समय से ही दक्षिणी और उत्तर में कुछ न कुछ भेद बना रहा। उत्तर के बहुत से राजाओं ने दक्षिण को विजयी किया। दक्षिण में शायद ही कभी कोई ऐसा राज्य बन सका हो जो उत्तरी भारत तक फैला हो। इससे दक्षिण के बहुत से लोग दक्षिणी भारत को उत्तरी भारत से अलग समझते हैं।

3. सार्वजनिक कारण:- परन्तु यदि ध्यान से देखा जाये तो देश में फैले क्षेत्रवाद के मूल के मुख्य कारण राजनैतिक हैं। अलग-अलग क्षेत्रों में राजनैतिक स्वार्थो को लेकर और राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने के लिए कुछ लोगों ने क्षेत्रीय देशों की मांग की है। इस दिशा में फिजो (Phizo) के विद्रोही नागा दल, पंजाब के अकाली दल, दक्षिण के द्रविड़ मुन्नेत्र कड़गम (DMK) आदि विभिन्न राजनैतिक दलों

का भारी हाथ था। सच तो यह है कि इन्हीं दलों के नेताओं ने इन क्षेत्रों में क्षेत्रवाद फैलाया है। केवल इतना ही नहीं बल्कि कुछ राष्ट्रीय दलों में भी भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के प्रतिनिधि क्षेत्रीय हितों के सामने राष्ट्रीय हितों की परवाह नहीं करते।

4. मनोवैज्ञानिक कारण:- अन्त में क्षेत्रवाद के विकास और स्थायित्व में मनोवैज्ञानिक कारण भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। हर एक क्षेत्र में लोग यह चाहते हैं कि उनका क्षेत्र सबसे अधिक उन्नति करे। यह तो कोई बुरी बात नहीं है परन्तु जब इसके लिए वे अन्य क्षेत्रों और पूरे राष्ट्र के हितों को तुच्छ समझते हैं तो यह भावना क्षेत्रवाद का रूप धारण कर लेती है। इसके अलावा क्षेत्रवाद के पीछे बहुत से ऐसे व्यक्ति हैं जो अपने अंदर की ईर्ष्या, द्वेष, भय, क्रोध आदि की भावनाएं इस तरीके से निकालते हैं।

5. अन्य कारण:- उपरोक्त कारणों के अलावा कुछ अन्य कारण भी क्षेत्रवाद बढ़ाते हैं। उदाहरण के लिए भारत में बंगालियों और महारिष्ट्रयनों और पंजाबियों आदि में परस्पर विवाह बहुत कम देखे जाते हैं। आमतौर से भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लोगों में विवाह संबंध नहीं होते। इससे परस्पर घनिष्ठ संपर्क का अवसर कम आता है। इन सामाजिक कारणों के अलावा क्षेत्रगत तनाव के कुछ आर्थिक कारण भी हैं। देश में कुछ क्षेत्र अन्य क्षेत्रों से बहुत पिछड़े हुए हैं। इससे उनमें हीनता की भावना रहती है और वे दूसरों से ईर्ष्या करने लगते हैं। कुछ क्षेत्रों में, जैसे-व्यापार में कुछ विशेष क्षेत्रों के लोग अधिक सफल दिखाई पड़ते हैं। उदाहरण के लिए भारत में व्यापारी वर्ग में मारवाड़ियों, गुजरातियों और पंजाबियों नेे अधिकतर अधिकार जमा रखा है। इसमें भी अन्य लोग उनसे जलते हैं और अपने क्षेत्रों से उनको निकालने की कोशिश करते हैं।

12.3.2 क्षेत्रवाद के निवारण के उपाय

क्षेत्रवाद के निवारण के मुख्य उपाय निम्नलिखित हो सकते हैं:-

(1) यातायात और संदेशवहन का प्रोत्साहन:- क्षेत्रवाद को दूर करने के लिए देश में घूमने की और विभिन्न क्षेत्रों से संबंध बढाने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलना चाहिए। अभी पिछले दिनों साधुओं की एक ट्रेन भारत दर्शन के लिए निकली थी। इस तरह से राजस्थान के बहुत से किसानों ने ट्रेन के द्वारा भारत की यात्रा की। भारत में जो तीर्थ करने की परम्परा है उसके कारण भी लोगों को सारे देश में घूमना पड़ता है। देश के भिन्न-भिन्न भागों में जाने से देशवासियों में यह भावना बढ़ती है कि भारतवर्ष एक बड़ा देश है और उसका क्षेत्र विशाल भारत का एक अंग मात्र है। देश में यातायात और संदेशवहन को प्रोत्साहन करके क्षेत्रवाद को कम किया जा सकता है।

(2) राष्ट्रीय इतिहास का प्रचार:- सम्पूर्ण देश में राष्ट्रीय इतिहास का प्रचार किया जाना चाहिए, जिससे लोगों के सामने यह स्पष्ट हो जाये कि भारत के अलग-अलग क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान

दिया है। राष्ट्रीय इतिहास के प्रचार से क्षेत्रवाद की भावनाएं दूर होंगी।

(3) क्षेत्रवादी राजनैतिक दलों पर रोक:- राष्ट्रीय एकता के लिए यह आवश्यक है कि क्षेत्रवाद का प्रचार करने वाले राजनैतिक दलों पर रोकथाम की जाए। खुल्लम-खुल्ला प्रचार करने पर उनको गैर-कानूनी घोषित कर दिया जाना चाहिए। यद्यपि जनतंत्र में हरएक व्यक्ति को अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए राजनैतिक दल बनाने का अधिकार है, परन्तु यदि इससे राष्ट्रीय हितों की हानि होती है तो यह अधिकार छीन लिया जाना चाहिए।

(4) राष्ट्रीय भावना का प्रसार:- अन्त में क्षेत्रवाद के मूल के मनोवैज्ञानिक कारणों को दूर करने के लिए देश में भारतीय राष्ट्रीय भावना के प्रसार की चेष्टा की जानी चाहिए। इस दिशा में रेडियो, चलचित्रों, पत्र-पत्रिकाओं, व्याख्यानों आदि सभी उपायों से प्रचार करने की आवश्यकता है। सरकारी नौकरियों, शिक्षा संस्थाओं आदि सभी जगह से क्षेत्रवादी प्रवृत्तियों को निकालने की कोशिश की जानी चाहिए और राष्ट्रीयता की भावना को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

क्षेत्रवाद एक जटिल समस्या है। इसको सुलझाने के लिए सभी ओर से प्रयास की आवश्यकता है।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

सत्य/असत्य कथनों पर सही का निशान लगाएं:-

प्र. 1 अपने-अपने भौगोलिक क्षेत्रों के प्रति भक्ति और दूसरे क्षेत्रों के लोगों के प्रति भय, अविश्वास या घृणा का भाव क्षेत्रवाद है। (सत्य/असत्य)

प्र. 2 पंजाब में अकाली दल द्वारा पंजाबी सूबे की मांग राष्ट्रीयता को बढावा देगी। (सत्य/असत्य)

प्र. 3 आज भारत एक संघ राज्य नहीं है। (सत्य/असत्य)

प्र. 3 क्षेत्रवाद का खुल्लम-खुल्ला प्रचार करना गैर-कानूनी घोषित कर दिया जाए। (सत्य/असत्य)

भाग-दो Part II

12.4 राष्ट्रीय एकता का अर्थ MEANING OF NATIONAL INTEGRATION)

राष्ट्रीय एकता की भावना वास्तव में इस ओर इंगित करती है कि व्यक्ति राष्ट्र के लिए है, राष्ट्र व्यक्ति के लिए नहीं। यह वह भावना हैजो व्यक्तियों को अपने व्यक्तिगत हितों को त्याग कर राष्ट्र-कल्याण के लिए प्रेरित करती है। इसका तात्पर्य एक राष्ट्र के निवासियों की उस आन्तरिक एकता से है, जिसमें वह अपनी जाति, धर्म, सम्प्रदाय, संस्कृति एवं प्रान्त के संकीर्ण हितों को भूलकर सम्पूर्ण

राष्ट्र के हितों का ध्यान रखते हैं। इसी कारण विचारकों का मानना है कि राष्ट्रीय एकता एक मनोवैज्ञानिक स्थिति एवं एकीकरण की भावना है जो व्यक्ति को विघटनकारी प्रवृत्तियों से दूर रखती है। यह भावना व्यक्तियों के अंदर उन गुणों को पल्लवित करती है जो राष्ट्रके विकास में सहयोग देते हैं। वास्तव में यदि देखा जाए तो भारतवर्ष में राष्ट्रीय एकता एक सर्वोपरि आवश्यकता है। डॉ. श्रीमाली ने ठीक ही कहा है- ''यदि हम मुश्किल से मिलने वाली अपनी आजादी की सुरक्षा एवं समृद्धिचाहते हैं तो हमें राष्ट्रीय एकता की प्रक्रिया को जारी रखना और शक्तिशाली बनाना पड़ेगा।

12.4.1 राष्ट्रीय एकता की परिभाषाएं (DEFINITION OF NATIONAL INTEGRATION)

1. ब्रूबेकर के अनुसार- ''राष्ट्रीयता वह सम्बोध है जो विद्या की जागृति के प्रमुख रूप धारण कर रहा है, विशेष तौर पर फ्रांसीसी क्रान्ति के बाद। सामान्य रूप यह देशभक्तिता की बात नहीं करता वरन् यह स्वामिभक्तिता से सम्बन्ध रखता है। साथ ही साथ एकता के अतिरिक्त इसमें प्रजाति, इतिहास, भाषा, संस्कृति एवं परम्पराओं की भी एकता निहित होती है।''

("Nationalism is a term has come into prominence since the renaissance and particularly since the French revolution. It ordinarily indicates a wider scope of loyality than patriotism. In addition to ties of place, nationalism is evidenced by such other ties as race, histoy, language, culture and tradition." - Brubacher)

2. डॉ. वेदी के अनुसार- ''राष्ट्रीय एकता का अर्थ है-देश के विभिन्न राज्यों के व्यक्तियों की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक तथा भाषा-विषयक विभिन्नताओं को वांछनीय सीमा के अंतर्गत रखना और उनमें भारत की एकता का समावेश करना।''

("National integration means bringing about economic, social, cultural and lingustic differences among the people of various states in the country within tolerable range and imparting to the people a feeling of the oneness of India." - **Dr. J.S. Bedi**)

3. एम.के. मूर्ति के अनुसार- ''राष्ट्रीय एकता का अभिप्राय है देश के नागरिकों में एकता का भाव होना, यह कुछ नहीं है वरन् विभिन्नता में एकता स्थापित करना है। इसमें राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं संवेगात्मक एकता को सम्मिलित किया जाता है।''

("National integration means the feeling of oneness among all the people of the nation. It is nothing but achievement of unity in diversity, it includes political, economic, social, cultural and emotional integration." - **S.K. Murty**)

12.4.2 भारत में राष्ट्रीयता के मार्ग में बाधाएं (OBSTACLES IN THE WAY OF NATIONALITY IN INDIA)

भारत में राष्ट्रीयता का समुचित विकास नहीं हो रहा है। राष्ट्रीयता के विकास के मार्ग में कई कठिनाईयां हैं। यहां पर हम केवल चार मुख्य बाधाओं की ओर संकेत करेंगे:-

(1) क्षेत्रीयता (REGIONALISM) - भारत बहुत विशाल देश है। इसमें इस समय अनेक राज्य और कई केन्द्र-शासित क्षेत्र हैं। व्यक्ति को अपना क्षेत्र बहुत रूचिकर प्रतीत होता है। जहां पर उसने जन्म लिया है, जिस स्थान की मिट्टी में वह पका है, उसके प्रति प्रेम होना स्वाभाविक है। यहां तक तो ठीक है, किन्तु कुछ व्यक्ति इससे कई कदम आगे बढ़ जाते हैं। उनकी समझ में केवल उनका ही क्षेत्र सबसे अच्छा है। दूसरा क्षेत्र निकृष्ट है। वे अपने क्षेत्र के हितों को पूरे देश के हित के सामने भी नहीं त्यागते। यहां पर कठिनाई उत्पन्न हो जाती है और राष्ट्रीयता का विकास नहीं हो पाता।

(2) जातीयता (Castisem)- भारत में अनेक जातियां हैं। प्राचीन काल से व्यावसायिक दृष्टिकोण से भारतीय समाज को चार वर्गो में बांटा गया था। अब वर्ग तो रहा नहीं। हॉ, वर्ग के नाम पर जन्म से निर्धारित जाति, उपजाति और उपजाति की उपजाति रह गयी है। हम कभी-कभी अपनी जाति के प्रति इतना प्रेम दिखाते हैं कि नियुक्ति, पदोन्नति आदि के समय केवल अपनी जाति के व्यक्ति का ही ध्यान रखते हैं। बड़ी-बड़ी जगहों पर भी ऐसा सुनायी पड़ जाता है। जहां पर जाति के प्रति भक्ति है वहां तो देश-भक्ति भी नहीं पनपेगी, तब राष्ट्रीयता का विकास कैसे संभव है ?

(3) साम्प्रदायिकता (COMMUNALISM) - भारत में विभिन्न सम्प्रदाय हैं। यहां पर हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि सम्प्रदाय के लोग रहते हैं। हिन्दुओं में भी सिख, जैन, बौद्ध, कबीरपंथ, गोरखपंथ, आर्यसमाज, ब्रह्मसमाज, सनातन धर्म आदि सम्प्रदाय हैं। यदि हम किसी सम्प्रदाय विशेष में आस्था रखते हैं तो अच्छा है, लेकिन इस सम्प्रदाय के जोश में दूसरे सम्प्रदायों को हेय, काफिर एवं निकृष्ट समझना ठीक नहीं है। सामाजिक संबंधों में एवं लाभ के पदों पर हमें राष्ट्रीयता के आधार पर कार्य करना चाहिए, न कि साम्प्रदायिकता के आधार पर।

(4) भाषावाद (LINGUISM) - भारत में अनेक भाषाएं हैं। चौदह भाषाओं का उल्लेख संविधान ने किया है। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी भी है। हिन्दी जैसी भाषा की अने उपभाषाएं या बोलियां भी हैं। हम मातृभाषा बोलते हैं। मातृभाषा से प्रेम होना स्वाभाविक है। किन्तु पूरे राष्ट्र के लिए एक राष्ट्रभाषा का होना आवश्यक है तभी राष्ट्रीयता का समुचित विकास होगा। कभी-कभी हम अपनी मातृभाषा के

प्रेम में आकर अन्य भाषाओं की निन्दा करते हैं और राष्ट्रभाषा के विकास के मार्ग में बाधा उपस्थित करते हैं।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-

प्र. 5 देश में एकता की स्थापना करने के उत्तरदायित्व .....अपना मुंह नहीं मोड़ सकती।

(अ) क्षेत्रीयता (ब) राष्ट्रीयता (स) शिक्षा (द) अशिक्षा

प्र. 6 राष्ट्रीय एकता की भावना वास्तव में इस ओर इंगित करती है कि व्यक्ति राष्ट्र के लिए , राष्ट्र .....के लिए नहीं।

(अ) समाज (ब) व्यक्ति (स) जीव जन्तु (द) सैनिकों

भाग-तीन **(PART-III)**

12.5 राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति हेतु शैक्षिक कार्यक्रम (EDUCATIONAL PLROGRAMMES FOR ACHIEVING NATIONAL INTEGRATION)

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतवर्ष में क्षेत्रीयता, जातीयता, साम्प्रदायिकता एवं भाषावाद की कठिनाईयां विद्यमान हैं। राष्ट्रीयता का विकास तभी संभव है जब हम इन कठिनाईयों पर विजय पाएं। राष्ट्रीयता का विकास करना शिक्षा का आवश्यक कार्य है। विद्यालयों में हम कुछ ऐसे कार्य कर सकते हैं जिनमें राष्ट्रगान को प्रोत्साहन मिल सके। आगे इन कार्यों की ओर संकेत किया जा रहा है:-

1. प्रतिदिन विद्यालय का कार्य प्रारम्भ होने से पहले 'राष्ट्रगान' गाया जाय।

2. राष्ट्रीय पर्वो यथा 'स्वतंत्रता दिवस' एवं 'गणतंत्र दिवस' को धूमधाम से मनाया जाय।

3. जिन महापुरूषों ने राष्ट्रीय एकता के लिए कार्य किया है, उनके जन्मदिन पर समारोह किये जाएं।

4. शिक्षक एवं शिक्षार्थी अपने दैनिक जीवन में राष्ट्रभाषा का अधिकाधिक उपयोग करें।

5. यदा-कदा राष्ट्रीय महत्व के व्यक्तियों से राष्ट्रीयता पर व्याख्यान करवाये जाएं।

6. छात्रों को भारतीय इतिहास एवं भारतीय संस्कृति से परिचित कराया जाए।

7. विद्यालय में जाति, सम्प्रदाय, एवं क्षेत्र के आधार पर पक्षपात न किया जाए। प्रवेश, कक्षोन्नति आदि के समय निष्पक्षता बरती जाए।

8. वर्ष में एक या दो बार छात्रों के सहभोज का आयोजन करना जिसमें सभी जाति एवं सम्प्रदाय के छात्र आपस में मिल-जुलकर खानपान कर सकें।

9. राष्ट्रीय ध्वज के महत्व को बताना। उसके फहराने के अवसर पर पालन किये जाने वाले नियमों से अवगत

करना।

10. देश की बुराईयों से परिचित कराकर उन्हें दूर करने के लिए छात्रों को प्रोत्साहित करना।

11. राष्ट्रीय चिन्ह, राष्ट्रीय पुष्प (कमल), राष्ट्रीय पक्षी (मयूर) के प्रति छात्रों में सम्मान की भावना उत्पन्न करना।

इस प्रकार हम चाहें तो विद्यालय में में राष्ट्रीयता को प्रोत्साहन दे सकते हैं।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

प्र. 7 प्राचीन काल में भारतीय समाज को कितने भागों में बांटा गया है ?

प्र. 8 भारतीय संस्कृति की दो विशेषताएं लिखिए।

12.6 सारांश (SUMMARY)

प्राचीन भारत में राष्ट्रीयता का व्यापक रूप था। यहां पर किसी क्षेत्र विशेष के प्रति अन्ध-भक्ति का प्रचलन नहीं था। पूरे देश के प्रति प्रेम था और पूरे देश के लिए सुख व शान्ति की कामना की जाती थी। मध्यकाल में भारत ने कई उतार-चढ़ाव देखे। एक प्रकार से यह भारत की निद्रा का काल था। राष्ट्रीयता मृतप्राय थी। राष्ट्र के प्रति प्रेम नाममात्र को भी न रहा। अंग्रेजो के शासनकाल में कुछ चेतना आई। पहले तो केवल लन्दन के प्रति ही भक्ति जागृत हुई किन्तु धीरे-धीरे लोगों में राष्ट्रीय चेतना का उदय हुआ। कुछ व्यक्तियों ने जन-साधारण को जागृत करने का संकल्प लिया। भारत ने अंगड़ाई ली और परतंत्रता की बेड़ी को उतार फैंका। स्वतंत्रता आयी, अनेक वर्ष पूरे हुए किन्तु जन-साधारण में राष्ट्रीयता का विकास अभी भी होना शेष है। राष्ट्र के कर्णधारों ने स्वतंत्रता के लगभग पन्द्रह वर्ष बाद सोचा कि भारत ने अभी भी राष्ट्रीयता का पाठ नहीं पढ़ा। अभी भी लोग छोटे-छोटे स्वार्थो में लगे हुए थे। राष्ट्रीय एकता की समिति बनायी गयी। चारों ओर भाषण हुए, नारे लगे, किन्तु हम जहां थे वहां से बड़ी मन्द गति से आगे बढ़े।

इकबाल ने लिखा है-''मजहम नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना।'' बैर होना भी नहीं चाहिए। क्योंकि राम-रहीम और ईश्वर-खुदा एक ही हैं। जब एक ही हैं तो उनके बन्दे क्यों अलग-अलग राग अलापने लगे।

राष्ट्रीय एकता की पताका दूर-दूर तक फहराने में बुद्धिजीवियों का भी बहुत बड़ा योगदान रहा। उर्दू, फारसी, पश्तो, गुरमुखी, प्रान्तीय भाषाओं और हिन्दी के माध्यम से न जाने कितनी पुस्तकें, कितनी हस्तलिखित पाण्डुलिपियों, कसीदे और शिलालेख हमारे खजाने में हैं। कवि, लेखक, इतिहासकार और वास्तुशिल्पी तथा चित्रकार-कलाकार तो यों भी सभी के होते हैं। इनकी कोई भी अलग जाति हो सकती है, ये लोग नहीं मानते। देश, समाज और काल ही इनकी पूरी पहचान होती है और इनका लेखन तथा कलम-अभिव्यक्ति ही कर्मक्षेत्र होता है। सब इनके होते हैं, ये सभी के होते हैं। चाहे ये लोग किसी भी प्रान्त, जलवायु के क्यों न हों। हमारी आजादी की लड़ाई में इनके लेखन ने वह काम किया जो लाखों-हजारों अन्य उपाय भी नहीं कर सकते। यहां प्रान्त, भाषा कोई दीवार खड़ी नहीं कर पाती।

12.7 शब्दावली (GLOSSARY)

साम्प्रदायिकता (COMMUNALISM) - भारत में विभिन्न सम्प्रदाय हैं। यहां पर हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि सम्प्रदाय के लोग रहते हैं। हिन्दुओं में भी सिख, जैन, बौद्ध, कबीरपंथ, गोरखपंथ, आर्यसमाज, ब्रह्मसमाज, सनातन धर्म आदि सम्प्रदाय हैं। यदि हम किसी सम्प्रदाय विशेष में आस्था रखते हैं तो अच्छा है, लेकिन इस सम्प्रदाय के जोश में दूसरे सम्प्रदायों को हेय, काफिर एवं निकृष्ट समझना ठीक नहीं है। सामाजिक संबंधों में एवं लाभ के पदों पर हमें राष्ट्रीयता के आधार पर कार्य करना चाहिए, न कि साम्प्रदायिकता के आधार पर।

भाषावाद (LINGUISM) - भारत में अनेक भाषाएं हैं। चौदह भाषाओं का उल्लेख संविधान ने किया है। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी भी है। हिन्दी जैसी भाषा की अने उपभाषाएं या बोलियां भी हैं। हम मातृभाषा बोलते हैं। मातृभाषा से प्रेम होना स्वाभाविक है। किन्तु पूरे राष्ट्र के लिए एक राष्ट्रभाषा का होना आवश्यक है

12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)

भाग-एक (PART- I)

उ. 1 सत्य

उ. 2 असत्य

उ. 3 सत्य

उ. 4 सत्य

भाग-दो **(PART-II)**

उ. 5 शिक्षा

उ. 6 व्यक्ति

भाग-तीन **(PART-III)**

उ. 7 चार भागों में

उ. 8 अनेकता में एकता, प्राचीनता

12.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (BIBLIOGRAPHY)

मित्तल एम.एल (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक इन्टरनेशनल पब्लिकेशन हाउसः मेंरठ।

सक्सेना (डा.) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशनः आगरा।

शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिसर्श एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

एलैक्स (डा.) शीलू मैरी (2008) शिक्षा के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य रजत प्रकाशः नई दिल्ली।

12.10 उपयोगी/ सहायक ग्रन्थ Useful Book

- पाण्डेय रामशकल (2008), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल पब्लिकेशनः आगरा।

- सक्सेना डा. सरोज शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशनः आगरा।

- कुमार आनन्द सामाजिक विचारों का अध्ययन, विमल प्रकाशन मंदिरः आगरा।

- वर्मा ओम प्रकाशन व कुलश्रेष्ठ पीयूष कान्त, धर्म का समाजशास्त्र, पूजा ऑफसेट प्रिन्टर्सः आगरा।

- शोध पत्रिका, इन्टरनेट।

12.11 लघु उत्तरीय प्रश्न (SHORT ANSWER QUESTIONS)

प्र. 1. राष्ट्रीय एकता के अर्थ की विवेचना कीजिए।

प्र. 2. राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता का वर्णन कीजिए।

प्र. 3. राष्ट्रीय एकता में शिक्षा की भूमिका बताईये।

प्र. 4. क्षेत्रवाद से आप क्या समझते हैं ? क्षेत्रवाद को रोकने हेतु क्या उपाय किये जा सकते हैं ? वर्णन करें।

प्र. 5. क्षेत्रवाद के क्या कारण हैं ? क्षेत्रवाद की भावना से लोगों को कैसे ऊपर उठाया जा सकता है ?

\

इकाई-13 शिक्षा द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय एकता में सम्बर्धन (Enhancement of International Integration Through Education)

13.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION)

13.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)

भाग-एक (PART- I)

13.3 अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का अर्थ व परिभाषाएं (MEANING & (DEFINITION) OF INTERNATIONAL UNDERSTANDING)

13.3.1 अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना की आवश्यकता (need OF INTERNATIONAL UNDERSTANDING)

भाग-दो (PART- II)

13.4 यूनेस्को के कार्य (Functions of UNESCO)

भाग-तीन (PART-III)

13.5 शिक्षा द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास (DEVELOPMENT OF INTERNATIONAL UNDERSTANDING THROUGH EDUCATION)

13.5.1 अन्तर्राष्ट्रीय एकता बनाने में अध्यापक की भूमिका

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

13.6 सारांश (Summary)

13.7 शब्दावली (Glossary)

13.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)

13.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

13.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (USEFUL BOOKS)

13.11 लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer QUESTIONS)

13.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION)

अन्तर्राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा का प्रारम्भ 20वीं शताब्दी में द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुआ। इसका प्रमुख प्रवर्तक पियरे ड्यूबियस (Pierre Dubious) को माना जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा वह साधन बन जाती है जो अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव व सहयोग को विकसित करने में अपना योगदान देती है। आज के युग में प्रत्येक राष्ट्र एक-दूसरे के सहयोग का आकांक्षी है। आज विश्व एक-दूसरे से इतना समीप आ गया है कि उसके राष्ट्रों के बीच में एकता का भाव होना अति आवश्यक है। वास्तव में जब व्यक्ति अपने आपको राष्ट्रीयता की परिधि से हटा देता है तो वह सम्पूर्ण मानव जाति के साथ एकीकरण स्थापित करने लगता है, तब उसके अन्दर अंतर्राष्ट्रीय सूझ-बूझ उत्पन्न होती है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति विश्व-बन्धुत्व व विश्व शान्ति की कल्पना करने लगता है। भारतवर्ष की संस्कृति तो सदैव ही विश्व बंधुत्व या वसुधैव कुटुम्बकम् की रही है। यहां के हर मनीषी ने इस विचार का कठोर समर्थन किया है कि वसुधा पर रहने वाला हर प्राणी ईश्वर की संतान है। इस कारण हमें उसके साथ भ्रातृत्व का भाव रखना चाहिए। हमें अपने आपको संकीर्णता से युक्त राष्ट्रवादी विचारों से ऊपर उठाना चाहिए व स्वयं को सम्पूर्ण विश्व के नागरिक के रूप में देखना चाहिए। हमारा हर प्रयास विश्व में शान्ति तथा भाईचारे को बनाने की दिशा की ओर उन्मुख होना चाहिए व पूरा प्रयास यह होना चाहिए कि हम विश्व में अशान्ति फैलाने वाले तत्वों से दूर रहें।

13.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)

1. अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का अर्थ व परिभाषाओं को समझ सकेंगे।
2. आज के समय में अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना को समझ सकेंगे।
3. अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना हेतु यूनेस्को के कार्य को समझ सकेंगे।
4. शिक्षा द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय की भावना का विकास कैसे किया जा सकता है, यह जान सकेंगे।
5. अन्तर्राष्ट्रीय एकता की भावना में अध्यापक की भूमिका को समझ सकेंगे।

भाग-एक **(PART- I)**

13.3 अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का अर्थ व परिभाषाएं (MEANING & (DEFINITION) OF INTERNATIONAL UNDERSTANDING)

1. सफाया व सईदा के अनुसार-''अन्तर्राष्ट्रीय एकता वह सूचित चेतना है जो विश्व समाज में एक राष्ट्र का अस्तित्व बनाये रखती है तथा एक राष्ट्र यदि अपना अस्तित्व कायम रखना चाहता है तो उसे विश्व समाज में शान्ति बनाये रखने का प्रयत्न करना होगा तथा युद्धों से बचना होगा।''

("International Understanding may be defined as informed consciousness of the place of one's own nation in the world society and the contribution that it can make world society whose survival depends upon maintenance of peace and relief from wars." - **Safaya Shaida**)

2. गोल्डस्मिथ के अनुसार-''अन्तर्राष्ट्रीयता एक भावना है जो व्यक्ति को बताती है कि वह अपने राज्य का ही सदस्य नहीं है वरन् विश्व का नागरिक भी है।''

("Inaternationalism is a feeling that the individual is not only a member of his state, but a citizen of the world." - **Goldsmith**)

3. डॉ. डब्ल्यू.एच.सी. लेव्ज के अनुसार-''अन्तर्राष्ट्रीय भावना इस ओर ध्यान दिये बिना कि व्यक्ति किस राष्ट्रीयता या संस्कृति के हैं, एक-दूसरे के प्रति सब जगह उनके व्यवहार का आलोचनात्मक और निष्पक्ष रूप से निरीक्षण करने और आंकने की योग्यता है।''

("International Understanding is the ability to observe cirically and objectively and appraise the conduct of men everywhere to each other irrespective of the nationality or culture to which they beiong ." - **Dr. W.H. C. Laves**)

13.3.1 अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना की आवश्यकता (NEED OF INTERNATIONAL UNDERSTANDING)

जब हम व्यक्ति को प्रारम्भ से ही यह सिखाते हैं कि अपने देश से प्रेम करो व अपने देश को महान समझो तो हम बालक के अंदर संकीर्ण दृष्टिकोण उत्पन्न कर देते हैं और यह संकुचित राष्ट्रवादी विचारधारा ही विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के मध्य संघर्षमयी परिस्थितियां उत्पन्न करती हैं। इसी कारण पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा है:- ''पृथकता का अर्थ पिछड़ापन और पतन। दुनिया बदल गई है और पुराने खत्म होने जा रहे हैं और जीवन अंतर्राष्ट्रीय होता जा रहा है। हमें इस भावी अंतर्राष्ट्रीयता में अपनी भूमिका अदा करनी है।''

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम उग्र राष्ट्रवादी विचारधारा को समाप्त करें जिससे हम सम्पूर्ण मानव जाति के बीच में मधुर संबंध स्थापित कर सकें। यदि वास्तव में हम युद्ध की राजनीति से दूर रहना चाहते हैं तथा व्यक्तियों के मध्य सहयोग, सहनशीलता, समायोजन व प्रेम को विकसित करना चाहते हैं तो हमें अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव को जागृत करना होगा। इस समंबंध में रोमेंन रालैण्ड ने ठीक ही कहा है - ''दो महायुद्धों के दुष्परिणामों ने यह सिद्ध कर दिया है कि मलिन व उत्तेजक राष्ट्रीयता का भाव समाप्त किया जाना चाहिए और मानवता का भाव स्थापित किया जाना चाहिए तथा मनुष्य में प्रेम व सहानुभूति का भाव उत्पन्न किया जाना चाहिए।

विश्व के सभी राष्ट्रों को समीप लाना वर्तमान वैज्ञानिक तकनीकी युग की एक आवश्यकता भी है। आज आवागमन व संचार के साधनों ने विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के मध्य की दूरी को समाप्त कर दिया है। आज के युग में कोई भी राष्ट्र स्वयं में आत्मनिर्भर नहीं है। सभी राष्ट्र आर्थिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक आवश्यकताओं के लिए एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं। किसी भी देश में यदि कोई संकट आता है तो हम चिन्तित हो उठते हैं। चाहे वह राजनैतिक संकट हो या आर्थिक। हम आज इस बात की आवश्यकता भी अनुभव करते हैं कि विश्व में जो विनाशकारी यंत्र हैं उनका प्रयोग मानव के विनाश के लिए न होकर मानव के कल्याण एवं विकास के लिए होना चाहिए। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर विश्व के हर राष्ट्र ने यह सोचा कि आपस में मिल-जुलकर रहना चाहिए व इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर जो कार्यवाही की गई, अब हम उसकी चर्चा करेंगे।

भाग-दो **(PART- II**

13.4 यूनेस्को के कार्य (FUNCTION OF OF UNESCO)

1. विभिन्न राष्ट्रों में व्याप्त भय को दूर करना व उन्हें एक-दूसरे का ज्ञान कराना जिससे वह विश्वास

करके निकट आ सकें।

2. पिछड़े देशों से अज्ञानता और निरक्षरता को दूर करने का भरसक प्रयास करना।

3. विभिन्न देशों की संस्कृति, कला, विज्ञान व साहित्य को एक-दूसरे के समीप लाना, जिससे वह सब

लाभान्वित हो सकें।

4. शोध छात्रों को वित्तीय सहायता देना, जिससे वह अधिक से अधिक शोध कार्य कर सकें।

5. विभिन्न देशों के विचारकों, अध्यापकों, वैज्ञानिकों व दार्शनिकों को एक-दूसरे से विचार-विमर्श करने

के अवसर देना, जिससे वह समस्याओं का हल ढूंढ सकें।

6. गरीब व पिछड़े हुये देशों में स्कूल खोलने हेतु वित्तीय सहायता देना।

7. अन्तर्राष्ट्रीय कला एवं साहित्य की प्रदर्शनी द्वारा एकता के संकेतों को समझाया जाता है व सद्भावना

और एकता के सूत्र में बांधा जाता है।

8. अंतर्राष्ट्रीय पर्यटनों का प्रबंध करना जिससे विश्व के विभिन्न भागों के विद्यार्थियों में अच्छे संबंध स्थापित किये जा सकें।

9. भाई-चारे व 'हम' भावना का प्रसार दूरदर्शन या अन्य सामग्रियों के माध्यम से करना।

10. विश्व इतिहास द्वारा अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की सुरक्षा करना सीखाना।

11. पाठ्यक्रम में विज्ञान के अध्ययन को प्रमुख स्थान देना।

भाग-तीन **(PART-III)**

13.5 शिक्षा द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास (DEVELOPMENT OF INTERNATIONAL UNDERSTANDING THROUGH EDUCATON)

यूनेस्को ने अन्तर्राष्ट्रीयता के लिए शिक्षा के संबंध में विद्यालयों में सामाजिक विज्ञान को माध्यम बनाते हुए निम्न दस सिद्धान्त प्रस्तुत किये:-

1.सामाजिक अध्ययन द्वारा छात्रों को नागरिकता का प्रशिक्षण दिया जाएगा व कक्षा, विद्यालय तथा समाज ही इस शिक्षण को देने हेतु प्रयोगशाला का रूप लेगी।

2.यह विषय छात्रों को विश्व के प्रमुख अंगों के बारे में जानकारी देगा।

3.छात्रों के अंदर आवश्यक मनोवृत्तियों व कौशलों का विकास करना।

4.वर्तमान में विश्व की सभी समस्याओं में रूचि लेने हेतु छात्रों को प्रेरित करना।

5.छात्रों की तर्क, निर्णय व आलोचनात्मक शक्ति का विकास करना।

6.भूगोल के अध्ययन द्वारा छात्रों को प्राकृतिक सम्पदा का ज्ञान कराना व खाद्य समस्या की उन्हें जानकारी देना।

7.विभिन्न धर्म, जाति, संस्कृति के आधार पर तथा आर्थिक आधार पर पाये जाने वाली विभिन्नता को दूर करना।

8.एक समुदाय का दूसरे समुदाय से संबंध बताना।

9.छात्रों को विभिन्न भाषा सिखाने हेतु प्रेरित करना।

10.मानव के व्यक्तित्व के समुचित विकास पर बल देने हेतु उपयुक्त मानवीय संबंधों को स्थापित किया जाये।

11.सामाजिक घटनाओं, तनावों व सहयोग पर विशेष ध्यान दिया जाये।

यूनेस्को के इन सिद्धान्तों की चर्चा करने के पश्चात् अब हम इस बात पर विचार करेंगे कि विद्यालय में चलने वाले सामान्य कार्यक्रम में हम क्या परिवर्तन करें जिससे हम छात्रों के अंदर अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव को उत्पन्न कर सकें। इसके लिए हमें जो मुख्य परिवर्तन करने होंगे, वे निम्न प्रकार हैं:-सामान्य कार्यक्रमों में परिवर्तन

1. शिक्षा के उद्देश्यों में परिवर्तन
2. शिक्षण विधियों में परिवर्तन
3. पाठ्यक्रम में परिवर्तन
4. पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का आयोजन

1. शिक्षा के उद्देश्यों में परिवर्तन (Change in the aims of education)

अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए हमें विद्यालय के वातावरण पर विशेष रूप से ध्यान देना होगा। आज विद्यालय जो राजनीति व संकुचित राष्ट्रीयता के विकास का एक केन्द्र बनते जा रहे हैं, उनके उद्देश्यों में हमें प्रारम्भ से ही ध्यान देना होगा। जिन बातों को अपनाया जाना इस भावना के विकास हेतु अनिवार्य है, वह इस प्रकार हैं:-

1.छात्रों में स्वतंत्र विचार करने की क्षमता उत्पन्न करना (TO DEVELOP THE CAPACITY FOR FREE THINKING) :- शिक्षा के लिए यह अनिवार्य है कि वह बालक को यह क्षमता प्रदान करे कि वह अपने विचारों को अथवा अपनी राय को अन्य व्यक्तियों के समक्ष स्पष्ट रूप से व्यक्त कर सकें। दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति यह है कि व्यक्ति पढ़-लिखकर भी दूसरों के दबाव में आ जाता है व उन्हीं प्रभाव से अपने विचारों की अभिव्यक्ति करने लगता है, यह गलत है। आपके अन्दर इतनी सूझबूझ होना अनिवार्य है कि आप अपनी एक विचारधारा बना सकें। इसी का विकास शिक्षा द्वारा किया जाना चाहिए।

2.ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग करने की क्षमता (ability to use knowledge in practical form) :- हम जानते तो बहुत कुछ हैं, परन्तु क्या उन सबका हम व्यावहारिक प्रयोग कर रहे हैं ? यह एक विचारणीय प्रश्न है। जैसे हम सभी जानते हैं कि हमें ईमानदार, निष्पक्ष, सत्यवादी होना चाहिए,

पर क्या हम यह सब गुण व्यावहारिक रूप में प्रयोग करते हैं ? इस कारण आज आवश्यकता इस बात की भी है कि ज्ञान सिर्फ सैद्धान्तिक धरातल तक ही सीमित न रह जाये वरन् उसका व्यावहारिक प्रयोग भी किया जा सके।

3.विश्वबंधुत्व व विश्व नागरिकता की भावना का विकास (development of the feeling of world citizenship):- शिक्षा के द्वारा हमें इस विचारधारा की भी पूर्ण व्याख्या करनी होगी कि बालक स्वयं को यह न समझे कि मैं भारत का हूँ, मैं पाकिस्तान का हूँ बल्कि उसके अंदर यह दृष्टिकोण पैदा करना है कि वह संपूर्ण विश्व समुदाय का एक अभिन्न अंग है। यह भाव यदि हमने छात्रों के अंदर उत्पन्न कर दिया तो विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में समायोजन व सामंजस्य के भाव को उत्पन्न किया जा सकता है और यह भाव विश्व शान्ति बनाये रखने में अपनी सक्रिय भूमिका अदा करेगा।

4.पारस्परिक निर्भरता की भावना का विकास (DEVELOPMENT OF THE FEELING OF INTERDEPENDENT). यदि हम अपने व्यक्तिगत जीवन को ही लें तो हमें इस जीवन को सुसंचालित करने में अपने लोगों का योगदान दिखाई देगा। यह बात एक राष्ट्र के स्तर पर भी लागू होती है। कोई भी राष्ट्र अपनी सभी आवश्यकताओं को स्वयं ही पूर्ण नहीं कर सकता। उसे कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दूसरे राष्ट्रों के सहयोग की आवश्यकता होती है। यह बात यदि सभी के समझ में आ जाये तो सभी देश एक-दूसरे के साथ अच्छे संबंध बनाये रखने का प्रयास करेंगे।

5.मानव जाति को समान विरासत का ज्ञान कराना (To give the knowledge about the common heritage of mankind):- मानव जाति के उद्गम का इतिहास पढ़ाते समय छात्रों के अंदर यह भाव जागृत करना होगा कि हम सब उत्पत्ति की दृष्टि से समान हैं। अतः हमें एक-दूसरे के साथ प्रेम व भ्रातृत्व की भावना के साथ रहना चाहिए।

6. स्वस्थ सामाजिक अभिवृत्ति, दृष्टिकोण व सामाजिक अन्तःक्रिया की भावना का विकास करना। (Inculcating healthy social attitudes, outlooks and modes of social interaction in children.)

7.परम्पराओं, रीति-रिवाज व जीवनयापन के तरीकों में अंतर के कारण को समझना। (Improving the understanding of underlying reasons that are responsible for different traditions, customs and ways of life.)

8.व्यक्तिगत व राष्ट्रीय जीवन से भय को दूर करना। (Elimiration of fear from individual and social life.

9.व्यक्तिगत व सामाजिक चेतना विकसित करना। (To improve individual and social consciousness.)

II शिक्षण विधियों में अंतर (CHANGE IN TEACHING METHOD)

1. शिक्षण विधि का व्यावहारिक होना आवश्यक है। जहां तक संभव हो, अध्यापक को छात्र को ''करके सीखने'' (Learning by doing)के लिए प्रेरित करना चाहिए।

2. वैज्ञानिक विधि का अध्यापक को अनुपालन करना चाहिए, जिससे छात्रों में वस्तुनिष्ठता, तर्क, चिन्तन व सूझबूझ की शक्ति का समुचित विकास हो सके।

III पाठ्यक्रम में परिवर्तन (CHANGE IN SYLLABUS)

1. पाठ्यक्रम में हमें जो परिवर्तन लाना होगा, उसमें प्रमुख है कि पाठ्यक्रम में विश्व के प्रमुख धर्मो के आदर्श, रहन-सहन व व्यवहार के तरीकों का अध्ययन छात्रों को कराना होगा।

2. अंतर्राष्ट्रीय कल्याण के कार्यक्रमों का पुनर्निरीक्षण करना, जिससे सभी राष्ट्रों का विकास हो सके।

3. यूनेस्को के सुझावों के अनुरूप पाठ्यक्रम में सामाजिक अध्ययन विषय को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाएगा।

4. साहित्य, कला व संगीत को इस रूप में पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जायेगा जिससे छात्र सिर्फ अपने देश के बारे में ही ज्ञान प्राप्त न करें वरन् विश्व के अन्य देशों के भी साहित्य, कला व संगीत का ज्ञान कर सकें। पाठ्यक्रम में जो भी विषय सम्मिलित किया जाए, उसका उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय भावना का विकास करना होना चाहिए। अब हम विभिन्न विषयों का अध्ययन किस प्रकार कराया जाना चाहिए, इसकी चर्चा करेंगे:-

(अ) साहित्य (Literature) - साहित्य का अध्ययन कराते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए -

(1) इसके द्वारा छात्रों में मानवीय दृष्टिकोण को उत्पन्न करना चाहिए।

(2) साहित्य को प्रकृति से संबंधित करके पढाया जाना चाहिए।

(3) इसके द्वारा विश्व मूल्यों का ज्ञान कराया जाए।

(4) यह मानवीय संबंधों का वास्तविक अर्थ बताने में सहयोग दे।

(5) मानव जीवन के विभिन्न अनुभवों, जैसे-सुख-दुःख, सफलता-असफलता आदि का ज्ञान छात्रों को कराया जाये।

हमें साहित्य का अध्ययन कराते समय यह नहीं सोचना चाहिए कि यह हमारे देश का साहित्य है जो अच्छा होगा व दूसरे देश का है तो खराब होगा। साहित्य में अन्तर्निहित भावनाएं सबके ऊपर एक-सा प्रभाव डालती हैं। हंसी का साहित्य सभी को हंसायेगा व दुःख का सहित्य सभी को उद्वेलित करेगा। इस कारण हमें सत्-साहित्य का अध्ययन छात्र को कराना चाहिए।

(ब) कला **(Art)** -

(1) अंतर्राष्ट्रीय भावना का विकास करने में कला का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। कोई भी कला अभाषीय होती है। अतः उसे समझना आसान होता है। चंकि उसे समझने हेतु भाषा की आवश्यकता नहीं होती है।

(2) यह विश्व के विभिन्न देशों के नागरिकों की सृजनात्मक शक्ति की अभिव्यक्ति है।

(3) इससे समय व स्थान की दूरी समाप्त की जा सकती है।

(4) यह कलाकार की भावनाओं की अभिव्यक्ति है व भावनाएं अंतर्राष्ट्रीय होती हैं।

(स) इतिहास **(History)**- पाठ्यक्रम द्वारा यदि हम अंतर्राष्ट्रीय एकता का विकास करना चाहते हैं तो उसमें हमें गणित विषय के अध्ययन को अनिवार्य रूप से सम्मिलित करना होगा। इस संबंध में के.जी. सैय्यदन ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है:-

(1) इतिहास का आधार राजनैतिक व सैनिक पक्ष नहीं होना चाहिए वरन् विश्व की सामाजिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों को इतिहास के अंदर सम्मिलित करना चाहिए।

(2) इसके द्वारा इस बात पर भी प्रकाश डालना चाहिए कि वैज्ञानिक व तकनीकी प्रभाव ने विश्व जन-समुदाय के जीवन को किस स्तर तक प्रभावित किया है।

(3) विश्व के विभिन्न देशों की परस्पर निर्भरता का ज्ञान कराना।

(4)इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए इतिहास की पाठ्य पुस्तकों को पुनः लिखना।

(5) छात्रों में ऐतिहासिक पत्रिकाओं व समाचार-पत्रों को पढ़ने की रूचि जागृत करना।

इतिहास वास्तव में महत्वपूर्ण विषय है। चूंकि अब तक इतिहास के माध्यम से संकुचित राष्ट्रवादी विचारधारा को ही विकसित किया गया है। इस कारण हमें इतिहास को उस रूप में प्रस्तुत करना होगा जो सांस्कृतिक समन्वय कर सके।

(द) भूगोल **(Geography)** - भूगोल का भी हमें व्यापक अध्ययन करना होगा। जिससे वह सम्पूर्ण विश्व को समझने की क्षमता प्रदान कर सके। भूगोल ही इस बात का ज्ञान कराता है कि विश्व के विभिन्न भागों में लोगों का रहन-सहन किस प्रकार का है तथा भौगोलिक परिस्थितियों का उद्योगों, वनस्पति, खान-पान, वेश-भूषा आदि पर क्या प्रभाव पड़ता है। भूगोल में जिन अन्य बातों को सम्मिलित किया जाना चाहिए, वे इस प्रकार हैं -

(1) छात्रों को विभिन्न देशों के रहन-सहन व रीति-रिवाज बताना।

(2) भौगोलिक परिस्थितियों का मानव-जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका ज्ञान कराना।

(3) विभिन्न देशों के संचार साधन, आयात व निर्यात सामग्री, प्राकृतिक सम्पदा, खाद्य सम्पदा आदि का विस्तृत ज्ञान कराना।

(य) नागरिक शास्त्र **(Civics)**-नागरिक शास्त्र के द्वारा छात्रों को निम्नलिखित बातों का ज्ञान देना चाहिए -

(1) अधिकारों व कर्तव्यों का ज्ञान

(2) विश्व सरकार के प्रति आस्था

(3) विश्व नागरिकता हेतु तैयार करना।

(र) विज्ञान **(Science)**-विज्ञान के सामाजिक पक्ष पर अधिक बल दिया जाना चाहिए, जिससे विज्ञान के आविष्कारों का प्रयोग मानव कल्याण के लिए किया जाए, मानव विनाश के लिए नहीं -

(1) छात्रों के अंदर यह दृष्टिकोण विकसित करना कि वह विज्ञान की देन को मानव सभ्यता के विकास हेतु प्रयोग करें।

(2) छात्रों को विज्ञान का सकारात्मक व रचनात्मक पक्ष बताना।

(3) सामाजिक समस्याओं, जैसे-गरीबी, कुपोषण, महामारियों व रूढ़िवादियों को समाप्त करने में विज्ञान का योगदान।

(ल) गणित **(Maths)** -गणित विषय के द्वारा हम यदि अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव उत्पन्न करना चाहते हैं तो हमें छात्रों की तर्क व सूझबूझ शक्ति का निर्माण व विकास करना होगा, जिससे छात्र सही-गलत निर्णय ले सके व उसकी रूचि वस्तुमनिष्ठ हो सके।

IV पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का आयोजन (ORGANIZATION OF CO-CURRICULAR ACTIVITIES)

1. छात्रों को विभिन्न देशों से पत्र द्वारा सम्पर्क (Pen-friends) स्थापित करने को प्रेरित करना।

2. अंतर्राष्ट्रीय महत्व के व्यक्तियों का जन्मदिन विद्यालय में मनाना।

3. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खेलकूद प्रतियोगिताओं को आयोजित करना।

4. विज्ञान, कला, साहित्य इत्यादि की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रदर्शनी लगाना।

5. महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं पर नाटक आदि आयोजित करना।

6. अंतर्राष्ट्रीय दिवस, यथा-यू.एन.ओ., डब्लू.एच.ओ. विद्यालय में मनाना।

7. अंतर्राष्ट्रीय शैक्षिक भ्रमण आयोजित करना।

8. अंतर्राष्ट्रीय विद्यार्थी संघ बनाना।

9. अंतर्राष्ट्रीय एकता को विकसित करने हेतु दूरदर्शन, आकाशवाणी व समाचार-पत्रों का सहयोग लेना।

10. विभिन्न देशों के स्वतंत्रता दिवस विद्यालय में मनाना।

11. अपने शहर में किसी भी देश से आये हुए महान व्यक्ति को विद्यालय में आमंत्रित करना।

12. अंतर्राष्ट्रीय तनाव, विषम परिस्थिति, जैसे-युद्ध, भूकम्प, बाढ़ के समय छात्रों से सहयोग देने की अपील करना।

13.5.1 अंतर्राष्ट्रीय एकता बनाने में अध्यापक की भूमिका (TEACHER'S ROLE IN INTERNATIONA UNDERSTANDING)

अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव को विकसित करने में अध्यापक का महत्वपूर्ण योगदान है। उसके व्यक्तिगत गुण ही इस दिशा में सकारात्मक भूमिका अदा करते हैं। अध्यापक में जिन गुणों का होना अपेक्षित है, वे निम्न हैं:-

1. वह अंतर्राष्ट्रीय भावना के प्रति आस्था रखते हों।

2. तथ्यों की विवेचना करते समय उनका दृष्टिकोण निष्पक्ष व वस्तुनिष्ठ होना चाहिए।

3. अन्य व्यक्तियों के कल्याण का भाव उनमें होना चाहिए।

4. सत्य को स्वीकार करने की भावना।

5. स्पष्ट व स्वतंत्र चिन्तन-उसका चिन्तन पक्षपातपूर्ण नहीं होना चाहिए।

6. व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की भावना का होना।

7. सभी छात्रों से प्रेम व उनके लिए आदर-भाव होना।

अपनी उन्नति जानिए (CHECK YOUR PROGRESS)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-

प्र. 1 आज आवागमन व संचार के साधनों ने विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के मध्य .....समाप्त कर दिया है।

प्र. 2 आज के युग में कोई भी राष्ट्र स्वयं में ..... नहीं है।

प्र. 3 UNESCO का पूरा नाम है .....

प्र. 4 शिक्षण विधि का व्यावहारिक होना आवश्यक है। जहां तक संभव हो अध्यापक द्वारा छात्रों को ..... पर सीखने पर बल दिया जाना चाहिए।

प्र. 5 ..... विधि का अध्यापक को अनुपालन करना चाहिए, जिससे छात्रों में वस्तुनिष्ठता, तर्क, चिन्तन व सूझ की शक्ति समुचित विकास किया जा सके।

13.6 सारांश (SUMMARY)

वैसे तो यह विचारधारा बहुत पहले पियरे डुबियस ने दी थी, परन्तु इसका नियमित विकास 19वीं शताब्दी में हुआ। 1912 में हेग में एक सम्मेलन हुआ व उस पर प्रकाश डाला गया, लेकिन सम्मेलन असफल ही रहा। तत्पश्चात् प्रथम विश्वयुद्ध के बाद श्रीमती एण्डूज ने अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा विभाग को राष्ट्रीय संघ में मिलाने का प्रयास किया और दुर्भाग्यवश यह प्रयास भी असफल रहा। चूंकि उस समय हिटलर व नाजी का जोर अधिक था। इस कारण राष्ट्रवादी विचारधारा ने यह सब दबा दिया। परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के भयंकर परिणामों ने लोगों को आतंकित कर दिया व 1945 में 43 राष्ट्रों ने मिलकर संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना की। संयुक्त राष्ट्र संघ ने जो सुझाव दिये व जिन सिद्धान्तों का निर्माण किया, वह इस प्रकार है:-

''इस संघ का प्रमख ध्येय है विश्व में शान्ति बनाये रखना और अंतर्राष्ट्रीय स्थिरता का विकास करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक और शैक्षिक सहयोग **(SUMMARY)** विकसित करेगा।''

यूनेस्को की स्थापना की गई व इसका आधारभूत सिद्धान्त है, ''चूंकि युद्ध का प्रारम्भ मानव के मस्तिष्क से होता है इसलिए मनुष्य के दिमाग में शान्ति के प्रति आस्था उत्पन्न करनी है..... इसलिए मनुष्य की यह जिम्मेदारी है कि वह विभिन्न संस्कृतियों में समन्वय स्थापित करे व मनुष्य के दिमाग में न्याय व शान्ति के प्रति आस्था उत्पन्न करे..... वह शक्ति जो सरकार की राजनैतिक व आर्थिक व्यवस्था पर आधारित न हो। चूंकि वह अनन्त नहीं हो सकती, वरन् वह शान्ति जिसमें व्यक्तियों का पूर्ण सहयोग हो व जो मानवता के बौद्धिक व नैतिक आधारों पर टिकी हुई हो.....तभी वह असफल व क्षणिक नहीं होगी।''

13.7 शब्दावली (GLOSSARY)

पारस्परिक निर्भरता की भावना का विकास (DEVELOPMENT OF THE FEELING OF INTERDEPENDENT). यदि हम अपने व्यक्तिगत जीवन को ही लें तो हमें इस जीवन को सुसंचालित करने में अपने लोगों का योगदान दिखाई देगा। यह बात एक राष्ट्र के स्तर पर भी लागू होती है। कोई भी राष्ट्र अपनी सभी आवश्यकताओं को स्वयं ही पूर्ण नहीं कर सकता। उसे कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दूसरे राष्ट्रों के सहयोग की आवश्यकता होती है। यह बात यदि सभी के समझ में आ जाये तो सभी देश एक-दूसरे के साथ अच्छे संबंध बनाये रखने का प्रयास करेंगे।

मानव जाति को समान विरासत का ज्ञान कराना (To give the knowledge about the common heritage of mankind):- मानव जाति के उद्गम का इतिहास पढ़ाते समय छात्रों के

अंदर यह भाव जागृत करना होगा कि हम सब उत्पत्ति की दृष्टि से समान हैं। अतः हमें एक-दूसरे के साथ प्रेम व भ्रातृत्व की भावना के साथ रहना चाहिए।

13.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (ANSWERS OF PRACTICE QUESTIONS)

उ. 1 दूरी

उ. 2 आत्मनिर्भर

उ. 3 United Nations Educational Scientific and Cultural Organization

उ. 4 करके सीखने पर (Learning by doing)

उ. 5 वैज्ञानिक विधि

13.91. संदर्भ ग्रन्थ सूची (BIBLIOGRAPHY)

1.पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

13.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (USEFUL BOOKS)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार 2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स: नई दिल्ली।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

6. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शिक्षा दर्शन , एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स: नई दिल्ली।

13.11 लघु उत्तरीय प्रश्न (SHORT ANSWER QUESTIONS)

प्र. 1. अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना से आप क्या समझते हैं ? अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना की आवश्यकता आज क्यों महसूस कर रहे हैं ? व्याख्या कीजिए।

प्र. 2. यूनेस्को ने अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना बढ़ाने में क्या योगदान दिया है ? विस्तृत व्याख्या कीजिए।

प्र. 3. बालक में अंतर्राष्ट्रीय एकता के विकास हेतु आप किन बातों को महत्वपूर्ण समझते हैं ? विवेचना कीजिए।

प्र. 4. आज के अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में शिक्षा शान्ति की स्थापना के लिए क्या कर सकती है ? व्याख्या कीजिए।

प्र. 5. अंतर्राष्ट्रीय एकता बढ़ाने में अध्यापक की भूमिका का वर्णन कीजिए।

इकाई 14 शिक्षा द्वारा मानव संसाधन विकास, शिक्षा और रोजगार (Education for Human Resource Development, Education and Employment)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)
14.2 उद्देश्य (Objectives)
14.3 जनशक्ति नियोजन और शिक्षा (Manpower-planning and Education)
14.3.1 जनशक्ति का उपयोग तथा उच्च शिक्षा (Use of man power and Higher education)
14.3.2 जनशक्ति नियोजन की सीमायें (Limitations of Manpower Planning)
14.4 शैक्षिक नियोजन का अर्थ एवं इसकी आवश्यकता (Meaning and Need of Education Planning)
14.4.1 शैक्षिक नियोजन के सिद्धान्त (Principles of Education Planning)
14.5 रोजगार परक शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Employment Education)
14.5.1 रोजगार परक शिक्षा और शिक्षक (Employment Education and Teacher)
14.5.2 रोजगार परक शिक्षा और शिक्षक विधियाँ (Employment Education and Teaching method)
14.6 सारांश (Summary)
14.7 शब्दावली (Vocauolary)
14.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practices Question)
14.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (bibliography)
14.10 सहायक/उपयोगी पुस्तकें (Useful Books)
14.11 लघु उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Question)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

कुछ वर्ष पूर्व मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम शिक्षा मंत्रालय था। यह मंत्रालय शिक्षा के विभिन्न अंगों का काम देखता था। लेकिन बाद में यह माना जाने लगा कि जैसे धन एक पूँजी है,

साधन है, उसी प्रकार मानव भी एक पूँजी है, एक साधन है, संसाधन है। इसलिये पूर्व के शिक्षा मंत्रालय का नाम बदलकर मानव संसाधन विकास मंत्रालय कर दिया गया।

पहले शिक्षा का मूल्य स्वयं शिक्षा में ही निहित था। शिक्षा को अनुत्पादक क्रिया माना जाता था। लेकिन देश में जब व्यापक स्तर पर शिक्षा का प्रचार-प्रसार होने लगा और राज्य को शिक्षा पर अधिक धन खर्च करना पड़ा तो शिक्षा-शास्त्रियों व अर्थ-शास्त्रियों का ध्यान शिक्षा के आर्थिक पक्ष की ओर गया। विद्वान् शिक्षा के अर्थशास्त्र पर चिन्तन करने लगे।

आज ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो व्यक्ति को आत्मनिर्भरता की प्रेरणा दे, उसे परिश्रमी बनाये, उसमें मौलिक चिन्तन की प्रवृत्ति उत्पन्न करे तथा उसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करें। व्यक्ति केवल कुछ तथ्यों या सूचनाओं को रटकर अपना जीवन-निर्वाह नहीं कर सकता। जीवन-निवाह के लिये उसे अपनी क्षमता और योग्यता के अनुकूल कार्य करना पड़ेगा। ऐसा करके न केवल वह स्वावलम्बन के मार्ग पर चलेगा वरन् वह राष्ट्र व समाज का भी कल्याण करेगा। यदि कोई व्यक्ति उत्पादन या निर्माण द्वारा देश के निर्यात में बढ़ोत्तरी करता है तो इससे देश आर्थिक दृष्टि से समृद्ध होगा। बड़े-बड़े कारखाने स्थापित होने से बेरोजगार जनता को रोजगार मिलेगा तथा वस्तुओं की कमी भी नहीं होगी।

जनता को तब दुःख पहुँचाता है, जब देश में बेरोजगारी होती है, अशिक्षा का अंधकार रहता है, वैज्ञानिक और मौलिक चिन्तन का अभाव होता है तथा आवश्यक वस्तुएँ पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलतीं। इसलिये शिक्षा का स्वरूप ऐसा होना चाहिये कि व्यक्ति निर्माण-कार्य में संलग्न हो और आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कारों का लाभ उठाकर उत्पादन में वृद्धि करें। इससे व्यक्ति की क्षमता एवं योग्यता का भी सही उपयोग होगा और राष्ट्र एवं समाज का भी कल्याण होगा।

व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त कर व्यक्ति अपनी आजीविका अर्जित कर सकेगा, वह किसी पर निर्भर नहीं रहेगा। निराशा और कुण्ठा के स्थान पर उसमें आशाओं और उमंगों का संचार होगा। वह एक उत्तम जीवन व्यतीत कर सकेगा। वह अपने अन्तःकरण में कुछ कर सकने का संकल्प जुटा सकेगा। जो व्यक्ति जीवन में कोई संकल्प नहीं ठानता तथा उसकी पूर्ति के लिये सद्प्रयास नहीं करता, कठिन तपस्या नहीं करता, एक प्रकार से उसका जीवन व्यर्थ है। उस व्यक्ति का जीवन उत्तम है जो परिवर्तनशील तथ्यों को आत्मसात् करके सन्तुलित व्यवहार कर सके।

14.2 उद्देश्य (Objectives)

1. मानव संसाधन विकास के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगे।
2. मानव के विकास हेतु शिक्षा व उच्च शिक्षा का विकास कर सकेगे।

3. मानवीय विकास की आवश्यकता को पूरा करने हेतु शिक्षा के उपयोग को समझ सकेगे।

4. रोजगार परक शिक्षा की व्यवसाय की आवश्यकता के महत्व को समझ सकेगे।

5. शिक्षा के साथ रोजगार परक शिक्षा के सम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त कर सकेगे।

14.3 जनशक्ति नियोजन और शिक्षा (Manpower-planning and Education)

जनशक्ति-नियोजन का अर्थ: एच0एस0 पानेस के शब्दों में, ''इस्पात का कारखाना उस समय तक अर्थहीन है, जब तक उसके लिये आवश्यक वैज्ञानिक, इंजीनियर, तकनीशियन, कुशलता प्राप्त श्रमिक, प्रबन्ध आदि का प्रावधान न किया जाये।'' स्पष्ट है कि आर्थिक विकास का उत्पादन के मानवीय साधनों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। देश की शिक्षा-प्रणाली ऐसी होनी चाहिये जिससे देश की उत्पादन-आवश्यकता के अनुसार योग्य एवं प्रशिक्षित कार्यकर्त्ता उपलब्ध हो सकें। भविष्य में देश के आर्थिक विकास के लिये विभिन्न क्षेत्रों में कितनी मानव-शक्ति की आवश्यकता होगी, शैक्षिक निर्णय इसी तथ्य के अनुरूप होने चाहिये। दीर्घकालीन मानव-शक्ति सम्बन्धी पूर्ण अनुमान तथा नियोजन इसीलिये आवश्यक हैं।

शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त व्यक्ति किसी उपयुक्त व्यवसाय को अपनाना चाहता है। इसलिये मानव-शक्ति सम्बन्धी दृष्टिकोण शैक्षिक नियोजन का आवश्यक अंग माना जाता है। दूसरे शब्दों में, शैक्षिक नियोजन हेतु यह जानना आवश्यक है कि सामाजिक एवं आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कौन-कौन से व्यवसायों में रोजगार प्राप्ति के अवसर प्राप्त होंगे और उनके लिये किस स्तर की एवं किस प्रकार की शिक्षा आवश्यक है ? इसी आधार पर शैक्षिक योजना में प्रावधान किया जाना चाहिये तथा शिक्षा के विभिन्न भागों, शाखाओं एवं स्तरों पर व्यय का विभाजन भी उसी आधार पर किया जाना चाहिये।

जनशक्ति की आवश्यकताओं के अनुसार शैक्षिक नियोजन किया जाता है। जनशक्ति की आवश्यकताओं के अनुसार शैक्षिक नियोजन के लिये निम्नलिखित निर्णय लेने पड़ते हैं-

1.अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न व्यवसायों के लिये काफी लम्बे समय के लिये अपेक्षित जनशक्ति का पूर्व अनुमान लगाना।

2.विभिन्न व्यवसायों के लिये विभिन्न स्तर और विभिन्न प्रकार की शिक्षा का प्रावधान करना।

3.प्रस्तावित व्यावसायिक शिक्षा के लिये शिक्षा पद्धति में अपेक्षित परिवर्तन करना।

14.3.1 जनशक्ति का उपयोग तथा उच्च शिक्षा (Use of man power and Higher education)

व्यक्ति जब किसी व्यवसाय, रोजगार या उद्योग में लगाये जाने योग्य होते हैं तभी उनकी उपयोगिता होती है। इसके लिये विश्वविद्यालयों द्वारा अपने पाठ्यक्रमों में इस प्रकार के विषय शामील किये जाये जो छात्रो को रोजगार के नये-नये अबसर प्रदान कर सके।

14.3.2 जनशक्ति नियोजन की सीमायें (Limitations of Manpower Planning)

यद्यपि शिक्षा-पद्धति, रोजगार तथा जनशक्ति नियोजन में पारस्परिक सम्बन्ध है लेकिन इसमें कभी-कभी कुछ कठिनाइयाँ भी आती है, जो कि निम्नलिखित हैं -

1. जनशक्ति नियोजन अनेक परिस्थितियों तथा कारकों पर निर्भर होता है। किसी भी एक कारक के बदल जाने से जनशक्ति के पूर्व अनुमान में गलती हो सकती है।

2. जनशक्ति की माँग तथा पूर्ति में असन्तुलन हो सकते हैं। इस असन्तुलन का एक मुख्य कारण यह है कि कुछ राज्य अपनी नीति के अनुसार अपने ही राज्य के मूल नागरिकों को रोजगार प्रदान करते हैं।

3. जब हम यह कहते हैं कि अपेक्षित मात्रा और अपेक्षित किस्म की जनशक्ति का उत्पादन किया जायेगा तब इसका अर्थ यह नहीं होता कि माँग और पूर्ति में उपयुक्त सन्तुलन स्थापित किया जा सकता है। भारत जैसे विशाल देश में जहाँ आर्थिक, सामाजिक तथा क्षेत्रीय विभिन्नतायें बहुत अधिक हैं, व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्तियों की माँग और उनकी पूर्ति में सन्तुलन नहीं लाया जा सकता।

4. यद्यपि शिक्षा का रोजगार से घनिष्ठ सम्बन्ध है लेकिन शिक्षा प्रणाली रोजगार के अवसर नहीं बढ़ा सकती। किसी व्यवसाय में कितने लोग लगाये जा सकेंगे, इसका निर्धारण शिक्षा पद्धति नहीं कर सकती, क्योंकि शिक्षा व्यक्ति को सेवा-योग्य बनाती है। अतः कुछ सीमा तक ही वह रोजगार के क्षेत्र बढ़ा सकती है।

5. शिक्षा का उद्देश्य केवल जनशक्ति का उत्पादन ही नहीं है वरन् शिक्षा के अन्य बहुत से महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं।

ये सब कठिनाइयाँ होने के बावजूद भी हम कह सकते है कि मानव-शक्ति और आर्थिक विकास में सुन्दर सम्बन्ध है। विभिन्न देशों के आर्थिक विकास में शिक्षा का प्रमुख हाथ रहा है।

14.4 शैक्षिक नियोजन का अर्थ एवं इसकी आवश्यकता (Meaning and Need of Education Planning)

शिक्षा द्वारा व्यक्ति का न केवल सामाजिक व सांस्कृतक विकास होता है, वरन् वह आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी भी बनता है तथा राष्ट्रीय उत्पादन एवं समृद्धि के विकास में सहायक भी सिद्ध होता है। शैक्षिक नियोजन के द्वारा, वस्तुतः व्यक्ति के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के मध्य सामन्जस्य स्थापित किया जाता है। दूसरे शब्दों में, देश की परम्परा एवं संस्कृति की रक्षा करते हुये सामाजिक तथा प्राविधिक नेतृत्व तथा अपेक्षित जनशक्ति उत्पन्न करना शैक्षिक नियोजन का मुख्य दायित्व है। शैक्षिक नियोजन के द्वारा एक निश्चित अवधि के लिये शिक्षा-विकास की एक यथार्थवादी रूप-रेखा प्रस्तुत की जा सकती है। स्पष्ट है कि शैक्षिक नियोजन एक संयोजन शक्ति के रूप में शिक्षा-प्रणाली के विभिन्न अंगों के विकास को समायोजित करता है तथा राष्ट्रीय विकास-योजना की पृष्ठभूमि में दीर्घकालीन उद्देश्यों की प्राप्ति निश्चित करता है।

14.4.1 शैक्षिक नियोजन के सिद्धान्त (Principles of Education Planning)

शैक्षिक नियोजन के मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित हैं -

1. शैक्षिक नियोजन शैक्षिक उद्देश्यों पर आधारित होना चाहिये (**Educational Planning should be based on Education Aims and Objectives**) - शिक्षा के उद्देश्य एक ओर तो व्यक्ति के आन्तरिक विकास से सम्बन्धित होते हैं तो दूसरी ओर उनका सम्बन्ध राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक विकास से होता है। इनमें से कुछ उद्देश्य स्थायी एवं दीर्घकालीन तथा कुछ अल्पकालीन होते हैं, लेकिन ये सभी परस्पर आश्रित होते हैं। शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत इनमें समन्वय स्थापित किया जाता है। दूसरे शब्दों में, शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत शैक्षिक एवं राष्ट्रीय विकास सम्बन्धी उद्देश्यों के मध्य सामंजस्य स्थापित किया जाता है।

2. आवष्यक सूचनाओं का संकलन (**Collection of necessary information**) - शैक्षिक नियोजन हेतु निम्नलिखित सूचनाओं एवं आँकड़ों का संकलन किया जाता है-

साक्षरता 'स्थिति', शिक्षक-छात्र अनुपात, शैक्षिक सुविधाओं एवं साधनों की स्थिति, विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर अपव्यय एवं अवरोध, शिक्षा हेतु उपलब्ध आर्थिक साधन, वर्तमान राष्ट्रीय आय तथा उसका अनुमानित भावी वृद्धि-क्रम, राष्ट्र की आर्थिक विकास-गति, मानव-शक्ति की वर्तमान स्थिति एवं उसकी भावी आवश्यकता आदि। इन सभी सूचनाओं के आधार पर ही शैक्षिक नियोजन सम्भव हो पाता है।

3. प्राथमिकता-क्रम स्थापित करना ¼Establishing order of priority½- शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत शैक्षिक उद्देश्यों तथा उपलब्ध आर्थिक एवं मानवीय साधनों के आधार पर शिक्षा के विभिन्न स्तरों एवं अंगों के विस्तार और आवश्यक परिवर्तनों का प्रावधान करना पड़ता है। शैक्षिक नियोजन के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि शैक्षिक विस्तार तथा गुणात्मक उन्नति के कई विकल्पों के मध्य तथा विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में प्राथमिकता-क्रम स्थापित करें।

4. विकल्पों का निर्धारण **(Decisions regarding various Options)** - शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत विकल्पों में से चयन करना आवश्यक होता है। विभिन्न समस्याओं के विकल्प इस प्रकार हो सकते हैं - शिक्षा के मात्रात्मक विस्तार को अधिक महत्त्व दिया जाये अथवा गुणात्मक स्तर को, कला-सम्बन्धी विषयों को प्रधानता दी जाये या विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा को, राष्ट्रीय आय का कितना-कितना भाग शिक्षा की विभिन्न शाखाओं एवं स्तरों पर व्यय करना उचित है, प्रति वर्ष कितने शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिये, आदि।

5. योजना का सामाजिक मूल्यांकन तथा लचीलापन **(Periodic Evaluation of Planning and Elasticity in Planning)** - योजना की सफलता के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि इसकी प्रगति का मूल्यांकन समय-समय पर किया जाये जिससे इसकी कठिनाइयाँ दूर की जा सकें। इस मूल्यांकन के आधार पर परिवर्तन किये जा सकते हैं। जैसे-शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अनावश्यक अपव्यय एवं अवरोधों का उन्मूलन करना, शैक्षिक विस्तार का उपलब्ध रोजगार-अवसरों से समायोजन करना, शिक्षण-विधियों में सुधार करना आदि।

6. योजना-निर्माण एवं कार्यान्विति में कार्यकर्त्ताओं का सहयोग **(Cooperation)** - योजना के सफल निर्माण एवं कार्यान्वयन हेतु यह आवश्यक है कि शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर कार्य करने वाले सभी व्यक्तियों का इसमें योगदान हो। किसी भी योजना निर्माण में शिक्षाशास्त्री, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, समाज-मनोवैज्ञानिक, राजनीतिशास्त्री आदि के अतिरिक्त शिक्षक, अभिभावक, प्रशासक व जननेता आदि सभी का परामर्श प्राप्त किया जाये। इससे योजना का स्वरूप भी यथार्थ बन सकेगा तथा इसकी कार्यान्विति में भी सभी सम्बन्धित व्यक्तियों का हार्दिक सहयोग भी प्राप्त होगा।

7. योजना सम्बन्धी उपयुक्त विज्ञप्ति **(Information regarding Planning)** - वस्तुतः योजना तभी सफल हो सकती है जब इसके सभी कार्यकर्त्ता परस्पर सहयोग करें। यह सहयोग तभी सम्भव है जब शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वालों तथा अन्य सम्बन्धित सभी व्यक्तियों एवं जनसाधारण को राष्ट्रीय विकास-योजना के सन्दर्भ में शैक्षिक योजना के उद्देश्यों तथा कार्यक्रमों का उचित ज्ञान हो। इसलिये यह आवश्यक है कि योजना-सम्बन्धी विभिन्न स्तरों के मध्य आवश्यक संचार-व्यवस्था के साथ-साथ शैक्षिक योजना तथा उसकी प्रगति आदि के विषय में पर्याप्त विज्ञप्ति प्रचारित एवं प्रसारित हो।

8. शिक्षा सम्बन्धी आँकड़ों का संकलन एवं अनुसंधान हेतु सांख्यिकी तथा अनुसंधान विभाग की स्थापना **(Collection of Education Data and Establishment of Statistics and Research Department for Research)** - सफल नियोजन हेतु यह अत्यन्त आवश्यक है कि सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति सम्बन्धी सही आँकड़े उपलब्ध हों। इस कार्य के निमित्त राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरों पर तथा शिक्षा विभाग के अन्तर्गत सांख्यिकी एवं अनुसंधान विभाग स्थापित किये जाने चाहियें। इससे शिक्षा सम्बन्धी सही सूचनायें उपलब्ध हो सकेंगी।

14.5 रोजगार परक शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Employment Education)

रोजगार परक शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हो सकते हैं -

1. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का निर्माण **(Formation of Scientific Outlook)** - जीवन को प्रगतिशील और आधुनिक बोधगम्य बनाने के लिये यह आवश्यक है कि व्यक्ति के विचारों पर अन्धविश्वासों, परम्पराओं व रूढ़ियों की कोई छाप न हो। व्यक्ति स्वतन्त्र वातावरण में पूर्ण निष्पक्षता के साथ विचार करे। वैज्ञानिक दृष्टिकोण निर्मित होने पर व्यक्ति अपने द्वारा किये जाने वाले कर्मों और उनसे प्राप्त फलों की व्याख्या वैज्ञानिक आधार पर करेगा। इससे उसके विश्वास, उसके जीवन-लक्ष्य सत्य पर आधारित होंगे। इससे उसके द्वारा किये जा रहे निर्माण-कार्यों में भी परिपक्वता आयेगी। वह अपने जीवन में समस्त कार्य सोच-समझकर तर्क के आधार पर करेगा।

2. सतत् कर्म करने में गहन विश्वास **(Deep faith in doing work continuously)**- रोजगार परक शिक्षा का यह उद्देश्य है कि वह शिक्षार्थियों में कर्म करते रहने के संदेश को प्रसारित करें। गीता में भगवान् कृष्ण ने भी कर्म का संदेश दिया है। यदि हम आलस्य और प्रमाद में रहें तो हम सदैव पिछड़े रहेंगे। राष्ट्र की उन्नति का प्रमुख आधार अथाह श्रम है। श्रमपूर्वक किये निरन्तर कर्मों से ही लक्ष्मी उदित होती है। उत्पादनशील शिक्षा शिक्षार्थियों के कार्य करने पर बल दे। शिक्षा में क्रिया का प्रमुख स्थान होना चाहिये। क्रिया से ही बालक यथार्थ व व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करता है। शिक्षार्थियों पर जब बचपन से क्रिया करने के संस्कार पड़ेंगे तो वे बड़े होकर बड़े-बड़े काम करेंगे। जीविकोपार्जन के क्षेत्र में भी वे अपना नाम अमर कर सकेंगे।

3. शारीरिक श्रम के प्रति आस्था उत्पन्न करना **(To arise faith in the dignity of Physical Labour)** - वर्तमान समय में विद्यालयों में शिक्षार्थियों को जो शिक्षा प्रदान की जाती है, उससे तो वे शारीरिक श्रम में रूचि लेने के स्थान पर उससे कतराने लगते हैं। उनमें ऐसी भावना बन जाती है कि जैसे शारीरिक श्रम कोई निम्न स्तरीय काम है। लेकिन यह भ्रमपूर्ण धारणा है। किसी भी निर्माण में शारीरिक श्रम की आवश्यकता पड़ेगी। शारीरिक श्रम करने से हमारी इन्द्रियाँ विकसित होती हैं और मांस-पेशियाँ सुदृढ़ होती हैं। रोजगार परक शिक्षा का यह दायित्व है कि वह व्यक्ति में श्रम के प्रति

सम्मान का भाव जाग्रत करे। आदमी के पसीने से मोती पैदा होंगे, यह बात उन्हें अपने बचपन से ही समझ लेनी चाहिये।

4. आत्मनिर्भरता का बोध (**Awareness for Self-sufficiency**) - शिक्षित होकर भी व्यक्ति जब तक रोजगारहीन रहता है तथा अपने परिवार अथवा रिश्तेदारों पर आश्रित रहता है, उसमें हीन भावना घर किये रहती है। उसका आत्म-विश्वास डगमगा जाता है। अगर काफी दिनों तक वह बेरोजगार रहे तो उसकी स्थिति समाज में अत्यन्त दयनीय हो जाती है। लेकिन जब वह कोई काम पकड़कर उसे ऊँचा उठाने की दृष्टि से जी-तोड़ परिश्रम करता है, तो उसका आत्म-विश्वास जाग्रत हो जाता है। समाज में वह सम्मान पाने का अधिकारी बन जाता है। उसके आत्म-निर्भर होने से समाज को भी पूरा लाभ मिलता है।

5. देश की मुख्य धारा में सहभागी (**Participant in the main stream of country**) - रोजगार परक शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को समाज व देश की मुख्य धारा से जोड़ना है। कोई व्यक्ति जब सक्रिय रूप से अपनी और देश की मदद करता है तो वह स्वयं भी आत्म सन्तोषित होता है। वह धीरे-धीरे जान जाता है कि देश को किन-किन वस्तुओं की आवश्यकता है और किन वस्तुओं का देश से बाहर निर्यात किया जा सकता है। वह फिर उन्हीं वस्तुओं पर ध्यान केन्द्रित कर अपनी नवीन योजनायें बनाता है और इस प्रकार वह देश की मुख्य धारा से जुड़ता जाता है।

6. एक नये समाज की रचना (**Building of a New Society**) - रोजगार परक शिक्षा द्वारा व्यक्ति में यह बोध उत्पन्न हो जाता है कि वह समाज को कुछ करके दिखाये। इसलिये वह नवीन एवं मौलिक चिन्तन द्वारा समाज में परिवर्तन करने की सोचता है। व्यक्ति के सकारात्मक तथा सार्थक प्रयासों से समाज में ऐसे परिवर्तन होते जाते हैं जिनसे लोग नवीन वैज्ञानिक आविष्कारों से लाभ उठाते हैं। लोग आलस्य, असत्य, अकर्मण्यता आदि का त्याग करके जीवन व्यतीत करने की एक नई कल्पना करते हैं। उत्पादनशील शिक्षा का उद्देश्य पुरातन समाज की कुरीतियों और बुराइयों को मिटाकर एक नवीन समाजवादी संस्कृति को जन्म देना है जिसमें व्यक्ति को सुख और आनन्द की प्राप्ति हो।

7. मानवीय गुणों की सृष्टि (**Formation of Human Qualities**) - रोजगार परक शिक्षा से तात्पर्य केवल व्यवसाय नहीं है वरन् व्यक्ति में उद्यमशीलता, साहस, पहल करने की सामर्थ्य, नियोजन शक्ति, संगठनात्मक योग्यता, निर्बल की सहायता आदि गुणों का विकास भी है। उत्पादनशील शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को उसकी रूचि की कलाओं और व्यवसायों से परिचित कराके उसमें मानवीय गुणों का विकास करना भी है। जिससे वह अपने उद्यम और अपने गुणों से समाज का पूरा भला कर सके। एक स्वार्थी, लोभी, अकर्मण्य व्यक्ति अत्यधिक धनवान होने पर भी समाज का कोई भी मदद नहीं कर सकता। अतः व्यावसायिक योग्यता का महत्त्व समझाकर भी उत्पादनशील शिक्षा का व्यक्ति

में मानवीय गुणों के विकास पर बल देना होगा। उत्पादनशील शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में गुणों और कार्यों को समन्वय पर बल देना चाहिये।

14.5.1 रोजगार परक शिक्षा और शिक्षक (Employment Education and Teacher)

रोजगार परक शिक्षा प्रदान करने वाले शिक्षक का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रेरणाप्रद होना चाहिये। उसे सिद्धान्तों के ज्ञान के साथ-साथ उत्तम व्यावहारिक ज्ञान भी होना चाहिये। उसे कार्यशाला की उत्तम व्यवस्था करने में कुशल होना चाहिये। वह कर्मठ, परिश्रमी तथा तकनीकी ज्ञान से परिपूर्ण होना चाहिये। बालक उसके व्यक्तित्व और कार्य करने के ढंग से प्रभावित हो। उसे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और साहित्यिक दृष्टि से उन्नत होना चाहिये।

शिक्षक में इतनी सूझबूझ व योग्यता होनी चाहिये कि वह विद्यार्थियों को उचित व्यवसाय या कला के चयन में उचित निर्देशन दे सके। वह विद्यार्थियों का उचित और उत्तम मार्ग-दर्शन कर सके। विद्यार्थी उसकी सहायता से अपनी योग्यता व दक्षता के अनुकूल विषयों का चयन करें। वे जिस व्यवसाय का चयन करें, उसमें उनकी पूर्ण रूचि प्रदर्शित हो।

14.5.2 रोजगार परक शिक्षा और शिक्षक विधियाँ (Employment Education and Teaching method)

शिक्षण विधियाँ रोजगार परक शिक्षा के अनुरूप ही होनी चाहिये। विद्यार्थी को मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान देने से कोई लाभ नहीं। अतः उन्हें ऐसा ज्ञान दिया जाना चाहिये जिससे वे स्वयं कार्य करके सीखें अथवा स्वयं निरीक्षण एवं प्रयोग द्वारा सीखें। यह ज्ञान स्थायी होता है तथा इस प्रकार सीखने में वे अपनी कल्पनाओं का भी उपयोग कर सकते हैं।

शिक्षण-पद्धति के अन्तर्गत विविध शिल्पों को शिक्षण का केन्द्र बनाया जा सकता है। ऐसा होने से विद्यार्थी जहाँ किसी शिल्प अथवा उद्योग का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करेंगे वहाँ वे उसी शिल्प या उद्योग के सन्दर्भ में अन्य विषयों का भी ज्ञान प्राप्त करेंगे। इससे उन्हें ज्ञान की एकता का भी आभास होगा और वे शिल्प व उद्योग के संचालन में अन्य विषयों से समन्वय भी कर सकेंगे।

छात्रों को योजना पद्धति, बुनियादी शिक्षा पद्धति आदि पद्धतियों से उन्हें स्वयं कार्य करने का अवसर देना चाहिये। ध्यान इस बात का रखना चाहिये कि विद्यार्थी सामान्य विषयों का ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ किसी विशिष्ट शिल्प व उद्योग में भी रूचि लें। यही शिल्प व उद्योग आगे चलकर उनके जीविकोपार्जन का भी आधार बन सके।

अपनी उन्नति जानिये (Check your Progress)

प्रश्न 1 कुछ वर्ष पूर्व मानव संसाधन विकास मंत्रालय का क्या नाम था।

प्रश्न 2 मानव संसाधन विकास मंत्रालय विभिन्न व्यवसायों के लिये क्या प्रावधान करता हैघ्

प्रश्न 3 शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत शैक्षिक एवं राष्ट्रीय विकास सम्बन्धी क्या किया जाता है।

प्रश्न 4 रोजगार परक शिक्षा से आपका क्या तात्पर्य है

14.6 सारांश (Summary)

राष्ट्रीय विकास और शैक्षिक नियोजन परस्पर घनिष्ठ रूप से और राष्ट्रीय विकास के लिय पर्याप्त मानवीय शक्ति की व्यवसायिक करती है और राष्ट्रीय विकास के फलस्वरूप आर्थिक प्रगति होत है। जिससे शिक्षा पर आवश्यक धन-राशि व्यय करने में साहयता मिलती है। लेकिन यहाँ यह तथ्य स्मरणीय है कि शिक्षा का विस्तार और राष्ट्र का आर्थिक विकास सन्तुलित होना चाहिये, क्योंकि यदि आर्थिक विकास गति की अपेक्षा शैक्षिक विस्तार-गति अधिक हुई तो अनेक उच्च एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति बेरोजगार रहेंगे और यदि दूसरी ओर, शैक्षिक विस्तार-गति की अपेक्षा आर्थिक विकास गति तीव्र हुई तो देशा को उपयुक्त एवं पर्याप्त मात्रा में प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति उपलब्ध नहीं होंगे। इस प्रकार शैक्षिक नियोजन, राष्ट्रीय विकास नियोजन के सन्दर्भ में होना आवश्यक है। शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत मानव-विकास तथ मानव-शक्ति का उत्पादन, दोनों को सन्तुलित स्थान प्राप्त होता है।

स्पष्ट है कि आधुनिक युग में किसी भी देश के शैक्षिक विकास के लिये आवश्यक है कि वह उसकी सामाजिक, सांस्था आर्थिक आवश्यकताओं के हो। यह विकास वस्तुतः तभी सफल हो सकता है जब यह पूर्व नियोजन हो और शैक्षिक नियोजन द्वारा हो, तभी हम आवश्यक जनशक्ति (Necessary Manpower) का विकास कर सकते हैं।

14.7 शब्दावली (Vocauolary)

प्राथमिकता-क्रम स्थापित करना (**Establishing order of priority**) - शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत शैक्षिक उद्देश्यों तथा उपलब्ध आर्थिक एवं मानवीय साधनों के आधार पर शिक्षा के विभिन्न स्तरों एवं अंगों के विस्तार और आवश्यक परिवर्तनों का प्रावधान करना पड़ता है। शैक्षिक नियोजन के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि शैक्षिक विस्तार तथा गुणात्मक उन्नति के कई विकल्पों के मध्य तथा विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में प्राथमिकता-क्रम स्थापित करें।

विकल्पों का निर्धारण (**Decisions regarding various Options**) - शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत विकल्पों में से चयन करना आवश्यक होता है। विभिन्न समस्याओं के विकल्प इस प्रकार हो सकते हैं - शिक्षा के मात्रात्मक विस्तार को अधिक महत्त्व दिया जाये अथवा गुणात्मक स्तर को, कला-सम्बन्धी विषयों को प्रधानता दी जाये या विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा को, राष्ट्रीय आय का कितना-

कितना भाग शिक्षा की विभिन्न शाखाओं एवं स्तरों पर व्यय करना उचित है, प्रति वर्ष कितने शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिये, आदि।

14.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर(Answer of Practices Question)

उत्तर 1 कुछ वर्ष पूर्व मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम शिक्षा मंत्रालय था। उत्तर 2 मानव संसाधन विकास मंत्रालय विभिन्न व्यवसायों के लिये विभिन्न स्तर और विभिन्न प्रकार की शिक्षा का प्रावधान करना।

उत्तर 3 शैक्षिक नियोजन के अन्तर्गत शैक्षिक एवं राष्ट्रीय विकास सम्बन्धी उद्देश्यों के मध्य सामंजस्य स्थापित किया जाता है।

उत्तर 4 रोजगार परक शिक्षा से तात्पर्य केवल व्यवसाय नहीं है वरन् व्यक्ति में उद्यमशीलता, साहस, पहल करने की सामर्थ्य, नियोजन शक्ति, संगठनात्मक योग्यता, निर्बल की सहायता आदि गुणों का विकास भी है।

14.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (BIBLIOGRAPHY)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।

6. शर्मा, रामनाथ व शर्मा राजेन्द्रकुमार (2006) एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

7. महावीर विश्वविधालय कोटा " पाठ्यक्रम विकास" ।

14.10 सहायक/उपयोगी पुस्तकें (Useful Books)

1. पाण्डे (डॉ) रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।

2. सक्सेना (डॉ) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3. मित्तल एम.एल.(2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेंरठ।

4. शर्मा रामनाथ व शर्मा राजेन्द्र कुमार (2006) शैक्षिक समाजशास्त्र, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड

डिस्ट्रीब्यूटर्स।

5. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन, नई

दिल्ली।

14.11 लघु उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Question)

1. मानव संसाधन विकास से आप क्या समझते हैं ? विवेचना कीजिये।

   What do you mean by Human Recource Development ? Dicsuss.

2. पूँजी-निवेश के रूप में शिक्षा का क्या तात्पर्य ? यह प्रत्यय हमारे शैक्षिक उद्देश्यों को किस प्रकार परिवर्तित कर सकता है ?

   What is meant by education as an Insestment ? How can this concept change our educational aims ?

3. रोजगार परक शिक्षा से आप क्या समझते हैं ? इसकी आवश्यकता एवं महत्त्व पर प्रकाश डालिये।

   What do you mean by Production Oriented Education ? Throw light on its need and significance.

4. रोजगार परक शिक्षा के क्या उद्देश्य होने चाहिये ? विवेचना कीजिये।

   What should be the aims of Production Oriented Education ? Dicsuss.

5. जनशक्ति-नियोजन क्या है ? जनशक्ति-नियोजन की सीमाओं की विवेचना कीजिये।

   What is meant by Manpower Planning ? Discuss the limitations of Manpower Planning.

6. शैक्षिक नियोजन की क्या आवश्यकता है ? इसके क्या सिद्धान्त हैं ?

   What is the need of Educational Planning ? What are its principles?

Unit 15 राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की संरचना ; 5+3+3+4 (Structure of National education system; 5+3+3+4)

15.1 प्रस्तावना (Introduction)

15.2 उद्देश्य (Aims)

15.3 राष्ट्रीय स्कूली शिक्षा; 5+3+3+4 (National Education, 5+3+3+4)

15.4 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020)'की विशेषताए (characteristics of National education Policy 2020)

15.5 पुनर्गठित स्कूली शिक्षा ढांचा (Redesigned framework of school education)

15.5.1 स्कूली शिक्षा ढांचे 5+3+3+4 के आधार सिद्धांत

अपनी प्रगति जानिये (Check your progress)

15.6 राष्ट्रीय शिक्षा के घ□क (Components of National education)

15.6.1 बुनियादी स्तर (Foundational level)

15.6.2 प्राइमरी स्तर (Primary level)

15.6.3 मिडिल स्तर (Middle level)

15.6.4 माध्यमिक स्तर (Secondary level)

अपनी प्रगति जानिये (Check your progress)

15.7 स्कूली शिक्षा की पुर्नसंरचना की आवश्यकता (Need of redesigning school education system)

15.8 स्कूली शिक्षा की पुर्नगठन की उपादेयता (Relevance of redesigning school education)

15.9 सारांश (Summary)

15.10 प्रयुक्त संकेताक्षरों की सूची

अभ्यास प्रश्नो के उत्तर (Answer of practice questions)

15.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References)

15.12 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long answer type questions)

15.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारत द्वारा 2015 में अपनाए गए सतत विकास एजेंडा, 2030 के लक्ष्य 4, (एसडीजी 4) में परिलक्षित वैश्विक शिक्षा विकास एजेंडा के अनुसार विश्व में 2030, तक 'सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवन-पर्यन्त शिक्षा के अवसरों को बढावा दिये जाने का लक्ष्य है'। ज्ञान के परिदृश्य में पूरा विश्व तेजी से परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। बिग डेटा, मशीन लर्निंग और आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस (artificial intelligence),जैसे क्षेत्रो में हो रहे बहुत से वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के चलते विश्व भर में अकुशल कामगारों की जगह मशीनें काम करने लगी है और डेटा साइंस, कंप्यूटर साइंस (computer science) और गणित (mathematics), के क्षेत्र में ऐसे कुशल मानव संसाधनों की आवश्यकता है, जो विज्ञान (science), समाज विज्ञान (social science) और मानविकी (humanities) के विविध विषयों में योग्यता रखते हों। जलवायु परिवर्तन, बढते प्रदूषण और घटते प्राकृतिक संसाधनों की वजह से हमें ऊर्जा भोजन, पानी, स्वच्छता आवास की आवश्यकताओं को पूरा करने के नये रास्ते खोजने होंगे, अतः जीव विज्ञान (biology), रसायन विज्ञान (chemistry), भौतिक विज्ञान (physics),कृषि(agriculture), जलवायु विज्ञान (environmental sciences) और समाज विज्ञान (social sciences) के क्षेत्र में विशेष रूप से पाठ्य वस्तु एवं शिक्षण शास्त्र मे परिवर्तन आवश्यक है |बदलते हुए प्राकृतिक एवं सामाजिक परिपेक्ष्य मे बहुविषयक (multidisciplinary), अधिगम की आवश्यकता अधिक प्रासंगिक है| (एनईपी,2020)

शिक्षा समाज की वह महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो व्यक्ति एवं समाज को अनेक प्रकार से प्रभावित करती है | शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है जो देश, काल और परिस्तिथि के अनुसार प्रगति के नये आयामों से संबंध स्थापित करती है | राष्ट्र का अस्तित्व उसके नागरिकों के व्यक्तित्व से परिलक्षित होता है | कोई राष्ट्र कितना समुन्नत एवं प्रगतिशील है इस बात पर निर्भर करता है कि वह राष्ट्र शैक्षिक परिवेश के कितने सन्निकट है | शैक्षिक तंत्र जितना सुदृढ़ एवं वेज्ञानिक उपागम पर आधारित होगा ,लक्ष्यों की प्राप्ति उतनी ही आसानी से होगी |अतः राष्ट्रीय शैक्षिक प्रणालियों मे सतत परिवर्तन (change) , परिमार्जन (modification) , और संशोधन (correction) की आवश्यकता होती है |

वर्तमान में 3 से 6 वर्ष की उम्र के बच्चे '10 + 2' वाले ढांचे में शामिल नहीं हैं| क्योकि 6 वर्ष के बच्चों को कक्षा 1 में प्रवेश दिया जाता है। स्कूली शिक्षा के '5+3+3+4' ढांचे में, 3 वर्ष के बच्चों को शामिल कर प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा को शामिल किया गया है| जिससे आगे चलकर बच्चों के व्यक्तित्व का विकास बेहतर हो, वे बेहतर उपलब्धियां हासिल कर सकें और समाज के विकास मे सकारात्मक भूमिका निभा सके तथा सतत विकास की अवधारणा को आत्मसात कर सके|

15.2 उद्देश्य (aims of school education)

इस इकाई का अध्यनन करने के बाद शिक्षार्थी

- ✓ राष्ट्रीय स्कूली शिक्षा प्रणाली के प्रत्यय को समझ सकेंगे ,
- ✓ राष्ट्रीय स्कूली शिक्षा प्रणाली को परिभाषित कर सकेंगे ,
- ✓ राष्ट्रीय स्कूली शिक्षा पद्धति की अवधारणा को आत्मसात कर सकेंगे ,
- ✓ 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' की स्कूली शिक्षा की अनुसंशाओ से परिचित हो सकेगे ,
- ✓ 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' के '5 +3 +3+4' की पद्धति की प्रासंगिकता को समझ सकेंगे |

15.3 राष्ट्रीय स्कूली शिक्षा

हमारा समाज जिन असंख्य घटको से बना है, उनमे शिक्षा सर्वोपरि है| समाज और शिक्षा एक दूसरे को सर्वाधिक प्रभावित करते है | किसी भी राष्ट्र के निर्माण मे वहाँ के समाज की अहं भूमिका होती है| और सशक्त समाज का निर्माण उद्देश्यपूर्ण एवं समयानुरूप शिक्षा व्यवस्था से ही संभव है | समय-समय पर सामाजिक (social),आर्थिक(economic), एवं राजनैतिक (Political) परिवेश मे परिवर्तन को देखते हुए शिक्षा प्रणाली मे परिवर्तन की आवश्यकता होती है| राष्ट्र की विकास के लिए इस प्रकार की शिक्षा व्ययस्था की आवश्यकता है, जो न्यायसंगत एवं न्यायपूर्ण समाज की प्रगति एवं राष्ट्र के विकास के लिए प्रतिबद्ध हो |इस प्रकार की शिक्षा ,जो

- ✓ समस्या समाधान(problem solving) तथा
- ✓ तार्किक एवं रचनात्मक सोच (logical and creative thinking),
- ✓ विविध विषयों के बीच अंतर संबंधों(inter relationship)

की समझ विकसित करे बदलती दशाओ के अनुसार खुद को ढालने की क्षमता विकसित करे| यह इक्कसवी शताब्दी की पहली शिक्षा नीति है, जिसका लक्ष्य राष्ट्र के विकास के लिए अनिवार्य

आवश्यकताओ को पूरा करना है| स्कूली शिक्षा के प्राथमिक लक्ष्यों मे, यह सुनिश्चित करना है कि बच्चो का स्कूल मे नामांकन हो और वह नियमित रूप से विद्यालय आये, '|सर्व शिक्षा अभियान' (अब समग्र शिक्षा) और 'शिक्षा का अधिकार अधिनियम' के माध्यम से हमारे देश ने प्राथमिक शिक्षा मे लगभग सभी बच्चो के नामांकन करने मे उल्लेखनीय प्रगति की है | स्कूल मे सभी बच्चो की सहभागिता सुनिश्चित हो इसके के लिए सभी बच्चो की ट्रेकिंग करनी होगी ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे -

- ❖ स्कूल मे दाखिला ले रहे है और उपस्थित हो रहे है |
- ❖ ड्रॉप आउट (drop out) \बच्चो के विधालय वापस आने और यदि, पीछे रह गए है तो उन्हे मुख्य धारा से जोड़ने के लिए पर्याप्त सुविधाए उपलब्ध हो |

'फाउंडेशनल स्तर (foundational level)' से लेकर 'कक्षा 12' तक कि 'स्कूली शिक्षा' के माध्यम से सभी बच्चो को, 'समान गुणवत्ता वाली शिक्षा' प्रदान करने कि पर्याप्त सुविधाए उपलब्ध कराना आवश्यक है | विधालयों का अवसंरचनात्मक ढ़ाचा एवं बच्चो कि भागीदारी सुनिश्चित करने के साथ ही गुणवत्ता के लिए बच्चो को कक्षा से जोड़े रखना महत्वपूर्ण कार्य है |

15.4 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020)'की विशेषताए (characteristics of 'National education Policy 2020')

यह 21वीं शताब्दी की पहली शिक्षा नीति है, जिसका लक्ष्य बच्चों के अंदर इक्कसवी सदी के कौशलों का विकास के साथ ही हमारे देश के विकास के लिये अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करना हैI यह नीति भारत की समृद्ध परंपरा (rich tradition) और सांस्कृतिक मूल्यों(cultural values) के आधार को बरक़रार रखते हए, 21वीं सदी की शिक्षा के लिये आकांक्षात्मक लक्ष्यों, जिनमें एसडीजी 4 (SDG4) शामिल हैं, के संयोजन में शिक्षा व्यवस्था, उसके नियमन और गवनेंस (regulation and governance) सहित, सभी पक्षों के सुधार और पुनर्गठन की अनिवार्य आवश्यकता पर ज़ोर देती है|

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 प्रत्येक व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमताओं के विकास पर केंद्रित है। यह नीति इस सिद्धांत पर आधारित है कि शिक्षा से न केवल 'साक्षरता और संख्याज्ञान' (literacy and numeracy) जैसी 'बुनियादी क्षमताओं' का विकास तक सीमित रहे, अपितु छात्रों की तार्किक (logical) और समस्या समाधान (problem solving) की क्षमताओं के विकास के साथ ही नैतिक(moral), सामाजिक (social) और भावनात्मक (emotional) स्तर पर भी विकास में सहायक हो | प्राचीन और भारतीय ज्ञान और विचार परंपरा के आलोक में यह नीति तैयार की गयी है। ज्ञान, प्रज्ञा और सत्य की खोज को भारतीय विचार परंपरा और दर्शन में सदा

सर्वोच्च मानवीय लक्ष्य माना जाता था। प्राचीन भारत में शिक्षा का लक्ष्य सांसारिक जीवन अथवा स्कूल के बाद के जीवन की तैयारी के रूप में ज्ञान अर्जित नहीं बल्कि पूर्ण आत्मज्ञान और मुक्ति के - रूप में माना गया था।(एनईपी, 2020)

शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है| मनुष्य यद्यपि कुछ शक्तियां लेकर पैदा होता है तथापि इन शक्तियों का विकास सामाजिक पर्यावरण मे सामाजिक अंतःक्रिया (social interaction) द्वारा ही संभव होता है | प्रत्येक समाज अपने अनुरूप ही शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण करता है| शिक्षा के उद्देश्य ,पाठ्यक्रम आदि भी सामाजिक आवश्यकताओ के अनुरूप परिवर्तित हो जाते है | राष्ट्र का अस्तित्व उसके नागरिकों के व्यक्तित्व मे परिलक्षित होता है| शिक्षा ही वह अभिकरण है जो मानव को सृष्टि का अप्रतिम प्राणी बनाये रखने मे सहायक होता है |

शैक्षिक प्रणाली का उद्देश्य अच्छे इंसानो का विकास करना है, जो तर्कसंगत विचार एवं कार्य करने मे सक्षम हो ;जिसमें

- करुणा एवं सहानुभूति (kindness and empathy) ,
- साहस एवं लचीलापन (courage and flexibility)
- वैज्ञानिक चिंतन एवं कल्पनाशक्ति (scientific thinking &imagination) तथा
- नैतिक मूल्य एवं चरित्र (moral values &character) हो|
  शिक्षा का उद्देश्य ऐसे लोग तैयार करना है, जो समावेशी (inclusive) एवं बहुलतावादी (pluralistic) समाज के निर्माण में सहयोग कर सके| *शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण अथवा लक्ष्य आधारित प्रक्रिया है|(Education is a purposeful or goal oriented process)*|

15.5 पुनर्गठित स्कूली शिक्षा ढांचे (Redesigned framework of school education)

बच्चों के मस्तिष्क का '85 प्रतिशत' विकास '6 वर्ष' की अवस्था तक पूर्ण हो जाता है। बच्चों के मस्तिष्क के उचित विकास और शारीरिक बृद्धि को सुनिश्चित करने के लिये उसके आरंभिक 6 वषों को महत्वपूर्ण माना जाता है। वर्तमान समय में, विशेष रूप से सामाजिक आर्थिक (socio economic) रूप से वंचित पृष्ठभूमि के करोडों बच्चों के लिये, गुणवत्तापूर्ण आरंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा उपलब्ध नहीं है| इसलिए ईसीसीई(ECCE) में निवेश करने से इसकी पहुँच देश के सभी बच्चों तक हो सकती है| जिससे सभी बच्चों को शैक्षिक प्रणाली में भाग लेने और तरक्की करने के समान अवसर मिल सकेंगे। ईसीसीई संभवतया, समता (equity) ,स्थापित करने में सबसे शक्तिशाली माध्यम हो सकता है। प्रारंभिक बाल्यावस्था विकास, देखभाल के लिये गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के सार्वभोमिक प्रावधान को, निश्चय ही 2030 से पूर्व, उपलब्ध किया जाना

आवश्यक है | ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि पहली कक्षा में प्रवेश पाने वाले सभी बच्चे स्कूली शिक्षा के लिये पूरी तरह से तैयार हों। (स्रोत 1.1 NEP)

अपनी भाषा (language) ,संस्कृति (culture) एवं परंपराए (traditions) मानव को विकसित करती है| शैक्षिक (educational) ,सामाजिक (social) एवं तकनीकी (technological) प्रगति मे इनका बहुत बड़ा योगदान होता है|अतः शिक्षण प्रक्रिया मे भाषा ,संस्कृति ,परम्पराओ को शामिल किया जाना अत्यंत महत्वपूर्ण है |'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020',स्कूली शिक्षा मे भारतीय ज्ञान प्रणाली को ज्ञान एवं सीखने के स्वदेशी एवं पारंपरिक तरीको को अपनाकर -

- ✓ गणित (mathematics),
- ✓ खगोल विज्ञान (astrology) ,
- ✓ दर्शन (philosophy) ,
- ✓ योग (yoga),
- ✓ वास्तुकला (sculptures),
- ✓ कृषि (agriculture) ,
- ✓ भाषा विज्ञान (linguistic)

अधिक रुचिकर ,सहज तरीको से शिक्षण पर ज़ोर देती है |

जब बच्चे कुपोषित या अस्वस्थ होते हैं तो वे बेहतर रूप से सीखने में असमर्थ हो जाते हैं। इसलिए, बच्चों के पोषण और स्वास्थ्य (मानसिक स्वास्थ्य तथा शारीरिक) दिया जाना आवश्यक है|पुष्टिकर भोजन(nutritious food) और अच्छी तरह से प्रशिक्षित (well trained) शिक्षक,सामाजिक कार्यकर्ता, काउंसलर और समुदाय की भागीदारी के सतत उपायों के माध्यम से उद्देश्यों की प्राप्ति संभव है । सभी विधालय के बच्चो के लिये स्कूलों द्वारा नियमित स्वास्थ्य जांच कराना आवश्यक है| शोध अध्ययन से यह पता चलता है कि सुबह के पौष्टिक नाश्ते के बाद के कुछ घंटों में कई सारे मुश्किल विषयों का अध्ययन अधिक प्रभावी होता है, इस उत्पादक और प्रभावी समय का लाभ उठाया जा सकता है, यदि सुबह और दोपहर में बच्चों को क्रमशः पोष्टिक नाश्ता और भोजन दिया जाए तथा जहाँ पके हुये गर्म भोजन की व्यवस्था करना संभव नहीं है, वहाँ सादा लेकिन पोष्टिक विकल्प, जैसे गुड के साथ मूंगफली/मिश्रित चना ,स्थानीय स्तर पर उपलब्ध फल दिये जा सकते है। सभी स्कूली बच्चो को विशेष रूप से 100% टीकाकरण के लिये स्कूलों मे नियमित जांच कराया जाना महत्वपूर्ण है ।(स्रोत 2.9 NEP)

बच्चो को प्रारम्भिक वर्षो से ही *'सही को करने'* के महत्व को सिखाना, साथ ही नैतिक निर्णय लेने की क्षमता(capacity of decision making) का विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है|साथ ही -

- ❖ स्वच्छता (cleanliness),
- ❖ लेंगिक संवेदनशीलता(gender sensitivity) ,
- ❖ पर्यावरण के प्रति जागरूकता(awareness towards environment)

बाल्यावस्था से ही सीखने पर जीवन भर व्यक्ति के व्यक्तित्व पर दृष्टिगोचर होते है |बाल्यावस्था(childhood) मे सीखी गयी बाते मानव के व्यवहार का अभिन्न अंग बन जाती है |स्कूली पाठ्यक्रम को रटंत प्रणाली से हटकर , रचनावादी तरीको द्वारा सीखने सीखाने हेतु पाठ्यक्रम मे आवश्यक सुधार किए जा रहे है |

स्कूली शिक्षा का यह ढांचा इस दिशा में बढ़ने का महत्वपूर्ण प्रयास है | शिक्षा की पिछली नीतियों का मुख्य उद्देश्य 'पहुंच (access)' पर केंद्रित था | '1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति', जिसे '1992 (एनपीई 1986/92') में संशोधित किया गया था, को 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986' के अधूरे कामो का पूर्ण करने का प्रयास किया गया | तथा 'निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा अधिनियम 2009', स्कूली शिक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण कदम रहा है |

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' 'पुरानी शिक्षा '10 +2' वाली स्कूली व्यवस्था को, 3 से 18 वर्ष तक के सभी बच्चो के लिए पाठ्यचर्या और '5 +3 +3 +4' की नयी व्यवस्था मे पुनर्गठित करती है |

- **बुनियादी स्तर (Foundational level)** – प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा सीखने की नींव :जिसमें 3 -6 वर्ष के बच्चो के लिए आंगनबाड़ी /बालवाटिका जिसे ईसीसीई (ECCE) कहा जाता है,तथा 6 -8 वर्ष (कक्षा 1और 2) प्रिपरेटरी स्तर(preparatory level) शामिल है|
- **प्राइमरी स्तर(primary level)** 8 -11वर्ष (कक्षा 3-5) शिक्षण का माध्यम मुख्य रूप से मातृभाषा एवं क्षेत्रीय भाषा को प्रोत्साहन दिया जायेगा |
- **मीडिल स्तर (Middle level)** 11 -14 वर्ष (कक्षा 6-8)
- **माध्यमिक स्तर (secondary level)** 14 -18 वर्ष (कक्षा 9 -12)

निर्धारित किये गये हैं |

'एनसीइआरटी (NCERT)'द्वारा तैयार 'एनसीएफएसई (NCFSE)'आधारित पाठ्यपुस्तक तथा पाठ्यक्रम को राष्ट्रीय रूप से स्वीकार्य मानदंड के रूप मे लेना स्कूली शिक्षा मे समानता एवं एकरूपता के लिये उपयोगी है |सभी क्षेत्रीय भाषाओ मे ऐसी पाठ्य पुस्तके उपलब्ध होंगी |

एनसीएफएसई (NCFSE)2023, केअनुसार स्कूली शिक्षा के निर्धारित पाठ्यचर्या क्षेत्र है-

- भाषा(languages)
- गणित(mathematics)
- विज्ञान(science)
- सामाजिक विज्ञान(social science)
- कला(arts)
- अंतरविषयक क्षेत्र(interdisciplinary areas)
- शारीरिक शिक्षा(physical education)
- व्यसायिक शिक्षा(vocational education)

15.5.1 स्कूली शिक्षा ढांचे 5+3+3+4 के आधार सिद्धांत

- शिक्षकों एवं अभिभावकों को बच्चो की विशिष्ट क्षमताओं की प्रति संवेदनशील बनाना ,
- बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान ;जैसे सीखने के मूलभूत कौशलों को सर्वाधिक ज़ोर देना;
- स्कूली शिक्षा में लचीलापन (Flexibility)जिससे शिक्षार्थियो को उनके सीखने के तोर तरीकों और रूचि के अनुसार कार्यक्रमों को चुनने के अवसर उपलब्ध कराना|
- प्रयोग आधारित अधिगम (experiment based learning) प्रक्रियायों का अधिकतम उपयोग ,
- कला एवं खेल के समन्वय (integration of arts and games) से कक्षा- कक्ष शिक्षण सुनिश्चित करना
- कहानी आधारित शिक्षणशास्त्र (story based pedagogy)को एक मानक शिक्षण शास्त्र के रूप अपनाना
- दक्षता आधारित अधिगम (skill based learning) एवं शिक्षा को बढ़ावा देना
- शिक्षण मे कला एवं संस्कृति के अवयवों का उपयोग

- कक्षा के अंतर्गत खेल समन्वय अधिगम का उपयोग

अपनी प्रगति जानिए

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1.'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' के अनुसार स्कूली शिक्षा संरचना है?

A. 10+2
B. 5+3+3+4
C. 3+2+3+4
D. 5+3+2+2

2. सीखने के मूलभूत कौशल है?

A. बुनियादी साक्षरता(Foundational literacy)
B. संख्या ज्ञान(numeracy)
C. दोनों(both)
D. इनमे से कोई नहीं(none of these)

3. 'रचनावादी' शिक्षण बढ़ावा नहीं देता है?

A. रटंत प्रणाली (rote memory system)
B. तार्किक चिंतन (logical thinking)
C. विश्लेषण क्षमता (analytical ability)
D. अवधारणात्मक स्पष्टता (conceptual clarity)

15.6 स्कूली शिक्षा के घटक (Components of school education)

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' के अनुसार स्कूली शिक्षा के नया ढांचा '5+3+3+4' है| जिसमे 5 वर्ष की बुनियादी शिक्षा, 3 वर्ष प्राथमिक शिक्षा, 3 वर्ष मिडिल स्तर तथा 4 वर्ष माध्यमिक स्तर की शिक्षा निर्धारित की गयी है | इस नीति का ध्येय भारतीय मूल्यों से पूर्ण शिक्षा का विकास करना है| छात्रों में व्यवहार बुद्धि एवं कार्यो से भारतीय होने पर गर्व की भावना का विकास करना है| नया

शैक्षणिक एवं पाठ्यक्रम ढांचे इस प्रकार है

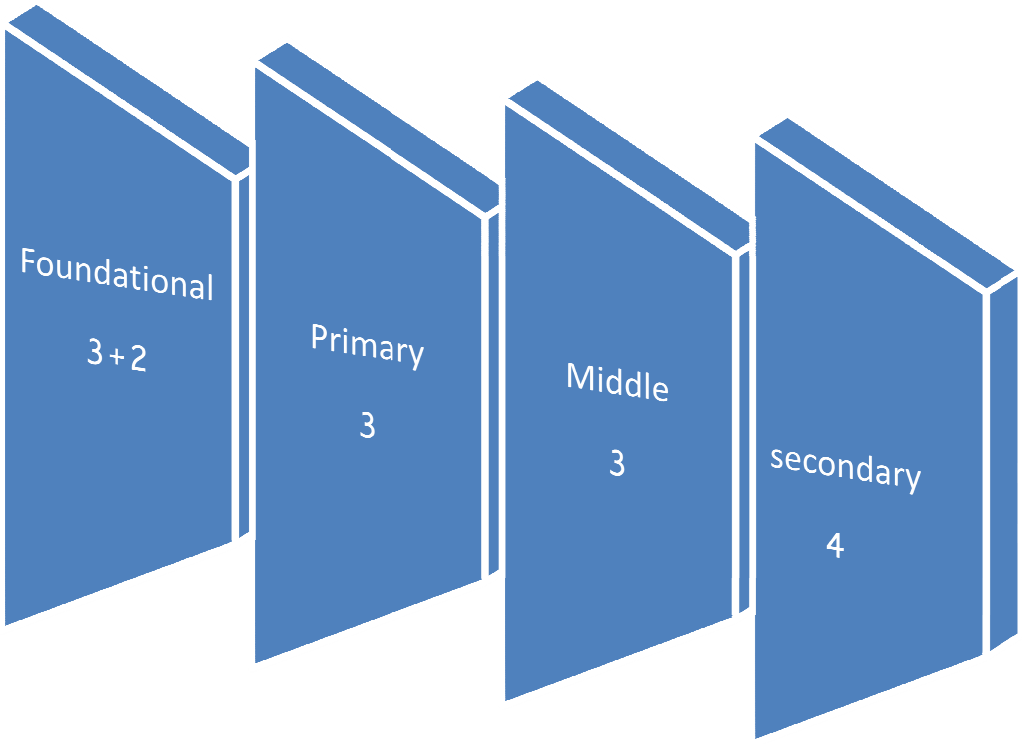

15.6.1 बुनियादी स्तर (foundational education)

बच्चे के मस्तिष्क एवं शारीरिक विकास के लिए उसके प्रारंभिक 6 वर्ष अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं |जिसका प्रभाव व्यक्तित्व पर जीवन भर रहता है| कुपोषित एवं अस्वस्थ बच्चे बेहतर तरीके से सीखने मे पीछे रह जाते है| अतः बच्चों के पोषण एवं शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान देना अति आवश्यक है |स्कूली शिक्षा प्रणाली मे समुदाय की भागीदारी अत्यंत महत्वपूर्ण है| वर्तमान समय में सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछडे वर्ग के बहुसंख्य बच्चो को गुणवत्तापूर्ण 'प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल एवं उचित शिक्षा' उपलब्ध नहीं है| प्रारंभिक बाल्यावस्था विकास एवं देखभाल के लिए उचित गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का सार्वभौमिक प्रावधान इसलिये भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह पहली कक्षा में प्रवेश करने वाले प्रत्येक बच्चे को स्कूली शिक्षा के लिए तैयारी सुनिश्चित करती है |

प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा, सीखने की नीव है|जो ईसीसीई (early childhood care and education)मॉडल पर आधारित है |यह शिक्षा मुख्य रूप खेल ,गतिविधि ,खोज आधारित होनी आवश्यक है |खेल जैसे स्थानीय खेल शिक्षण प्रक्रिया मे शामिल किया जाना

उपयोगी है| गतिविधियों मे स्थानीय कला ,शिल्प ,स्थानीय संगीत आदि को शिक्षण मे शामिल करने से बच्चो की नेसर्गिक क्षमताओ का विकास तेजी से होता है |तथा एक अपनत्व की भावना के साथ सहज रूप से सीखने के वातावरण का विकास होता है |साथ ही बच्चो को सामाजिक कार्य ,मानवीय संवेदना,अच्छा व्यवहार,शिष्टाचार ,व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक स्वच्छता की भावना का विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है |स्थानीय परम्पराओ जिसमे कला,कहानिया ,कविता ,खेल गीत को मुख्य रूप से शामिल किया जाना आवश्यक है | फाउंडेशनल स्टेज दो भागो मे अर्थात आंगनवाड़ी /प्री स्कूल के 3 साल तथा प्राथमिक स्कूल के कक्षा 1 और 2 के दो वर्ष निर्धारित है |शिक्षण का माध्यम मातृभाषा या स्थानीय स्तर पर बोली जाने वाली भाषा ही होगा |

15.6.2 प्रिपरे□ी स्तर (Preparatory level)

प्रिपरेटरी स्टेज 3 वर्ष की होगी जो फाउंडेशनल स्टेज की खेल,खोज एवं गतिविधि आधारित शिक्षणशास्त्रीय शेली से आगे बढ़ेगी साथ ही सामान्य पाठ्यपुस्तक आधारित शिक्षण को शामिल किया जायेगा और इस प्रकार ज्यादा ओपचारिक ,संवादात्मक शैली की माध्यम से किया जायेगा |अध्ययन अध्यापन मे पढ़ने ,लिखने ,बोलने ,शारीरिक शिक्षा ,कला,भाषा ,विज्ञान और गणित शामिल होंगे |संवादात्मक शैली के माध्यम से अध्यनन अध्यापन किया जाना है | 8से11वर्ष के बच्चो के लिए प्रिपरेटरी स्तर की व्यवस्था की गयी है|कक्षा 3 से 5 तक बच्चो के लिए विषयों के पाठ्यक्रम मे स्थानीय परम्पराओ को शामिल किया जाना है ;जिससे बच्चे अपने परिवेश के साथ अनुकूलन के साथ साथ जीवन की तैयारी के लिए व्यावहारिक अनुभवो से परिचित हो सकेंगे |जैसे- होली का त्योहार के माध्यम से ,मौसम परिवर्तन के साथ ही जीवन मे आ रहे उतार चढ़ाव को कैसे समूहिक रूप से मिलकर उत्साहपूर्वक स्वीकार कर सकते है ,बहुत ही सरल एवं सहज तरीके से बच्चो को सिखाया जा सकता है | सभी बच्चो के लिए मूलभूत साक्षरता एवं संख्या ज्ञान को प्राप्त करना आवश्यक है |वर्तमान मे प्राथमिक विध्यालयों मे अध्यनरत 5 करोड़ बच्चों को बुनियादी साक्षारता एवं संख्या ज्ञान नहीं है |जिससे बच्चे सामान्य लेख को पढ़ने,समझने औरअंको के साथ जोड़ने घटाने की बुनियादी क्षमता के अभाव के वांछित स्तर तक नहीं पहुच पाते है|

मूल्यांकन/आंकलन के लिये बच्चो के क्रियाकलापो का अवलोकन,लघु लिखित मूल्याँकन,वर्क शीट्स,रचनात्मक (formative)और योगात्मक (summative) तरीक़ो से किया जायेगा|

15.6.3 मिडिल स्तर (Middle level)

अनुभव आधारित अधिगम के अंतर्गत कला समन्वित शिक्षण को कक्षा प्रक्रियाओ मे शामिल किया जायेगा| ज्यादा आनंदमय(Joyful) ,भारतीय कला एवं संस्कृति से पोषित शिक्षण प्रत्येक स्तर पर किया जायेगा| कक्षा 6 से कक्षा 8 तक बच्चो के लिये मिडिल स्तर निर्धारित किया गया है | मिडिल स्टेज (middle stage), 3 वर्ष की होगी जिसमे विषय विशेषज्ञों द्वारा विषय की अमूर्त

धारणाओ पर आधारित शिक्षण आवश्यक है| यहा पाठ्यचर्या क्षेत्रो का विस्तार किया जायेगा,जिसमे मुख्य रूप से विज्ञान –प्राकृतिक एंव सामाजिक विज्ञान के साथ ही व्यावसिक शिक्षा को पाठ्यचर्या में शामिल किया जायेगा|उच्चतर गुणवत्तावाली गणित एवं विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों का अनिवार्य रुप से शिक्षण सुनिश्चित करना स्कूली शिक्षा की नई व्यवस्था का अभिन्न अंग है|विज्ञान,गणित,कला,खेल ,सामाजिक विज्ञान ,मानविकी,व्यवसायिक विषय मुख्य रुप से पढ़ाये जाने है|

मूल्यांकन /आंकलन ज्यादा रचनात्मक एवं मुखर (explicit)तरीको से किया जायेगा |आंकलन का केंद्र तथ्यो के पुर्नस्मरण के बजाय तथ्यो की समझ (understanding)पर आधारित होगा |परीक्षाओ का उद्देश्य विश्लेषण एवं संशलेषण क्षमताओ का मूल्यांकन करना है |

15.6.4 माध्यमिक स्तर (secondary level)

कक्षा 9,10,11,12 इसमे शामिल होंगी |जो मिडिल स्तर के सघन (in-depth)अध्ययन,समालोचनात्मक चिंतन (critical thinking),जीवन आकांक्षाओ की ओर अधिक ध्यान ,लचीलापन, विध्यार्थियों की विषय के प्रति रुचि पर आधारित बहुविषयक (multidisciplinary)पाठ्यचर्या पर आधारित होगी |

विध्यार्थियों को अपने व्यक्तिगत रुचि के अनुसार विषय चुनने के विकल्प उपलब्ध होंगे| अनुभव आधारित अधिगम के अंतर्गत कला समन्वित शिक्षण को कक्षा प्रक्रियाओ मे शामिल किया जायेगा | ज्यादा आनंदमय ,भारतीय कला एवं संस्कृति से पोषित शिक्षण प्रत्येक स्तर पर किया जायेगा| प्रायोगिक शिक्षण का प्रत्येक विषय पर अधिकाधिक उपयोग किया जायेगा |स्थानीय संदर्भ की विविधता एवं स्थानीय परिवेश मे विशेष ज़ोर दिया जायेगा |कला और विज्ञान के बीच ,पाठ्यक्रम एवं पाठ्येत्तर गतिविधियो के बीच स्पष्ट अलगाव न हो |जीवन कौशल जैसे ;

- आपसी संवाद ,
- सहयोग,
- सामूहिक कार्य
- लचीलापन

के विकास पर विशेष ध्यान दिया जायेगा|अध्यनन-अध्यापन ,शैक्षिक नियोजन एवं प्रबन्धन मे यथासंभव तकनीकी का उपयोग किया जाना आवश्यक है| शिक्षा का उद्देश्य केवल संज्ञानात्मक समझ न होकर चरित्र निर्माण और जीवन कौशलों से सुसज्जित करना है |सेकेण्डरी स्टेज मे चार साल के बहुविषयक अध्ययन शामिल होंगे जो विषय उन्मुख शिक्षण शास्त्रीय शैली पर आधारित

होंगे लेकिन अधिक गहराई ,आलोचनात्मक सोच ,जीवन आकांक्षाओ पर अधिक ध्यान ,विषयों के चुनाव को लेकर अधिक लचीलेपन के साथ होंगे |

कक्षा 9 और 10 के लिये प्रारूप

*To complete Grade 10, students will complete two Essential Courses from each of the eight Curricular Areas available i.e., a total of 16 Essential Courses across two years of Grade 9 and 10. These either Curricular Areas – Humanities (that includes languages), Mathematics & Computing, Vocational Education, Physical Education, Arts, Social Science, Science, and Inter-disciplinary Areas gives the necessary breadth of understanding and capacities for the students. Grades 9 and 10 will follow an annual structure (*source-NCFSE2.4.4.1)

कक्षा 11 और 12 के लिये प्रारूप

The same set of eight Curricular Areas will continue to be on offer, but choice-based courses will be designed based on the Disciplines within the Curricular Areas to ensure deeper and more rigorous engagement. Choice-based courses and their content will be designed on the basis of the specific nature of disciplines. This phase of the Secondary Stage would be divided into semesters and each choice-based course would be for a semester. Students must complete 16 choice-based courses to complete Grade 12. To ensure that the students have adequate breadth, they have to choose Disciplines from at least three Curricular Areas. To ensure depth, when they choose a Discipline, they have to complete four choice-based courses in that Disciplinel (source-NCFSE 2.4.4.2)

15.7 स्कूली शिक्षा की पुर्नसंरचना की आवश्यकता (Need of redesigning school education system)

पिछली शिक्षा नीति मे ,स्कूली शिक्षा कक्षा 1 से कक्षा 12 तक (6 वर्ष से 18 वर्ष) निर्धारित की गयी थी | कक्षा 1 से पहले की पूर्व प्राथमिक शिक्षा पर ज्यादा जोर नही दिया गया था | कक्षा 1 की प्रवेश की आयु 6 वर्ष निर्धारित थी | 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' मे पूर्व प्राथमिक शिक्षा जिसे 'आरंभिक देखभाल एवं शिक्षा' (early childhood care and education) कहा गया है,को

शीर्ष प्राथमिकता दी गयी है | मातृभाषा एवं स्थानीय भाषाओ को शिक्षण का माध्यम रखने पर ज़ोर दिया गया है | प्रत्येक व्यक्ति मे निहित रचनात्मक क्षमताओ के विकास इस नीति का मुख्य उद्देश्य है| यह नीति इस सिद्धांत पर आधारित है कि साक्षरता एवं संख्या ज्ञान जैसी बुनियादी क्षमताओ के साथ –साथ शिक्षार्थी की तार्किक एवं समस्या समाधान संबंधी संज्ञानात्मक क्षमताओ का विकास होना चाहिये|

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सार्वभोमिक पहुच,वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता(social justice and equity), वैज्ञानिक उन्नति (scientific progress) ,राष्ट्रीय एकीकरण (national integration),सांस्कृतिक संरक्षण(cultural preservation) के संदर्भ मे भारत की सतत प्रगति एवं आर्थिक विकास का आधार होगा |यह मानव की सम्पूर्ण क्षमता के विकास एवं एक न्यायसंगत और न्यायपूर्ण समाज के गठन और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिये मूलभूत आवश्यकता है |भारत दुनिया का सबसे युवा जनसंख्या वाला देश है|और इन युवाओ को गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसरो की उपलब्धता मानवीय गुणों से युक्त वेश्विक नागरिक बनने मे सहायक होगी |

अपनी प्रगति जानिए

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

4. फाउंडेशनल स्तर का शिक्षण शास्त्रीय आधार होगा?(Pedagogical Basis of foundational level teaching)

A. खेल(play)
B. खोज(explore)
C. गतिविधि(activity)
D. उपरोक्त सभी (all of the above)

5 . मिडिल स्तर ....निर्धारित है |

A. 3 वर्ष
B. 4 वर्ष
C. 2 वर्ष
D. 5 वर्ष

6 . स्कूली शिक्षा के पाठ्यक्रम मे शामिल होंगे?(School education curriculum will include?)

A. आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस (artificial intelligence)
B. मशीन लर्निंग (machine learning)
C. होलिस्टिक हैल्थ (holistic health)
D. उपरोक्त सभी (all of the above)

15.8 सारांश (summary)

शिक्षा एक जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है|आज तेजी से बदल रहे वैश्विक परिदृश्य मे जीवन की प्रक्रियाओ को शिक्षा से जोड़ना नितांत आवश्यक है |जिससे कि हम अपने विधायर्थियों को बेहतर जीवन के साथ ही तेजी से आ रहे परिवर्तनों के प्रति जागरूक कर सकते है|प्रत्येक बच्चे मे जन्मजात प्रतिभाए होती है|जिन्हे खोजा जाना चाहिए ,उनका पोषण करना चाहिए ,उन्हे विकास के पर्याप्त अवसर मिलने चाहिए ,|गुणवत्तापूर्ण सार्वभोमिक शिक्षा इस दिशा मे एक महत्वपूर्ण कदम है |शिक्षण का आधार ;

- ❖ अवधारणात्मक समझ (conceptual understanding)
- ❖ दक्षता आधारित (skill based)

होना आवश्यक है |'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' के अनुसार स्कूली शिक्षा मे मूल्यांकन के लिये

- स्वमूल्यांकन (self evaluation),
- सहपाठी मूल्यांकन(peer evaluation),
- प्रोजेक्ट कार्य(project work)
- प्रदर्शन (demonstration),
- रोल प्ले(role play),
- समूह कार्य (group work),
- पोर्टफोलियो(portfolio)

का समावेशन किया जायेगा |वैश्विक परिदृश्य मे तीव्र गति से हो रहे परिवर्तनों के फलस्वरूप महत्वपूर्ण हो गया है कि बच्चे को जो कुछ भी सिखाया जा रहा हे,उसे तो *वह सीखे ही साथ ही सतत अर्थात सीखते रहने की कला भी सीखे*| शैक्षिक प्रणाली का उद्देश्य अच्छे इंसानो का विकास करना है ,जो तर्कसंगत विचार एवं कार्य करने मे सक्षम हो ;जिसमे करुणा एवं सहानुभूति

(kindness and empathy),साहस एवं लचीलापन (courage and flexibility) ,वैज्ञानिक चिंतन एवं कल्पनाशक्ति (scientific thinking and imagination) तथा नैतिक मूल्य एवं चरित्र (moral values and character) हो|| शिक्षा का उद्देश्य, ऐसे लोग तैयार करना है जो समावेशी एवं बहुलतावादी (inclusive and pluristic) समाज के निर्माण में सहयोग कर सके|नियमित रूप से अधिक रुचिकर ,रचनात्मक ,सहयोगात्मक,खोजपूर्ण गतिविधिया शिक्षण प्रक्रिया मे शामिल होंगी |शिक्षा का उद्देश्य छात्रो को भावी जीवन के लिये तैयार करना तथा उनका सर्वांगीण विकास करना है |

15.9 प्रयुक्त संकेताक्षरों की सूची

आइसीटी	सूचना और संचार प्रोधोगिकी (Information and communication technology)
एनएएस	नेशनल अचीवमेंट सर्वे (national achievement survey)
एनसीईआरटी	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद (National council of education research and training)
एनसीऍफ़एसई	स्कूली शिक्षा के शिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (National curriculum framework for school education)
एनईपी	राष्ट्रीय शिक्षा नीति (national education policy)
एससीईआरटी	राज्य शैक्षिक अनुसंधान परिषद (State council of education research and training)
एसडीजी	सतत विकास लक्ष्य (sustainable development goals)
यूजीसी	विश्वविधालय अनुदान आयोग (university grant commission)
यूनेस्को	सयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वेज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (United nations educational, scientific and cultural organization)

15.10 अभ्यास प्रश्नो के उत्तर (Answer of practice questions)

1 B

2 C

3 D

4 D

5 A

6 D

15.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References)

आधुनिक भारतीय शिक्षा(2004),*राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद*,वर्ष 22 अंक;4,अप्रैल, नई दिल्ली

https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final_HINDI_0.pdf

https://dsel.education.gov.in/

https://samagra.education.gov.in/docs/ss_implementation.pdf

https://ncf.ncert.gov.in/webadmin/assets/b27 retrived on 14 Aug 2023

15.12 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (long answer type questions)

1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुरूप स्कूली शिक्षा की संरचना स्पष्ट कीजिये?

(Discuss in detail structure of school education system according NEP,2020?

2. गुणवत्तापूर्ण स्कूली शिक्षा का मानव जीवन पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है?

(How quality school education influences human life?)

3 .स्कूली शिक्षा मे आरंभिक देखभाल एवं शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालिए ?

(Highlight importance of early childhood care and education in School education?)

इकाई 16 : प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण Universalization of Elementary Education

16.1 प्रस्तावना (Introduction)

16.2 उद्देश्य (Objectives)

भाग-एक Part I

16.3 प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण (Universalization of Elementary Education)

16.3.1 प्रारम्भिक शिक्षा का अर्थ (Meaning of Elementary Education)

16.3.2 सार्वभौमीकरण का अर्थ (Meaning of Universalization)

16.3.2.1सार्वभौमीकरण शिक्षा के पक्ष (Aspects of Universalizing Education)

16.3.2.2 सार्वभौमीकरण की अवस्थाएँ (Stages of Universalisation)

अपनी उन्नति जाँचिए (Check your Progress)

16.4 प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के उद्देश्य (Aims of Universalization of Primary Education)

16.5 प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण की आवश्यकता एवं महत्त्व (Need and Importance of the Universalization of Primary Education)

अपनी उन्नति जाँचिए (Check your Progress)

भाग-दो Part II

16.6. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए किए गए प्रयास

(Efforts made for Universalisation of Elementary Education)

16.6.1 शिक्षा आयोग के परिप्रेक्ष्य में किए गए प्रयास

(Efforts made in the Perspective of Education Commission)

16.6.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 के परिप्रेक्ष्य में किए गए प्रयास

(Efforts made In the Perspective of National Educational Policy-1986)

16.6.3 राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के परिप्रेक्ष्य में किए गए प्रयास

(Efforts made In the Perspective of National Educational Policy-2020)
अपनी उन्नति जाँचिए (Check your Progress)
16.7 सारांश (Summery)
16.8 शब्दावली (Glossary)
16.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)
16.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)
16.11 सहायक / उपयोगी पाठ्यसामग्री (Useful Books)
16.11 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

16.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव का सर्वांगीण विकास शिक्षा से ही संभव है। शिक्षा द्वारा ही मानव की जन्मजात प्रवृत्तियों का मार्गान्तरीकरण व शोधन होता है। अतःशिक्षा की इसी महत्ता को ध्यान में रखते हुए अनेक राष्ट्रों द्वारा प्रारम्भिक शिक्षा को अधिक महत्व दिया है, क्योंकि प्रारम्भिक शिक्षा ही आगे की शिक्षा की नींव होती है, जो बच्चों के भविष्य को सँवारने का मजबूत आधार है। इसलिए भारतीय गणतन्त्र में भी प्रारम्भ से ही सभी के लिए समान अवसरों के प्रावधान के माध्यम से सामाजिक - अर्थिक सुदृढीकरण हेतु सार्वभौमीक प्रारम्भिक शिक्षा की भूमिका को स्वीकार किया गया है । भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व 1857 में अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति का दमन करने के बाद 1858 से में यहाँ सीधे ब्रिटेन की सरकार का शासन स्थापित हो गया। लॉर्ड कैनिंग ने वर्ष 1859 में प्राथमिक शिक्षा पर कर लगाया और इससे प्राप्त धनराशि से प्राथमिक शिक्षा के विकास का उन्नयन के प्रयत्न शुरू किए, किन्तु इससे उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। वर्ष 1881 में उसने भारतीय शिक्षा के सम्बन्ध में सुझाव देने के लिए नियुक्त भारतीय शिक्षा आयोग (हंटर कमीशन) की सिफारिशों के आधार पर स्थानीय निकायों को प्राथमिक शिक्षा के प्रसार के लिए प्रयास शुरू किया। इसके उपरांत भी वे प्राथमिक शिक्षा को जन शिक्षा का रूप नहीं दे सके। इसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय नेताओं ने अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की मांग की। वर्ष 1911 में गोखले ने इसे केंद्रीय धारा सभा में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में एक प्रस्ताव रखा, जिसे सरकार ने अस्वीकार करते हुए उसके लिए प्रयत्न करने का आश्वासन अवश्य दिया। वर्ष 1937 में गांधी जी ने वर्धा शिक्षा सम्मेलन में राष्ट्रीय शिक्षा योजना प्रस्तुत की, किन्तु 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ गया और विकास कार्यों में बाधा आयी। युद्ध समाप्ति के बाद उन्होंने यह

योजना 1944 में प्रस्तुत की। सरकार ने इसे कम समय में पूरा करने का निर्णय लिया, परिणामस्वरूप हमारे देश में प्राथमिक शिक्षा का विकास शुरू हुआ। 15 अगस्त 1947 को हमारा देश स्वतंत्र हुआ और 26 जनवरी 1950 से हमारे देश में अपना संविधान लागू हुआ। इसी समय से हमारे देश में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क करने की ओर ठोस कदम उठाए गए, जिसमें प्रत्येक राज्य के लिए प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण करना एक महत्वपूर्ण लक्ष निर्धारित किया गया जिसके कारण बच्चों के लिए शिक्षा के अधिकार को लागू करने पर विशेष बल दिया गया। लेकिन सुविधाओं की सार्वभौमिकता के अभाव के अंतर्गत दुर्गम और दूरस्थ स्थानों में प्राथमिक विद्यालयों की दूरी 1 किमी. से अधिक होने, आने-जाने के लिए यातायात व्यवस्था न होने के कारण बच्चों को पैदल जाना पड़ता है। इसके अलावा भी विद्यालय की मूलभूत सुविधाओं का उपलब्ध न होने के कारण भी बच्चे प्रारम्भिक शिक्षा से वंचित रहते हैं, जबकि देश में आजादी के बाद से प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए अनेक नीतियाँ एवं शैक्षिक योजनाएँ चलाई गई हैं। इन महत्वपूर्ण योजनाओं के चलते जिस स्तर की सफलता मिलनी चाहिए थी, उतनी नहीं मिल पायी है। यह प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए चिंतनीय विषय है।

16.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप सक्षम होंगे :

1. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण की संकल्पना का वर्णन करने में।
2. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के उद्देश्यों को बताने में।
3. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण की आवश्यकता एवं महत्त्व को समझाने में।
4. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए किए गए प्रयासों का उल्लेख करने में।
5. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण पर विभिन्न शिक्षा नीति के सुझावों की जाँच करने में।

भाग-एक Part I

16.3 प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण (Universalization of Elementary Education)

प्रारम्भिक शिक्षा का किसी निश्चित स्तर तक सभी लोगों के लिये अनिवार्य एवं निःशुल्क रूप से उपलब्ध होना ही प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण है। स्वतंत्रता के बाद से प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण को एक राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप में स्वीकार किया गया है। इसलिए भारत के संविधान में धारा 45 के अंतर्गत निःशुल्क व अनिवार्य एवं

सार्वभौम शिक्षा का प्रावधान किया गया ताकि कक्षा 1 से कक्षा 8 तक 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के सभी बच्चों को प्रारम्भिक स्तर तक निःशुल्क शिक्षा प्रदान की जा सके।, शिक्षा प्रत्येक बच्चे का जन्मसिद्ध अधिकार है। अत: राज्य को जाति, लिंग, धर्म, सामाजिक, आर्थिक स्तर और जन्मस्थान के पक्षपात के बिना हर बच्चे को प्रारम्भिक शिक्षा सुलभ कराने के लिए प्रयास करना चाहिए। प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की संकल्पना निम्नलिखित विद्वानों के कथनों से समझ सकते हैं-

(1) जे. पी. नायक के अनुसार – "शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम बनाने तथा इसे राष्ट्रीय विकास से सम्बद्ध करने की आवश्यकता है। शिक्षा को भारत के जनसाधारण के उस वर्ग की ओर उन्मुख करना है, जो गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे हैं ताकि उनमें आत्म-चेतना जाग्रत हो सके और उनकी उत्पादक क्षमताएँ प्रस्फुटित होकर उन्हें राष्ट्र निर्माण के कार्य में प्रभावी रूप से सहभागी बनने योग्य बनाया जा सके''।

(2) एस. चक्रवर्ती के शब्दों में – "सामाजिक पुनर्निर्माण करने की दृष्टि से, जिसके लिये देश की प्रतिबद्धता है, प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण की समस्या का निःसन्देह निर्णयात्मक महत्त्व है।'' संविधान की धारा 45 के अनुसार 10 वर्ष के अन्दर 6 से 14 वर्ष तक आयु के सभी छात्रों को निःशुल्क शिक्षा देने का संकल्प लिया गया, जो प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु आवश्यक है।

वर्ष 1992 में शिक्षा नीति (1986) की समीक्षा की गई और कुछ संशोधनों को शामिल किया गया और इस संशोधित संस्करण में प्रकाशित किया गया कि 14 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में प्रभावशाली उपलब्धि हासिल करनी है। ग्रामीण क्षेत्र नामांकन न होने और न बने रहने की गंभीर समस्याओं का सामना कर रहे हैं। नामांकन, प्रतिधारण, ग्रेड पुनरावृत्ति आदि में समुदायवार असमानता देश में अभी भी कम से कम एक लाख बस्तियां स्कूली शिक्षा सुविधाओं से वंचित हैं। एक किलोमीटर के भीतर और इसके साथ अपर्याप्त विद्यालय जैसे विभिन्न मुद्दे भी जुड़े हुए हैं। बुनियादी ढांचा, खराब कामकाज वाले स्कूल, उच्च शिक्षक अनुपस्थिति, बड़ी संख्या में शिक्षकों की रिक्तियां, शिक्षा की खराब गुणवत्ता और अपर्याप्त धन जैसे इन सभी मुद्दों के मध्य नज़र देश को अभी भी प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करना बाकी है। अत: यह कहना गलत नहीं होगा कि प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण आज के वैश्विक युग की एक प्रमुख चुनौती है।

16.3.1 प्रारम्भिक शिक्षा का अर्थ (Meaning of Elementary Education)

प्रारम्भिक शिक्षा का अर्थ है - प्रारम्भ में दी जाने वाली शिक्षा या मुख्य शिक्षा, जो कक्षा 1 से कक्षा 8 तक मानी गई है। इसे प्रारंभिक शिक्षा इसलिए कहा है, क्योंकि यह बच्चों को

प्रारम्भ में दी जाती है और मुख्य शिक्षा इसलिए कहा है कि यह आगे की शिक्षा की नींव होती है। इस आधार पर नींव का मजबूत होना आवश्यक है , क्योंकि इसी पर भावी राष्ट्रीय शिक्षा के स्वरूप का निर्माण किया गया है। सामान्यतः भारत में प्रारंभिक शिक्षा को दो भागों में बांटा गया है। निम्न प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा। निम्न प्राथमिक शिक्षा का अर्थ कक्षा 1 से कक्षा 5 तक है। उच्च प्राथमिक शिक्षा कक्षा 6 से 8 तक की शिक्षा से है। इस तरह निम्न एवं उच्च दोनों प्राथमिक शिक्षा को मिलाकर प्रारम्भिक शिक्षा मानी गई है। गांधी जी ने वर्ष 1937 में वर्धा शिक्षा सम्मेलन में राष्ट्रीय शिक्षा योजना प्रस्तुत की जिसमें 7 से 14 आयु वर्ग के बच्चों की कक्षा 1 से 8 तक की शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क करने का प्रस्ताव किया था तभी से प्रारम्भिक शिक्षा का अर्थ कक्षा 1 से कक्षा 8 तक की आधारभूत शिक्षा से माना जाने लगा है। हमारे संविधान की धारा 45 के प्रारंभ में यह घोषणा की गई थी कि संविधान लागू होने के समय से 10 वर्ष के भीतर 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को अनिवार्य एवं निशुल्क शिक्षा प्रदान की जाएगी। इसलिए राष्ट्र निर्माण के लक्ष्य के अनुरूप ही बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009, जिसे 4 अगस्त को भारतीय संसद द्वारा पारित किया गया था उसे 1 अप्रैल 2010 से लागू किया गया है। भारतीय संसद द्वारा अनुच्छेद 21 (ए) में मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा को शामिल करके प्रारम्भिक शिक्षा को हर बच्चे का मौलिक अधिकार बनाया गया है। अब धारा 3(1) अध्याय के अनुसार- आरटीई अधिनियम 2009, "6 से 14 वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक पड़ोस के स्कूल में मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा।" अधिनियम में यह भी प्रावधान है कि प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक किसी भी बच्चे को रोका नहीं जाएगा और निष्कासित नहीं किया जाएगा, या बोर्ड परीक्षा उत्तीर्ण करने की आवश्यकता नहीं होगी। प्रारंभिक शिक्षा न केवल प्रत्येक बालक-बालिका और देश के नागरिक का संवैधानिक अधिकार है बल्कि उस अधिकार की रक्षा और उस अधिकार के अनुरूप सुविधा देना समाज एवं सरकार का दायित्व भी है। इस प्रकार प्रारंभिक शिक्षा हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता है।

16.3.2 सार्वभौमीकरण का अर्थ (Meaning of Universalization)

सार्वभौमीकरण Universalization शब्द **का हिन्दी पर्याय है ।** Universalization शब्द का सर्व प्रथम प्रयोग इंग्लैंड में किया गया था। इंग्लैंड द्वारा प्रारम्भिक शिक्षा को देश के यथा आयु वर्ग के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निशुल्क शिक्षा सुलभ कराने के लिए किया गया था। सार्वभौमीकरण का अर्थ है कि 6-14 आयु वर्ग के शत-प्रतिशत बच्चों को कक्षा 1 से कक्षा 8 तक की शिक्षा सुविधा प्रदान कराना। इनका शत-प्रतिशत नामांकन करना। इन शत-प्रतिशत बच्चों को विद्यालय में रोके रखना,

उन्हें बीच में विद्यालय छोड़कर न जाने देना। और इन शत-प्रतिशत बच्चों को कक्षा 8 उत्तीर्ण कराना। इस दृष्टि से भारत में सार्वभौमीकरण हेतु प्रावधान में अधिकार अधिकतम मुख्य हैं। सभी बच्चों को पढ़ाने हेतु एक निश्चित दूरी तक विद्यालयी सुविधाएँ प्रदान करना अर्थात सभी बच्चों को पढ़ने हेतु शुल्क मुक्त शिक्षा के साथ स्टेशनरी, ड्रेस, मध्याहन भोजन आदि सर्वसुलभ कराई जाय और बालक के घर से एक मील की दूरी के अन्तर्गत प्राथमिक विद्यालय खोलें जाए, जिससे सभी बालक-बलिकाएँ सुगमता पूर्वक स्कूल जा सकें।

16.3.2.1 सार्वभौमीकरण शिक्षा के पक्ष (Aspects of Universalizing Education)

सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा का मूल लक्ष्य है- प्रत्येक बालक विद्यालय में जाए, रहे तथा शिक्षा प्राप्त कर के समाज में आए। सार्वभौमिक शिक्षा के 3 पक्ष हैं-

1. प्रवेश (Enrollment)- प्राथमिक विद्यालयों में प्रवेश सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य है। प्रवेश बढ़ने से शिक्षा को गति मिलती है। परंतु इसमें भी अनेक समस्याएँ हैं। बच्चों का विद्यालयों में नामांकन कराने के बाद भी बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए विद्यालयों में नहीं भेजा जाता है। निर्धनता, अज्ञानता के कारण माता-पिता शिक्षा के महत्त्व को नहीं समझते हैं तथा उन्हें शिक्षा ग्रहण करने के स्थान पर धन कमाने के लिए भेज देते हैं।

2.धारणा (Retention)-धारणा से अभिप्राय बालकों का विद्यालय में नियमित रूप से बना रहना है। प्रायः बालक किसी न किसी कारण अनुत्तीर्ण होते रहते हैं। एक ही कक्षा में एक से अधिक वर्ष तक बालक का रहना, उसकी शिक्षा तथा प्रगति में बाधा उत्पन्न करता है।

3.प्रगति (Success)- शिक्षा के सार्वभौमीकरण की सफलतात तभी संभव है जब सभी बच्चे शिक्षित हो जाए, ऐसा करने के लिए सभी बच्चों को शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

16.3.2.2 सार्वभौमीकरण की अवस्थाएँ (Stages of Universalisation)

प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के चार अवस्थाएँ हैं-

1. सार्वभौमीकरण का प्रावधान (Provision for Universalisation)- सार्वभौमीकरण के प्रावधान से अभिप्राय है कि सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा प्रदान की जाएं जिसके लिए प्राथमिक विद्यालय खोले जाए, तथा विद्यालय इतनी दूरी पर हो कि प्रत्येक बच्चा आसानी से विद्यालय जा सके। घर से एक मील दूरी के अंदर प्राथमिक

विद्यालय खोले जाए । जिन पिछड़े क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालय नहीं हैं वहाँ पर भी विद्यालय खोले जाएं।

2. प्रवेश का सार्वभौमीकरण (Universalisation of Enrollment)- प्रवेश का सार्वभौमीकरण तात्पर्य है कि वांछित आयुवर्ग के सभी बच्चों को विद्यालय में प्रवेश दिया जाए। अर्थात 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के शत-प्रतिशत बच्चों को कक्षा एक से कक्षा 8 में निशुल्क नामांकन कराना । सार्वभौम नामांकन के लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में सरकार ने अनेक कदम उठाये हैं, जिनमें अभिभावकों में जागरूकता पैदा करना, विद्यालयों की स्थिति में सुधार करना, बच्चों के लिए मध्याह्न भोजन की व्यवस्था करना, अनुसूचित जाति व जनजाति के बच्चों को निःशुल्क भोजन और पहनने के लिए निःशुल्क स्कूल ड्रेस उपलब्ध कराना मुख्य है । परंतु यह कार्य कुछ सीमा तक शेष है । साधारणत: ग्रामीण क्षेत्रों, मलिन बस्तियों और झुक्की-झोपडियों में देखा जाता है कि कई कारणों से अधिकतर बालक- बालिकाएँ विद्यालयों में प्रवेश नहीं ले पाते हैं । नामांकन का सार्वभौमीकरण न होने का प्रमुख कारण बच्चों की आर्थिक दशा का खराब होना भी है जो बच्चे अपने माता-पिता के जीविकोपार्जन में सहायता करते हैं। ऐसे बच्चे विद्यालय जाने में असमर्थ रहते हैं। इसके अतिरिक्त माता-पिता की उदासीनता तथा नीरस विद्यालय पाठ्यक्रम भी नामांकन के सार्वभौमीकरण के मार्ग में बहुत बड़ी बाधाएं हैं । अतः प्रवेश की सार्वभौमिकता को गति प्रदान करने के लिए उपर्युक्त कारणों को दूर करने की आवश्यकता है। माता-पिता को अपने बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता के बारे में शिक्षित करना चाहिए। आवश्यक लोगों को वित्तीय सहायता प्रदान करनी चाहिए।

3. अवधारणा का सार्वभौमीकरण (Universalisation of Retention)- अवधारणा का सार्वभौमीकरण का अर्थ है कि प्रत्येक नामांकित बच्चों को विद्यालय में तब तक रोक कर रखा जाए जब तक कि वह निश्चित पाठ्यक्रम पूरा ना कर ले। अर्थात प्रारंभिक शिक्षा में प्रवेश लेने के पश्चात शिक्षा की समाप्ति तक बच्चा विद्यालय में बना रहे। जब तक शत प्रतिशत टिके रहने का लक्ष्य प्राप्त नहीं होगा तब तक प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का उद्देश्य पूरा नहीं होगा । अत: विद्यालय में प्रवेश लेने के बाद बालक को अपने प्राथमिक पाठ्यक्रम के पूरा होने तक वहीं रहना चाहिए। पाठ्यक्रम बीच में छोड़कर जाने की स्थिति न हो। परंतु बहुत अधिक संख्या में विद्यार्थी अपनी शिक्षा पूरी होने से पहले ही विद्यालय छोड़ देते हैं । इससे अपव्यय में बढ़ोत्तरी होती है जो प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण में बाधक हैं।

4. उपलब्धि का सार्वभौमीकरण (Universalisation of Achievement)- उपलब्धि के सार्वभौमीकरण के अंतर्गत शतप्रतिशत सफलता की गारंटी की बात कही -

गई है, जिसमें 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के कक्षा एक से कक्षा 8 तक के सभी बच्चों को उत्तीर्ण कराना है । इसके लिए अधिगम के न्यूनतम स्तरों का विस्तार सभी प्राथमिक विद्यालय में किया जाए। ताकि प्रारंभिक शिक्षा सार्वभौमीकरण का उद्देश्य सफल हो सके। इस प्रकार सार्वभौमीकरण में उपलब्धि से आशय शत प्रतिशत बच्चों की प्राथमिक शिक्षा समय से कराकर उन्हें भविष्य के लिए तैयार करना है । परंतु अधिकतर देखने को मिलता हाई कि वर्ष की समाप्ति तक बच्चे अपना पाठ्यक्रम समय से पूरा नहीं कर पाते जिसका मुख्य कारण प्राथमिक शिक्षा की पाठ्यचर्या का बोझिल होना, विद्यालयों में भवन, फर्नीचर, शिक्षण सामग्री की कमी, शिक्षकों की लापरवाही एवं अधिकतर बच्चों एवं अभिभावकों का शिक्षा के प्रति उदासीन होना है । इसके कारण सार्वभौमीकरण की उपलब्धि नगण्य होती है। अतः शिक्षा के सार्वभौमीकरण के उपलब्धि की सफलता तभी संभव है जब देश का प्रत्येक बालक शिक्षित हो जाए और वह सफल नागरिक बन जाए।

16.4. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के उद्देश्य (Aims of Universalization of elementary Education)

प्रारंभिक शिक्षा प्रत्येक बालक- बालिका के जीवन में अनिवार्य है जिसे सफलतापूर्वक पार करके ही कोई भी बच्चा अपने अभीष्ट लक्ष तक पहुंचता है और एक कुशल नागरिक बनता है। प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का उद्देश्य शिक्षा को सर्वव्यापी बनाते हुए शिक्षित संगठित समाज की स्थापना कर देश का विकास करना है और आर्थिक एवं सामाजिक न्याय का विकास करना। प्रारम्भिक **शिक्षा के** सार्वभौमीकरण **के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-**

1.**ज्ञानार्जन का उद्देश्य:--** ज्ञानात्मक उद्देश्य की पूर्ति में प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण अपरिहार्य साधन है । बच्चों को उनकी मातृभाषा (क्षेत्रीय भाषा) और उनके प्राकृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण का ज्ञान कराना । बच्चों को पर्यावरण प्रदूषण के प्रति सचेत करना, उनमें वैज्ञानिक प्रवृति का विकास करना । बच्चों में शारीरिक श्रम के प्रति आदर भाव पैदा करना और उनमें सृजनात्मकता का विकास करना। बच्चों को पर्यावरण प्रदूषण के प्रति सचेत करना ।

2. बौद्धिक एवं मानसिक विकास का उद्देश्य:-- प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का उद्देश्य बालक का बौद्धिक एवं मानसिक विकास करना है । उनमें आद्यात्मिक एवं वैज्ञानिक प्रवृति का विकास करना ।

3.शारीरिक विकास का उद्देश्य:--प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का उद्देश्य बालकों का शारीरिक विकास करना है। बच्चों को स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का

ज्ञान कराना और स्वास्थ्यवर्द्धक क्रियाओं में प्रशिक्षित करना, क्योंकि "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है।"

4. नैतिक एवं चारित्रिक विकास का उद्देश्य:-- सुचरित्र एवं नैतिक व्यवहार राष्ट्र और समाज की उन्नति करते हैं । अत: प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का उद्देश्य बालकों का नैतिक एवं चारित्रिक विकास करना है

5. सांस्कृतिक विकास का उद्देश्य:-- शिक्षा के सार्वभौमीकरण का उद्देश्य बालकों को सुसंस्कृत एवं परिष्कृत बनाना है। बच्चों को सांस्कृतिक क्रियाओं आदि में भाग लेने की ओर अग्रसर करना और उनमें सांस्कृतिक सहिष्णुता का विकास करना। बच्चों में सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, राजनैतिक और राष्ट्रीय मूल्यों का विकास करना।

6. सामाजिक कुशलता के विकास का उद्देश्य:--प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का उद्देश्य देश के भावी नागरिकों में सामाजिक कुशलता का विकास करना है। बच्चों में सामूहिकता की भावना विकसित करना, उन्हें वर्ग भेद से ऊपर उठाना और सामाजीकरण का विकास करना ।

7. व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास का उद्देश्य:--प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का प्रमुख उद्देश्य बालकों का सर्वांगीण विकास करना है, क्योंकि शिक्षित व्यक्ति ही स्वयं के विकास के साथ-साथ समाज एवं राष्ट्रीय विकास में योगदान देता है ।

8. जीविकोपार्जन का उद्देश्य:-- प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का एक उद्देश्य बालकों में आत्मनिर्भरता की भावना- एवं अपने को कुछ करने योग्य बनाने के लिए प्रोत्साहन देना है। बालकों में प्रारम्भ से ही इसी प्रकार की भावनाएँ होंगी, तभी बालक अच्छे नागरिक बन सकते हैं।

16.5. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण की आवश्यकता एवं महत्त्व (Need and Importance of the Universalization of elementary Education

प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण की प्रगति एवं उससे सम्बद्ध उपलब्धियों का आंकलन उसकी आवश्यकता, महत्त्व एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के आधार पर ही भली-भाँति किया जा सकता है । प्रारम्भिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व निम्नवत हैं-

1. शिक्षा की नींव मजबूत करने के लिए आवश्यक- प्रारम्भिक शिक्षा, भविष्य की शिक्षा की नींव का पत्थर है । किसी भी देश में प्राथमिक शिक्षा में बच्चों को

संप्रेषण करने के लिए भाषा का ज्ञान कराया जाता है। उनमें देखने, समझने की शक्ति विकसित की जाती है। ये सब आगे की शिक्षा प्राप्त करने के साधन होते हैं, इन्हीं पर आगे की शिक्षा निर्भर करती है। अतः प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण प्राथमिक नींव के समान है।

2. व्यक्तित्व निर्माण के लिए आवश्यक- प्रारम्भिक शिक्षा व्यक्तिगत निर्माण का आधार है। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण उनके शिशुकाल में सबसे अधिक होता है। इसलिए प्राथमिक विद्यालय में बच्चों का सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक एवं चारित्रिक विकास किया जाता है।

3. जन शिक्षा के लिए आवश्यक- प्रारम्भिक शिक्षा, जनशिक्षा के लिए आवश्यक है। आज किसी भी देश में प्रारम्भिक शिक्षा सबके लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क है। प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण से कम से कम सभी शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे।

4.स्व-शिक्षा के लिये आवश्यक- दूरस्थ शिक्षा या पत्राचार द्वारा शिक्षा अथवा स्वयं पीढ़ी योजनाओं से व्यक्ति अपने व्यवसाय के साथ-साथ अपनी अभिवृत्ति, कौशल एवं आकांक्षाओं का विकास कर सकता है। प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के द्वारा उच्च शिक्षा के प्रति बालकों में ललक पैदा होती है। स्व-शिक्षा के माध्यम से वह अपना अध्ययन भी व्यवसाय के साथ बनाये रख सकता है।

5. व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिये आवश्यक- प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण व्यक्ति के विकास हेतु एक निश्चित आयु एवं अवधि तक शिक्षा प्राप्त कराने के लिए महत्त्वपूर्ण है। मनुष्य को समाज की मुख्य धारा में शिक्षा की अनिवार्यता ही जोड़ सकती है। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना है तथा शिक्षित व्यक्ति ही स्वयं के विकास के साथ-साथ समाज एवं राष्ट्रीय विकास में योगदान देता है।

6. लोकतन्त्र को सफल बनाने के लिये आवश्यक- प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण लोकतंत्र की सफलता हेतु आवश्यक है क्योंकि अशिक्षा के कारण ही भारत में जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रीयवाद तथा साम्प्रदायिकता जैसी विकराल समस्याएँ आती हैं। अत: शिक्षा अनिवार्य रूप से देश के प्रत्येक बालक को बिना किसी भेदभाव के मिलनी चाहिये, ताकि उन्हें लोकतंत्रीय मूल्यों का ज्ञान हो सके और निर्णय लेने की क्षमताओं का विकास हो तभी देश में लोकतंत्र सफल हो सकता है।

7. राजनैतिक जागरूकता के लिये आवश्यक- प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिक का इसलिए भी महत्त्व है कि नागरिकों में कर्त्तव्य और अधिकारों के प्रति

उत्तरदायित्त्व की भावना जाग्रत होती है। निरक्षर व्यक्ति चालाक और स्वार्थी राजनीतिज्ञों के चक्कर में मतदान का उचित प्रयोग नहीं कर पाते । अत: देश के प्रत्येक नागरिक को शिक्षित करना आवश्यक है ।

8. वर्ग भेद की समाप्ति के लिए आवश्यक- प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण से ही देश में वर्ग भेद की समाप्ति हो सकती है । हमारे देश के सभी वर्गों के बच्चों एवं युवकों को जब शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर एवं सुविधाएँ प्राप्त होंगी तब वर्ग भेद की समाप्ति स्वत: हो जाएगी। हमारे संविधान के अनुच्छेद 29 में स्पष्ट रूप से घोषणा की गई है कि राज्य द्वारा पोषित अथवा आर्थिक सहायता प्राप्त किसी भी शिक्षा संस्था में किसी भी नागरिक को धर्म, मूल, वंश अथवा जाति के आधार पर प्रवेश से वंचित नहीं किया जाएगा ।

9. राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक- मानव संसाधन का विकास शिक्षा द्वारा होता है और जिस राष्ट्र में प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था जितनी अधिक और उत्तम प्रकार की होती है, वह राष्ट्र उतनी ही तेजी से आर्थिक विकास करता है । अत: । उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सभी के लिए परमावश्यक है, तभी राष्ट्र समान उन्नति कर सकता है ।

अपनी उन्नति जाँचिए (Check your Progress)

1. किस आयु वर्ग के बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जाती है?

(अ) 6-13 वर्ष (ब) 6-10 वर्ष

(स) 4-12 वर्ष (द) 6-14 वर्ष

2. नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा किसके द्वारा निर्धारित की गई है -

(अ) अनुच्छेद 21 (ब) अनुच्छेद 21 ए

(स) अनुच्छेद 45 (द) अनुच्छेद 42

3. प्रारंभिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण एक है -

(अ) संवैधानिक प्रावधान (ब) मौलिक अधिकार

(स) उपरोक्त दोनों (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

4. प्रारंभिक शिक्षा के राष्ट्रीय सार्वभौमीकरण लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करें -

(अ) धारणा, प्रगति, नामांकन (ब) प्रावधान, नामांकन, उपलब्धि

(स) पहुंच, धारणा, उपलब्धि (द) पहुंच, प्रावधान, भागीदारी

5. प्रारम्भिक शिक्षा है –

(अ) जन-शिक्षा (ब) सामान्य जन-जीवन की शिक्षा

(स) ए और बी दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

6. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का उद्देश्य हैं –

(अ) नैतिक एवं चारित्रिक विकास (ब) सर्वांगीण विकास

(स) बौद्धिक एवं मानसिक विकास (द) उपरोक्त सभी

भाग-दो Part II

16.6. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए किए गए प्रयास (Efforts made for Universalisation of elementary Education)

राष्ट्रीय मानदण्डों के अनुरूप सभी बालकों को प्रारंभिक शिक्षा उपलब्ध कराना राष्ट्रीय प्रगति के लिए अपरिहार्य आवश्यकता है। राष्ट्रीय उद्देश्यों के अनुकूल समाज के पुनः निर्माण हेतु सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए कुछ महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं वह निम्नलिखित हैं –

- प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) में शिक्षा पर 153 करोड़ रुपये व्यय हुए, जिनमें से 85 करोड़ रुपये शिक्षा के विकास एवं उसके उन्नयन पर व्यय किए गए।
- दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956-61) में शिक्षा पर 237 करोड़ रुपए व्यय किए गए, जिनमें से 95 करोड़ रुपये प्रारम्भिक शिक्षा पर व्यय किए गए। इस योजना के तहत 1957में केंद्र सरकार ने 'अखिल भारतीय प्रारम्भिक शिक्षा परिषद' (All India Council for Elementary Education, AICEE) का गठन किया, जिसके फलस्वरूप प्रारम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए तथा प्रसार कार्य में तेजी आयी।
- तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961-66) में शिक्षा पर 589 करोड़ रुपये व्यय किए गए, जिनमें से 201 करोड़ रुपये प्रारम्भिक शिक्षा पर व्यय किए गए। इससे प्रारम्भिक शिक्षा के लिए विद्यालय और पढ़ने वाले बच्चों की संख्या में निरंतर वृद्धि हुई।

- चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969-74) में शिक्षा पर कुल 786 करोड़ रुपये व्यय किए गए, जिनमें से 239 करोड़ रुपये प्रारम्भिक शिक्षा के विकास पर व्यय किया गया। इसी योजना के अंतर्गत एक शिक्षकीय प्रारम्भिक विद्यालयों की स्थापना में वृद्धि हुई ।
- पाँचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-79) में शिक्षा पर कुल 912 करोड़ रुपये व्यय किए गए, जिनमें से 317 करोड़ रुपये प्रारम्भिक शिक्षा के उन्नयन एवं विकास के लिए व्यय किए गए। इस योजना में विद्यालय के छात्र-छात्राओं के लिए निःशुल्क मध्याह्न भोजन की व्यवस्था की गयी और कमजोर वर्गों के लिए निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें एवं लेखन सामग्री वितरित की गयी। पांचवीं योजना के अंतिम वर्ष 6 - 14 आयु वर्ग के ऐसे बच्चों के लिए, जो किसी कारण औपचारिक शिक्षा का लाभ नहीं उठा पा रहे थे, उनके लिए निरौपचारिक शिक्षा शुरू की गयी।
- छठी पंचवर्षीय योजना में प्रारम्भिक शिक्षा पर 836 करोड़ रुपये शिक्षा पर व्यय किए गए। इस योजना में निरौपचारिक शिक्षा का विस्तार किया गया।
- सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) में शिक्षा पर कुल 7 ,633 करोड़ रुपये व्यय किए गए, जिनमें से 2 ,849 करोड़ रुपये प्राथमिक शिक्षा पर व्यय किए गए। 1987-88 में ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना (Operation Black Board Scheme) शुरू की गयी।
- आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में शिक्षा पर कुल व्यय 19 ,600 करोड़ रुपये था, जिनमें से 9 ,201 करोड़ रुपये प्रारम्भिक शिक्षा पर व्यय किए गए। 1994 में शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े जिलों में 'जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम' (District Primary Education Programme, DPEP) शुरू किया गया।
- नवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) में शिक्षा के लिए कुल 20381.6 करोड़ रुपयों का प्रावधान किया गया। नवम्बर 2000 में 'सर्व शिक्षा अभियान' (Sarva Shiksha Abhiyan) मंजूर किया गया और जनवरी 2001 में इसे शुरू किया गया ।
- दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में 28,750 करोड़ रुपये प्रारम्भिक शिक्षा के प्रसार एवं उन्नयन के लिए खर्च किए गए थे। इस दौरान दिसम्बर 2002 में संविधान में 86 वां संशोधन कर धारा 21-A जोड़ी गयी, जिसके द्वारा 6 -14 आयु वर्ग के सभी बच्चों की निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को उनका मूल अधिकार घोषित किया गया।

- 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) के अंतर्गत प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का लक्ष्य निर्धारित किया गया। प्राथमिक विद्यालय उन स्थानों पर खोले जाने का प्रावधान किया गया जहाँ 1 किमी. की दूरी पर विद्यालय न हो। सभी विद्यालयों में नए कमरे, पुस्तकालयों की व्यवस्था करने का लक्ष्य निर्धारित करने के साथ-साथ कुछ चुने हुए प्राथमिक विद्यालयों में कंप्यूटर शिक्षा व्यवस्था की गयी।
- 12वीं पंचवर्षीय योजना (2012-17) के तहत शिक्षा के अधिकार को अमली जामा पहनाने के लिए राज्य सरकार ने सूबे में 7000 प्राथमिक स्कूल स्थापित करने का लक्ष्य तय किया है। यह स्कूल उन इलाकों में स्थापित किये गए जहां पड़ोस की निर्धारित सीमा में विद्यालय नहीं थे। ड्रॉप आउट दर को 11 से घटाकर पांच प्रतिशत लाने का लक्ष रखा गया। नि:शुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम की कसौटी पर खरा उतरने के मकसद से अतिरिक्त क्लासरूम और विद्यालयों के इर्दगिर्द चहारदीवारी बनाने की बात कही गई। अगली पांच वर्ष की अवधि में 8000 स्कूलों में विकलांग बच्चों की सहूलियत के लिए रैम्प, 1400 स्कूलों में पेयजल सुविधा और 1500 विद्यालयों में शौचालयों का निर्माण करने की योजना बनाई गई।
- 13वीं पंचवर्षीय योजना (2017-22) इस योजना के अन्तर्गत के शिक्षा के अधिकार से कोई भी बच्चा वंचित न हो इसके लिए संसाधनों को, पुस्तकों, क्लास रूम आदि को दूरस्त करने पर बल दिया गया। उपचारात्मक कक्षाओं की पेशकश की गई है। उपचारात्मक कक्षाओं के तहत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़े वर्ग के कमजोर विद्यार्थियों को अलग से पढ़ाया जाएगा ताकि सभी को शिक्षा के समान अवसर प्राप्त हो सके। उपयुक्त प्रयासों के अतिरिक्त ऐसे समग्र कार्यक्रमों की भी आवश्यकता अनुभव की गयी जिनमें समुदायों की भी सहभागिता हो। अतः 73 वें एवं 74 वें संशोधन अधिनियमों के बनने के पश्चात अस्तित्व में आयी पंचायती राज संस्थाओं एवं शहरी स्थानीय निकायों को शामिल कर प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण को व्यवस्थित करने का प्रयास किया गया।

16.6.1. शिक्षा आयोग के परिप्रेक्ष्य में किए गए प्रयास (Efforts made in the Perspective of Education Commission)

देश के सभी बच्चों को अनिवार्य रूप से स्कूली शिक्षा प्रदान करने के लिए कोठारी आयोग ने शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का 6% खर्च करने कि संस्तुति की थी, किन्तु आज तक 4% से अधिक व्यय शिक्षा पर नहीं हो सका। कोठारी आयोग (1964-66) ने

प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए सुझाव दिया कि "संविधान के अनुच्छेद 45 के तहत सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने के लिए निदेशक सिद्धांतों की शीघ्र पूर्ति के लिए कड़े प्रयास किए जाने चाहिए।" स्कूलों में ठहराव और यह सुनिश्चित करना कि स्कूल में नामांकित प्रत्येक बच्चा निर्धारित पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा कर ले।" शिक्षा आयोग ने प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के उन्नयन हेतु निम्नलिखित उपाय बताये हैं-

1. प्रारंभिक शिक्षा सभी विद्यालयों में नि:शुल्क दी जानी चाहिए।

(2) प्रारंभिक स्तर पर पाठ्य-पुस्तकें और लेखन-सामग्री मुफ्त दी जानी चाहिए। विद्यालयों में नये भर्ती होने वाले बच्चों का स्कूल के समारोह में स्वागत किया जाना चाहिए। विद्यालय की वार्षिक परीक्षाओं का परिणाम घोषित होते ही अगले वर्ष की पुस्तकों का पूरा सैट दिया जाना चाहिए, जिससे छात्र अवकाश के दिनों में अगले वर्ष की पढ़ाई कर सकें।

(3) प्रतिभाशाली छात्रों को पुस्तकें खरीदने के लिए अनुदान दिये जाने चाहिए।

(4) प्रारंभिक स्तर की समाप्ति पर किसी भी होनहार बच्चे को आगे पढ़ायी जारी रखने से रुकना न पड़े और इस उद्देश्य से हर जरूरतमन्द बच्चे को पर्याप्त राशि की छात्रवृत्ति दी जानी चाहिए।

(5) स्त्रियों की शिक्षा में आने वाली कठिनाइयों का सामना करने तथा पुरुषों एवं नारियों की शिक्षा के वर्तमान अन्तर को यथाशीघ्र कम करने के लिए साहसपूर्ण प्रयास किये जाने चाहिए।

(6) अनुसूचित जातियों की शिक्षा का वर्तमान कार्यक्रम जारी रहना चाहिये और उसका विकास भी किया जाना चाहिए।

16.6.2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 के परिप्रेक्ष्य में किए गए प्रयास (Efforts made In the Perspective of National Educational Policy-1986)

एनईपी, 1986 की नीति के दस्तावेज़ में कहा गया है कि "प्रारंभिक शिक्षा में दो पहलुओं पर अधिक बल दिया जाए''-

(i) 6- 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों का सार्वभौमिक नामांकन और सार्वभौमिक प्रतिधारण।।

(ii) शिक्षा की गुणवत्ता में पर्याप्त सुधार ताकि 1995 तक सभी बच्चों को 14 वर्ष तक की आयु तक निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जायेगी''।

इस प्रकार एनपीई 1986 में प्राथमिक शिक्षा का लक्षित लक्ष्य 1995 था। शिक्षा नीति, 1986 और इसकी कार्य योजना, 1992 के अनुसरण में प्रारम्भिक शिक्षा को सर्व सुलभ बनाने के उद्देश्य से एक नया कार्यक्रम 'जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम' तैयार किया गया। इसके तहत यह प्रावधान किया गया है कि जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम को प्राथमिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय मिशन के रूप में परिणित किया जायेगा, जिससे कार्य योजना, 1992 के प्रमुख वायदों को पूरा किया जा सके इस कार्य योजना के उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

(1) नामांकन और बीच में पढ़ायी छोड़ने वालों तथा शिक्षा पूरी करने वालों में सामाजिक समूहों के आधार पर अन्तर पाँच प्रतिशत से कम करना।
(2) प्राथमिक शिक्षा बीच में छोड़ने वाले छात्रों की कुल दर 10 प्रतिशत से कम करना।
(3) औसत उपलब्धि स्तर को निर्धारित न्यूनतम स्तर से कम से कम 25% बढ़ाना और सभी प्राथमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों द्वारा मूलभूत साक्षरता और विभिन्न प्रकार की योग्यताओं की उपलब्धियों को सुनिश्चित करना।

सरकार द्वारा एनपीई 1986 में प्रारंभिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने के लिए अनेक कार्यक्रम बनाए गए हैं, जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण कार्यक्रम इस प्रकार हैं-

1. शिक्षा का अधिकार (Right to Education)

प्राथमिक शिक्षा के विकास के लिए तथा शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने के लिए दिसंबर 2002 में संविधान के (86वें संशोधन) अधिनियम, 2002 के भाग III (मूलभूत अधिकार) में एक नयी धारा 21 ए जोड़कर 6-14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को मूलभूत अधिकार बनाने के विचार को प्रस्तुत किया गया। संविधान की धारा 21 ए कहती है कि- 'कानून, संकल्प द्वारा, राज्य अपने अनुरूप 6 से 14 वर्ष कि आयु वर्ग के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा। अब धारा 3 (1) अध्याय के अनुसार- आरटीई अधिनियम 2009, "6 से 14 वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक पड़ोस के स्कूल में मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा।"

2.अनौपचारिक शिक्षा (Non-formal Education)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 ने स्कूल छोड़ने वाले बच्चों, बिना स्कूल वाली बस्तियों के बच्चों, कामकाजी बच्चों और बालिकाओं के लिए जो पूरे दिन स्कूल नहीं जा सकते, के लिए अनौपचारिक शिक्षा के कई व्यवस्थित कार्यक्रमों का सुझाव दिया। शिक्षा के सार्वभौमीकरण की पूर्ति के लिए कामकाजी बालक-बालिकाओं को शिक्षा के अवसर प्रदान करने के लिए अनौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था की गई। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986

द्वारा अनौपचारिक शिक्षा को शिक्षा के एक विकल्प के रूप में अपनाया गया। इस नीति में कहा गया है कि जो बालक-बालिकाएं किन्हीं कारणों से शिक्षा से वंचित रह गए हैं उन्हें अनौपचारिक माध्यम से शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की जाएगी।

3. जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (District Primary Education Programme, DPEP)

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए तथा प्राथमिक शिक्षा प्रणाली में गुणवत्तापूर्ण सुधार करने के लिए में केंद्र द्वारा जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम 1994 (डी0पी0ई0पी0) प्रारम्भ किया गया। इस कार्यक्रम के अंतर्गत जिले में लक्ष्य निर्धारित किया जाता है तथा कार्य नीति बनाई जाती है। DPEP बाहरी सहायता से चलने वाला कार्यक्रम है। परियोजना व्यय का 85% केंद्र सरकार द्वारा तथा शेष 15% सम्बन्धित राज्य सरकारों द्वारा वहन किया जाता है।

4. ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना (Operation Black Board Scheme)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क प्रदान करने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड आरम्भ किया गया। इसके अंतर्गत कम से कम 2 कमरे, 1 बरामदा, 2 शौचालय के पक्के भवन, 2 शिक्षक (जिनमें से एक महिला शिक्षक होगी), पुस्तकालय सामग्री, शिक्षण अधिगम सामग्री (ब्लैकबोर्ड, चाक, डस्टर, नक्शे, विज्ञान किट), टाट-पट्टी, खेल का मैदान व खेल सामग्री उपलब्ध करायी जाएगी। यह योजना प्राथमिक शिक्षा की दशा को सुधारने के लिए बनायी गयी थी। इसका मुख्य उद्देश्य सभी बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था करना था।

5. सर्व शिक्षा अभियान (Sarva Shiksha Abhiyan, SSA)-

6 से 14 वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे को 2010 तक प्रत्येक दशा में 1 से 8 तक की अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने के महत्वाकांक्षी लक्ष्य को लेकर केंद्र सरकार ने वर्ष 2000-2001 के बजट में सर्व शिक्षा अभियान को क्रियान्वित करने की घोषणा की और नवम्बर 2000 में इसे लागू कर दिया। संविधान की धारा 45 के अनुसार प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क एवं अनिवार्य रूप से देश के 6-14 वर्ष की आयु के बच्चों को उपलब्ध कराने हेतु जो निर्देश दिया गया उसे ही सर्वशिक्षा अभियान की संज्ञा दी गयी।

6. मध्याह्न भोजन योजना (Mid-Day Meal Schem)

प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण (U.P.E.) को बढ़ाने तथा साथ-साथ प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों के पोषण की स्थिति में सुधार के लक्ष्य को लेकर विद्यालयों में दोपहर के भोजन की योजना का चरणबद्ध तरीके से विस्तार किया गया है ताकि सभी

राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों को शामिल किया जा सके। शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने तथा सर्व शिक्षा अभियान के लक्ष्य को पूरा करने में सहयोग करने के लिए सरकार ने मध्याह्न भोजन योजना का प्रारंभ किया, क्योंकि देश के कई भागों में गरीबी है। इस कारण बच्चों का प्रवेश विद्यालयों में नहीं हो पाता है। इस समस्या के कारण अधिकांश बच्चे शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। ऐसे बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के लिए, विद्यालयों में नामांकन बढ़ाने, उन्हें विद्यालय में बनाए रखने और उपस्थिति के साथ बच्चों के बीच पोषण स्तर सुधारने के दृष्टिकोण के साथ प्राथमिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पोषण सहयोग कार्यक्रम 15 अगस्त 1995 से शुरू किया गया। वर्ष 1997-98 के अंत तक देश के सभी ब्लॉक में इसे लागू कर दिया गया ।

7. शिक्षा गारं योजना तथा वैकल्पिक एवं अनूठी शिक्षा

(Education Guarantee Scheme and Alternative and Innovative Education)-

सर्व शिक्षा अभियान के कार्यक्रम में सहयोग करने हेतु शिक्षा गारंटी योजना का आरंभ किया गया। शिक्षा गारंटी योजना, जो बच्चे स्कूल नहीं जा पा रहे हैं या जो शिक्षा से अभी तक वंचित हैं, उन्हें शिक्षा के अवसर प्रदान करने के लिए यह योजना चलाई गयी। EGS में ऐसे दुर्गम आबादी वाले क्षेत्रों में ध्यान दिया जाता है, जहाँ एक किलोमीटर की परिधि में कोई औपचारिक विद्यालय नहीं है और विद्यालय जाने वाले 6 से 14 वर्ष के आयु वर्ग के कम से कम 15-25 बच्चे वहाँ मौजूद हों। वैकल्पिक शिक्षा की शुरुआत समाज के वंचित वर्ग के बच्चों- बाल श्रमिक, सड़कों पर जीवन यापन करने वाले बच्चे, प्रवासी बच्चे, कठिन परिस्थिति में रहने वाले बच्चे और 9 वर्ष से अधिक आयु के बच्चों के लिए बनायी गयी है। EGS एवं AIE में देशभर में किशोरावस्था की बालिकाओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

16.6.2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के परिप्रेक्ष्य में किए गए प्रयास (Efforts made In the Perspective of National Educational Policy-2020)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने प्राचीन भारतीय शिक्षा, संस्कृति, सभ्यता और विरासत को आधार बनाकर स्कूली शिक्षा संरचना का पुनर्गठन किया है। 10+2 की शिक्षा संरचना के स्थान पर 5+3+3+4 की नयी शिक्षा संरचना लागू की गई है। इसके अंतर्गत स्कूली शिक्षा का मूलभूत चरण 3 से 8 वर्ष की आयु सीमा के साथ कक्षा-1 और कक्षा-2 सहित पूर्व प्राथमिक शिक्षा के 3 वर्ष और प्रारम्भिक चरण जिसमें 3 वर्ष

(कक्षा 3,4,5) सम्मिलित हैं। 3 वर्ष की मिडिल स्कूल शिक्षा (कक्षा 6,7,8) और चार वर्ष का माध्यमिक शिक्षा चरण (कक्षा 9,10,11,12) सम्मिलित हैं। इस प्रकार इन चरणों का आयु वर्ग 3 से 18 वर्ष का है। यदि यह नए चरण अपनाए गए तो सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा का अर्थ बदल जाएगा, क्योंकि 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के बजाए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की शिक्षा प्रणाली में 3 से 18 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चे सम्मिलित हैं। इस प्रकार स्कूली शिक्षा 14 वर्ष की बजाए 18 वर्ष की होगी। अतः सार्वभौमीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 3 वर्ष की आयु के सभी बच्चों का नामांकन करना होगा जिसके लिए 100% प्रवेश दर की गणना आवश्यक होगी। इसके अतिरिक्त मूलभूत चरण से प्रारम्भिक चरण तक, प्रारम्भिक शिक्षा चरण से मध्य चरण तक और मध्य शिक्षा चरण से माध्यमिक शिक्षा चरण तक अवधारण दर की गणना करने की आवश्यकता होगी। इस वजह से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने 2030 तक 3 से 18 वर्ष तक की आयु वर्ग के सभी बच्चों के लिए निःशुक्ल एव अनिवार्य गुणवत्ता वाली स्कूली शिक्षा तक पहुँच और भागीदारी हासिल करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया है। पूर्व प्राथमिक विद्यालय से लेकर कक्षा 12 तक सभी स्तरों तक स्कूल में नामांकित और कभी नामांकित न होने वाले बच्चों की परिकल्पना की है। इसके लिए स्कूलों में सार्वभौमिक भागीदारी प्राप्त करने के लिए भारत सरकार ने समग्र शिक्षा कार्यक्रम लागू करके स्कूलों में सार्वभौमिक भागीदारी सुनिश्चित करने का लक्ष्य रखा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 ने शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु निम्न सुझाव दिये गए हैं-

- शिक्षा के सार्वभौमीकरण का सर्वप्रथम पहलू 2030 तक स्कूली शिक्षा में 100 % सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) प्राप्त करना।
- 3- 18 वर्ष तक के बच्चों को शिक्षा के लिए पूरे देश में समान प्रवेश प्रणाली तथा समान अवधि की शिक्षा होनी चाहिए।
- प्रारम्भिक शिक्षा में सुधार वांछित दिशा तथा मूर्त रूप में होने चाहिए।
- बालकों के संज्ञानात्मक अधिगम में वृद्धि होनी चाहिए।
- विद्यालयों में शारीरिक दंड की प्रथा को बिलकुल समाप्त कर देना चाहिए।
- छात्रों को व्यावसायिक ज्ञान उनकी सुविधानुसार दिया जाना चाहिए।
- अनिवार्य एवं निशुल्क प्राथमिक शिक्षा संबंधी कानून को कठोरता के साथ लागू किया जाए।

- 1 किलोमीटर के अंदर प्राथमिक और 2 से 3 किलोमीटर के अंदर उच्च प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध करा दी जाए।
- विद्यालयों में बच्चों का प्रवेश कराने पर ही लोगों को नागरिक सुविधा दी जाए। जनसंख्या नियंत्रण परिवार नियोजन सभी व्यक्तियों पर समान रूप से कानूनी तौर पर लागू किया जाए।
- केंद्रीय एवं प्रांतीय सरकार शिक्षा के समान बजट और योजना बजट दोनों में वृद्धि करें और उसका 50 परसेंट भाग प्राथमिक शिक्षा पर व्यय करें।
- वर्तमान में केवल अनुसूचित जाति और जनजाति के बच्चों को आर्थिक सहायता दी जा रही है। यह सहायता जाति के आधार पर न देकर किसी भी जाति के गरीब परिवार के बच्चों को दी जाए। बच्चों को भी शिक्षा का महत्व स्पष्ट किया जाए। उसकी समस्याओं को समझा जाए उसके साथ प्रेम एवं सहानुभूति पूर्ण व्यवहार किया जाए और उन्हें अध्ययन के लिए अभी प्रेरित किया जाए।

अपनी उन्नति जाँचिए (Check your Progress)

1. प्रारंभिक शिक्षा निम्नलिखित कक्षाओं को कवर करती है -
(अ) केजी से कक्षा 4 तक (ब) कक्षा 1 से 4 तक
(स) कक्षा 1 से 8 तक (द) कक्षा 1 से 12 तक

2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की शिक्षा संरचना है –

(अ) 5+3+2+4 (ब) 5+3+3+4

(स) 5+4+3+3 (द) 5+2+3+4

3. ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना शुरू की गयी –

(अ) पाचवीं पंचवर्षीय योजना में (ब) छठी पंचवर्षीय योजना में

(स) सातवीं पंचवर्षीय योजना में (द) आठवीं पंचवर्षीय योजना में

4. मध्याह्न भोजन योजना शुरू की गयी –

(अ) 15 अगस्त 1992 (ब) 15 अगस्त 1993

(स) 15 अगस्त 1994 (द) 15 अगस्त 1995

5. एसएसए निम्नलिखित के सार्वभौमीकरण के लिए एक कार्यक्रम है -

(अ) प्राथमिक शिक्षा (ब) प्रारंभिक शिक्षा

(स) माध्यमिक शिक्षा (द) उच्च शिक्षा

16.6 सारांश (Summery)

26 जनवरी 1950 को भारतीय संविधान लागू हुआ तब से ही देश में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क करने की ओर ठोस कदम उठाए गए, जिसमें प्रत्येक राज्य के लिए प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण करना एक महत्वपूर्ण लक्ष निर्धारित किया गया जिसके कारण बच्चों के लिए शिक्षा के अधिकार को लागू करने पर विशेष बल दिया गया। भारतीय संविधान की धारा 45 में प्रारम्भिक शिक्षा के सम्बंध में कहा गया है कि-" राज्य संविधान लागू होने के दस वर्ष के अन्दर 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बालकों को नि: शुल्क शिक्षा प्रदान करने का उत्तरदायित्व लेगा।" इस हेतु 1951 से पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा प्राथमिक शिक्षा के उन्नयन हेतु कार्य किए गए। 1957 में केंद्र में 'अखिल भारतीय प्राथमिक शिक्षा परिषद की स्थापना की गई। कोठारी आयोग (1964-66) में शैक्षिक अवसरों की समानता पर बल देकर अपव्यय तथा अवरोधन को रोकने के प्रयास किए गए। राट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) और संशोधित कार्रवाई कार्यक्रम (पीओए) वर्ष 1986 और 1992 में तैयार किया गया, जिसका उद्देश्य सार्वभौमिक नामांकन प्राप्त करना था। 6- 14 वर्ष के सभी बच्चों को बनाए रखना और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना इस हेतु राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 द्वारा ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड का शुभारम्भ किया गया। प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु आश्रम विद्यालय, मध्यान्ह भोजन योजना, सर्वशिक्षा अभियान, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, शिक्षा गारंटी योजना, छात्रवृत्ति योजना, निःशुल्क पुस्तकें एवं निःशुल्क स्कूल पोशाक तथा अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा प्रदान किया जा रहा है, लेकिन अभी भी प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिकता में प्रमुखत: तीन समस्या विद्यमान हैं-(1) सुविधाओं की सार्वभौमिकता का अभाव (2) नामांकन की सार्वभौमिकता का अभाव **3. शिक्षा को मध्य में छोड़ने की सार्वभौमिकता।**भारतीय संसद द्वारा दिसंबर 2002 में संविधान के (86वें संशोधन) अधिनियम, 2002 के भाग III (मूलभूत अधिकार) में एक नयी धारा 21 ए जोड़कर 6-14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाने को प्रस्तुत किया गया। यानी

अनुच्छेद 21 (ए) में मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा को शामिल करके, "राज्य 6-14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा इस तरह से प्रदान करेगा जैसा कि राज्य कर सकता है।" यह स्पष्ट है कि अनिवार्य शिक्षा अधिनियम हालांकि नया नहीं है, शिक्षा के अधिकार को संविधान में मौलिक अधिकार के रूप में शामिल करने से यह अधिनियम अद्वितीय बन जाता है। अधिनियम में यह भी प्रावधान है कि प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक किसी भी बच्चे को रोका नहीं जाएगा और निष्कासित नहीं किया जाएगा, या बोर्ड परीक्षा उत्तीर्ण करने की आवश्यकता नहीं होगी।

16.7 शब्दावली / कठिन शब्द (Glossary/ Difficult Words)

सार्वभौमीकरण- सार्वभौमीकरण का अर्थ शैक्षिक अवसरों के विस्तार से है, **जो** सभी के लिए है, **जिसमें** 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चे निःशुल्क एवं अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर सकें । निःशुल्क शिक्षा का अर्थ फीस न होना, निःशुल्क पुस्तकें तथा कॉपी-पेन्सिल इत्यादि से है। कोई भी बच्चा प्रारम्भिक शिक्षा के अधिकार से वंचित न हो ।

प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण- इसका अर्थ है 100 प्रतिशत नामांकन और देश के सभी बच्चों को स्कूली शिक्षा सुविधाओं के समान अवसर प्रदान करना है ।अर्थात 6 से 14 आयु वर्ग के शत –प्रतिशत बच्चों को कक्षा 1 से कक्षा 8 तक की शिक्षा सुविधा सुलभ कराना, इन शत –प्रतिशत बच्चों को कक्षा 1 से कक्षा 8 तक में नामांकन कराना, इन शत –प्रतिशत बच्चों को विद्यालय में रोके रखना, उन्हें बीच में विद्यालय छोड़ कर न जाने देना और इन शत –प्रतिशत बच्चों को कक्षा 8 उत्तीर्ण कराने में सफलता प्रदान करना है ।

16.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Practice Questions)

भाग-1 (Part-1)

उत्तर-1 (द) 6-14 वर्ष
उत्तर-2 (ब) अनुच्छेद 21 ए
उत्तर-3 (स) उपरोक्त दोनों
उत्तर-4 (ब) प्रावधान, नामांकन, उपलब्धि
उत्तर-5 (स) अ और ब दोनों
उत्तर-6 (द) उपरोक्त सभी

भाग- 2 (Part-II)

उत्तर-1 (स) कक्षा 1 से 8 तक

उत्तर-2 (ब) 5+3+3+4

उत्तर-3 (स) सातवीं पंचवर्षीय योजना

उत्तर-4 (द) 15 अगस्त 1995

उत्तर-5 (ब) प्रारंभिक शिक्षा

16.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Reference Books)

राजपूत, जे0 एस0 (1994) : प्रारम्भिक शिक्षा का सर्वजनीकरण परिप्रेक्ष्य, नई दिल्ली, अंक-3, पृ0 सं0 125-139 शर्मा ओ0 पी0 (2010) : खाद्य सुरक्षा : सामाजिक विकास की पहल, अग्रवाल पब्लिकेशन, नई दिल्ली, अंक-10, पृ0 सं0 23, 26

16.10 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Books)

गुप्ता, एस0 पी0 (2011), भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एव समस्याएँ, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद। गुप्ता, महावीर प्रसाद एवं ममता (2012), भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ, साहित्य प्रकाशन,आगरा माथुर एस0 एस0 (2015), शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक आधार, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

मुखर्जी, एस0 एन0 (1996) , एजुकेशन इन इंडिया : टुडे एण्ड टुमारो, बड़ौदा बुक डीपो, नई दिल्ली।

16.11 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

प्रश्न1. प्रारम्भिक शिक्षा से आप क्या समझते हैं ? प्रारभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण की आवश्यकता एवं महत्त्व का वर्णन कीजिए।

प्रश्न2. सार्वभौमीकरण से आप क्या समझते हैं? सार्वभौमीकरण की अवस्थाओं का वर्णन कीजिए।

प्रश्न3. सार्वभौमीकरण के उद्देश्यों एवं पक्षों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के परिप्रेक्ष्य में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए किए गए प्रयासों की विवेचना कीजिए।

प्रश्न5. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रयासों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

प्रश्न6. प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए बनायी गयी योजनाओं एवं कार्यक्रमों का उल्लेख कीजिए।

इकाई 17 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा की समस्याएं, समस्याओं के संभावित समाधान

Problems of Basic and Elementary Education, Possible Remedies of the problems

17.1 प्रस्तावना

17.2 उद्देश्य

17.3 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा

17.3.1 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति

17.3.2 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा की समस्याएं

17.3.3 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा के संभावित समाधान

17.3.4 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा हेतु शिक्षक शिक्षा

17.4 सारांश

17.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

17.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

17.7 निबंधात्मक प्रश्न

17.1 प्रस्तावना:

शिक्षा मानव की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है | भारत एक विशाल देश होने के कारण यहाँ की सभी प्रकार की आवश्यकताएं भी विशाल हैं | विशाल जन समूह को शिक्षित करना एक चुनौती है| शिक्षा मनुष्य में मानसिक एवं आर्थिक विकास लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, साथ ही समाज की सोच को उन्नत करती है और राष्ट्र के विकास में सहायक होती है | शिक्षा समाज

में व्याप्त असमानताओं को दूर करने में तथा राष्ट्र में समान विकास लाने में सहायक होती है | किसी भी राष्ट्र में जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर बढते जाता है, वैसे-वैसे राष्ट्र का विकास भी होते जाता है, जिसको हम विकसित और विकासशील देशों में शिक्षा के स्तर और विकास की तुलना से जान सकते हैं| सकारात्मक शिक्षा राष्ट्र को उत्तम नागरिक प्रदान करती है जो कि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है| विशाल जन समूह के साथ- साथ भारत की जैव विभितता, भौगोलिक स्थिति, संस्कृति, खान-पान, जाति,धर्म विभिन्न प्रकार की बोली एवं भाषाएँ शिक्षा के प्रति हमारी चुनौतियों को बढ़ावा देती हैं| इन चुनौतियों को हमें स्वीकार कर प्रत्येक नागरिक को शिक्षित करके राष्ट्र को विकास की गति प्रदान करना है| स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत की शैक्षिक आवश्यकताएं ब्रिटिश कालीन भारत से अलग थी| इसी कारण भारत में शिक्षा के बिभिन्न स्तरों में वांछित सुधार लाने एवं शिक्षा के पुनर्गठन के लिए समय समय पर भारत सरकार द्वारा भिन्न –भिन्न आयोगों का गठन किया गया| स्वतंत्रता प्राप्ति के समय 6 से 11 आयु वर्ग के केवल 30% बच्चे बेसिक शिक्षा प्राप्त कर रहे थे जो कि निम्नतम स्तर पर था जिस पर तुरंत ध्यान देना आवश्यक था क्योंकि प्राथमिक शिक्षा के बिना उच्च शिक्षा में प्रवेश करना संभव नहीं होता| अत: तत्कालीन केन्द्रीय सरकार ने संबिधान के अनुच्छेद 45 में स्पष्ट रूप से 6 से 11 वर्ष आयु वर्ग के सभी बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क, सार्वभौमिक तथा अनिवार्य बनाने की घोषणा की | इस का उद्देश्य देश की शिक्षा की बुनियाद को मजबूत करना था, इसी कारण बेसिक शिक्षा को बुनियादी शिक्षा भी कहा गया| 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों के लिए बेसिक शिक्षा को प्रारंभिक शिक्षा भी कहा जाता है , इन वर्षों को बच्चों के लिए महत्वपूर्ण बुनियादी वर्ष माना जाता है जब उनके जीवन की आधारभूत बातें सुदृढता प्राप्त करती हैं, उनका व्यक्तिगत कौशल, उनकी समझ, भाषागत योग्यता एवं परिष्कृत रचनात्मकता आदि विकसित होती है |

बेसिक शिक्षा पद्दति एक राष्ट्रीय शिक्षा पद्दति है, जो गांधीजी के द्वारा सम्पूर्ण देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनायीं गयी थी, यह पद्दति गाँधी जी के आदर्श यथार्थवाद पर आधारित है| जिसमे गांधीजी ने व्यवसायिक तथा हस्त कला की शिक्षा बेसिक स्तर से ही विद्यार्थियों को देने पर बल दिया| ज्ञान के सन्दर्भ राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मानना है कि , “ज्ञान के परिदृश्य में पूरा विश्व तेजी से परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है | बिग डेटा, मशीन लर्निंग और आर्टिफीसियल इंटेलीजेंस जैसे क्षेत्रों में हो रहे बहुत से बैज्ञानिक और तकनीकी विकास के कारण शिक्षा की आवश्यकता एवं सञ्चालन का तरीका भी बदल जायेगा | इस कारण वैश्विक पारिस्थिति में तीव्र गति से आ रहे परिवर्तनों की वजह से यह जरूरी हो गया है कि बच्चों को जो सिखाया जा रहा है, उसे तो सीखें ही और साथ ही वे सतत सीखते रहने की कला भी सीखें” | राष्ट्रीय नई शिक्षा नीति 2020 का लक्ष्य हमारे देश के विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करना है|

17.2 उद्देश्य

इस ईकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा को समझ सकेंगे |

बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा की समस्याओं को समझ सकेंगे |

बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा की समस्याओं के संभावित समाधान बता सकेंगे |

बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षाहेतु शिक्षक-शिक्षा को समझ पाएंगे |

विद्यार्थियों में आत्मनिर्भरता की भावना का विकास कर सकेंगे |

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुरूप बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा में हुए बदलाओं को समझ सकेंगे |

बाल केन्द्रित शिक्षा पर आधारित पाठ्यक्रम के महत्त्व को समझ पायेंगे |

17.3 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा

गांधी जी के सुझाव पर भारत की प्राथमिक शिक्षा में नियोजित रूप से सुधार लाने के लिए सन 1937 में अखिल भारतीय शिक्षा सम्मलेन का आयोजन वर्धा में किया गया| जिसमें सात राज्यों के शिक्षा मंत्रियों, शिक्षा शास्त्रियों, विचारकों एवं राष्ट्रीय नेताओं को आमंत्रित किया गया| वर्धा में होने के कारण इस सम्मेलन को वर्धा शिक्षा सम्मलेन कहा गया| जिसमें गाँधी जी ने प्राथमिक शिक्षा से सम्बंधित अपने विचार प्रमुखता से रखे| जिसमें उन्होंने व्यावसायिक एवं हस्तकलाओं की शिक्षा देने की बात कही जिसे प्राथमिक शिक्षा, बुनियादी शिक्षा, बेसिक शिक्षा, बुनियादी तालीम आदि नाम दिया गया | बेसिक शिक्षा में शिक्षा सम्बंधी निम्नलिखित बिंदुओं को समायोजित करने का सुझाव दिया गया-

- 7 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था हो |
- प्राथमिक शिक्षा सभी के लिए सामान हो,
- शिक्षा का माध्याम मातृभाषा हो |
- शिक्षा देश के ग्रामीण जनों के अनुरूप हो |
- कृषि एवं भारतीय कौशलों की शिक्षा दी जाय|
- शिक्षा हस्त कौशलों के माध्यम से दी जाय |

- शिक्षा को स्वालम्बी बनाया जाय |

फरवरी 1938 में जाकिर हुसैन समिति ने उपरोक्त बिंदुओं पर आधारित अपना प्रतिवेदन दिया जिसको स्वीकार कर तत्कालीन कांग्रेस शासित राज्यों में लागू करने का निर्णय लिया गया |

बेसिक शिक्षा के अनुसार पाठ्यक्रम के अंतर्गत निम्नलिखित क्रिया प्रधान विषयों को प्रमुख स्थान दिया गया है-

आधारभूत हस्तशिल्प एवं उद्योग- इसके अंतर्गत कृषि, कताई-बुनाई, बागवानी, काष्ठ कला खिलौने बनाना, मिट्टी का काम, पुस्तक कला, मछली पालन आदि | बालिकाओं के लिए गृह विज्ञानं एवं क्षेत्रीय आवश्यक्ताओं के अनुरूप कोई अन्य शिक्षाप्रद हस्तशिल्प| राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने बेसिक शिक्षा को '5+3+3+4' के शिक्षण शास्त्रीय आधार पर एक नई व्यवस्था में पुनर्गठित करने की बात कही है | जो की 10+ 2 वाली स्कूली व्यवस्था से अलग है | 10+2 की व्यवस्था में कक्षा -1 से पूर्व शिक्षा की व्यवस्था नही थी| जबकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत प्रारंभिक शिक्षा में बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा ईसीसीई (Early Childhood Care Education) को लागू किया गया है जिसका उद्देश्य बच्चे को कक्षा-1 में प्रवेश हेतु तैयार किया जा सके|

स्व मूल्यांकन हेतु अभ्यास प्रश्न

(प्रश्न1)राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसार विद्यालयी शिक्षा की सरंचना किस प्रकार की है ?

(प्रश्न2) ई सी सी ई का पूर्ण रूप क्या है ?

(प्रश्न 3)1937 में अखिल भारतीय शिक्षा सम्मलेन कहाँ आयोजित किया गया ?

(प्रश्न 4) 1938 में किस समिति ने बेसिक शिक्षा पर अपना प्रतिवेदन दिया ?

17.3.1 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति

जैसा हम सब जानते हैं कि, बेसिक शिक्षा, शिक्षा की बुनियाद होती है और बुनियाद को हम जितना मजबूत करेंगे भवन उतना ही मजबूत बनेगा | राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रारंभिक पंक्तियों में लिखा गया है कि "शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने, एक न्यायसंगत और न्याय

पूर्ण समाज के विकास को बढ़ावा देनें के लिए मूलभूत आवश्यकता है" | और इस आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा को मजबूती देना होगा जिससे कि विद्यार्थी आगे की माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा को पूर्ण लगन एवं मनोयोग से प्राप्त कर सके | भारत द्वारा 2015 में अपनाये गए सतत विकास एजेंडा 2030 (Sustainable Development Growth SDG-4) के लक्ष्य 4 में परिलक्षित वैश्विक शिक्षा विकास एजेंडा के अनुसार विश्व में 2030 तक सभी के लिए समावेशी और गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवन पर्यंत शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा दिए जाने का लक्ष्य है| राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मानना है कि "सीखने के परिणामों की वर्तमान स्थिति और जो आवश्यक है, उनके बीच की खायी को प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और उच्चतर शिक्षा के माध्ययम से शिक्षा में उच्चतम गुणवत्ता, समान हिस्सेदारी एवं सिस्टम में अखंडता लाने वाले प्रमुख सुधारों के जरिये पाटा जाना चाहिए" |

वर्तमान में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, 10 + 2 स्कूली व्यवस्था को 3 से 18 वर्ष के सभी बच्चों के लिए पाठ्यचर्या और शिक्षण शास्त्रीय आधार पर '5+3+3+4' की एक नई व्यवस्था में पुनर्गठित करने की बात करती है | शिक्षा की पूर्व व्यवस्था में 3 से 6 वर्ष के बच्चों को 10 + 2 व्यवस्था में शामिल नहीं किया गया था | नई व्यवस्था में 3 वर्ष के बच्चों को शामिल कर प्रारंभिक शिक्षा के अंतर्गत बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा ईसीसीई(Early Childhood Care and Education) की एक मजबूत बुनियाद को शामिल किया गया है | इसका उद्देश्य यह है कि पहली कक्षा में प्रवेश के लिए बच्चे पूरी तरह से तैयार हों | ऐसा माना गया है कि बच्चे के मष्तिष्क का 85 प्रतिशत भाग का विकास 6 वर्ष की आयु तक हो जाता है इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि 6 वर्ष तक के बच्चों की देखभाल ईसीसीई के अनुरूप हो |

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसार "ईसीसीई (Early Childhood Care and Education) के अंतर्गत मुख्य रूप से लचीली, बहुआयामी, बहुस्तरीय खेल आधारित गतिविधि आधारित और खोज आधारित शिक्षा को शामिल किया गया है | इसके अंतर्गत अक्षर,भाषा, संख्या,गिनती,रंग, आकार, इनडोर एवं आउटडोर खेल, पहेलियाँ और तार्किक सोच, समस्या सुलझाने की कला, चित्रकला, शिल्प कला, नाटक , कठपुतली संगीत तथा अन्य गतिविधियों के साथ अन्य कार्य जैसे सामजिक कार्य मानवीय संवेदना शिष्टाचार, नैतिकता, व्यक्तिगत, समूह में कार्य करना एवं सार्वजनिक स्वच्छता के साथ आपसी सहयोग को विकसित करने पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया है" |

ईसीसीई (Early Childhood Care and Education) का समग्र उद्देश्य बच्चों का शारीरिक-भौतिक विकास, संज्ञानात्मक विकास , समाज –संवेगात्मक- नैतिक विकास, सांस्कृतिक विकास एवं संख्यात्मक ज्ञान के अधिकतम परिणामों को प्राप्त करना है | राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में यह कल्पना की गई है कि " 5 वर्ष की आयु से पहले प्रत्येक बच्चे का प्रारंभिक कक्षा " बालवाटिका"

में प्रवेश किया जाएगा जिसमे एक योग्य ईसीसीई शिक्षक है | इस प्रकार के शिक्षकों को शुरुवाती कैडर को तैयार करने के लिए आँगन वाड़ी कार्यकत्रियों/ शिक्षकों को एनसीईआरटी द्वारा विकसित पाठ्यक्रम के अनुसार एक व्यवस्थित तरीके से प्रशिक्षण दिया जाएगा | वर्तमान समय ईसीसीई की सभी तक पहुँच नहीं होने के कारण बच्चों का बड़ा हिस्सा कक्षा -1 में प्रवेश पाने के कुछ ही सप्ताह उपरांत अपने सहपाठियों से पिछड़ जाता है, जिसके निवारण के लिए एनसीईआरटी एवं एससीईआरटी के द्वारा कक्षा 1 के विद्यार्थियों के लिए अल्पकालीन 3 माह का खेल आधारित "स्कूल तैयारी मोड्यूल" बनाया जाएगा जिससे यह सुनिश्चित करने में मदद मिलेगी कि प्रत्येक विद्यार्थी स्कूल के लिए तैयार हो" |

स्व मूल्यांकन हेतु अभ्यास प्रश्न

(प्रश्न 5) SDG-4 का पूर्ण रूप क्या है और यह किससे सम्बंधित है?

(प्रश्न 6) सभी के लिए समावेशी और गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवन पर्यंत शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा दिए जाने का लक्ष्य किस वर्ष तक रखा गया है ?

(प्रश्न7) बालवाटिका किस उम्र तक के बच्चों के लिए निर्धारित है ?

(प्रश्न 8) एन.सी.ई.आर.टी. का पूर्ण रूप है ?

17.3.2 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा की समस्याएं

बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा के सञ्चालन में बहुत सी समस्याएं हैं जिनका समय समय पर निराकरण किया गया परन्तु आज भी कुछ समस्याएं बनी हुई हैं | जैसा कि हम जानते हैं कि बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा 6 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए अनिवार्य की गई है| जिसके अंतर्गत कक्षा 1 से कक्षा 8 तक की कक्षाएं संचालित की जाती हैं | कक्षा 1 में प्रवेश लेने वाला विद्यार्थी कक्षा 8 में उत्तीर्ण होने से पूर्व विद्यालय छोड़ देता है तो यह माना जाता है कि उसने प्राथमिक शिक्षा पूर्ण नहीं की इस समास्या को अपव्यय का एक कारण माना गया है | विद्यालय छोड़ने पर उसकी शिक्षा एवं साक्षरता पर प्रभाव तो पड़ता ही है साथ ही ऐसे विद्यार्थियों के विद्यालय छोड़ने के कारण राष्ट्रीय साक्षरता दर पर भी प्रभाव पडता है| राष्ट्रीय साक्षरता दर को बढ़ाने के लिए सरकार ने प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य कर शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2010 को लागू किया | सरकार 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को उनके नजदीकी प्राथमिक विद्यालयों में प्रवेश दिलाने का भरसक प्रयास कर रही है| इसके साथ-साथ विद्यालयों से ड्रॉप आउट बच्चों को पुन: प्राथमिक शिक्षा से जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है|

प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी भी बेसिक एवं प्रराम्भिक स्तर पर एक समस्या बनी हुई है | भारत एक विशाल जनसँख्या वाला देश होने के कारण यहाँ प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में शिशु जन्म

लेते हैं | जिनको 5 वर्ष पूर्ण होने पर प्राथमिक शिक्षा से जोड़ना सरकार का उद्देश्य है | जिसे प्रशिक्षित शिक्षकों के द्वारा ही प्राप्त कराया जा सकता है | भारत की भौगोलिक स्थिति एवं शिशु जन्मदर के अनुरूप प्राथमिक स्तर पर प्रशिक्षित शिक्षकों की संख्या उस अनुपात में नहीं है जिसमें की होनी चाहिए थी | सरकारी विद्यालयों की तुलना में निजी विद्यालयों में ये समस्या अधिक है| प्रशिक्षित शिक्षकों को प्रशिक्षण के दौरान बाल मनोविज्ञान सहित कई अन्य कौशलों का ज्ञान कराया जाता है| जो शिक्षकों को शिक्षण के दौरान बाल मन को समझने में सहायक होता है | 5 वर्ष से पूर्व के बच्चों की बाल्यावस्था की शिक्षा की आवश्यकताओं को आज भी हम पूर्ण नही कर पा रहे हैं हांलाकि इस ओर सरकार का विशेष ध्यान इस बात को दर्शाता है की इस आयु वर्ग के बच्चों को उनकी मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित नहीं रखा जा सकता है |

बाल्यावस्था देखभाल आज भी प्रारम्भिक शिक्षा के लिए एक बड़ी चुनौती बनी हुई है | वर्तमान समय में विशेष रूप से सामाजिक – आर्थिक रूप से वंचित पृष्टभूमि के करोड़ों बच्चों के लिए गुणवत्ता पूर्ण प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा उपलब्ध नहीं है | इसी कारण कक्षा -1 में प्रवेश लेने वाले बच्चों की संख्या में वांछनीय वृद्दि नही हो पा रही है| हमारे देश की अधिकाँश आबादी आज भी गांवो में रहती है, हमारे देश में आज भी बहुत से गाँव सामजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े हैं , ऐसे गाँवों में प्रारंभिक शिक्षा की गति को बढ़ाना एक चुनौती बनी हुई है |

प्रारम्भिक स्तर के शिक्षकों का शिक्षा के अतिरिक्त अन्य शासकीय कार्यों में संलग्नता भी प्रारम्भिक शिक्षा को चुनौती प्रदान करती है , जिससे शिक्षण कार्य तो प्रभावित होता ही है साथ ही शिक्षक के कार्य कौशल में निरंतरता भी नहीं रह पाती है |

प्रारंभिक शिक्षा में विद्यार्थियों की सीखने की गति बहुत कम है इसके कारणों का पता लगाकर इसका निवारण करना आवश्यक है | राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भी इसको एक चुनौती के रूप में लिया है और इसके अनुसार –“ विभिन्न सरकारी साथ ही गैर सरकारी सर्वेक्षणों से यह संकेत मिलता है की हम वर्तमान में सीखने की एक गंभीर समस्या से जूझ रहे हैं| वर्तमान में बड़ी संख्या में शिक्षार्थियों ने, जिनकी संख्या 5 करोड़ से भी अधिक है – बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान भी नहीं सीखा है’ | बुनियादी साक्षरता का अर्थ मूलभूत स्तर पर पढना, लिखना और अंकगणित से है” |

शिक्षक – विद्यार्थियों का अनुपात भी एक समस्या है, बहुत से प्रारम्भिक विद्यालयों में एकल शिक्षक हैं| और उनको कक्षा-1 से कक्षा 5 तक के सभी नामांकित बच्चों को एक साथ बैठाना पडता है जिससे ना तो शिक्षण कार्य ही सुचारू हो पाता है और ना ही बच्चे कुछ सीख पाते हैं | जबकि प्रत्येक विद्यालयों में शिक्षार्थी-शिक्षक अनुपात (पी. टी. आर.) 30 :1 से कम होना चाहिए| और जिन स्कूलों में सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े बच्चे अधिक संख्या में हों वहां ये अनुपात 25:1 से कम होना चाहिए | मातृभाषा में शिक्षण एक अच्छी पहल है परन्तु स्थानीय भाषाओँ में

बाल साहित्य के पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होने से प्रारंभिक विद्यालयों के विद्यार्थी स्व-अध्याय नहीं कर पाते जिससे उनके शब्दकोष एव पठन में वांछनीय परिवर्तन नही आ पाता |

कुपोषण भी प्रारंभिक शिक्षा में बाधक होता है| यदि बच्चे अपनी बाल्यावस्था में स्वस्थ हों तो वे अपने जीवन की प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने में सक्षम होते हैं यदि वे स्वस्थ न हो और कुपोषित हों तब उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास रुक जाता है | इसके अतिरिक्त बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा की प्रमुख समस्या निम्नलिखित हैं-

- 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के शत प्रतिशत बच्चों को आज भी प्रारम्भिक शिक्षा जो की कक्षा -1 से कक्षा 8 तक की शिक्षा शुलभ नहीं हो पा रही है |
- 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के शत प्रतिशत बच्चों को आज भी प्रारम्भिक शिक्षामें शत प्रतिशत नामांकन का नहीं हो पा रहा है |
- 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के नामांकित बच्चों को शत प्रतिशत विद्यालयों में रोके रखना एक बड़ी समस्या है |
- 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के नामांकित बच्चों को कक्षा 8 उत्तीर्ण कराना भी एक समस्या है क्योंकि बहुत से बच्चे कक्षा 8 उत्तीर्ण करने से पहले विद्यालय छोड़ देते हैं |
- बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय |
- भारत की भौगोलिक परिस्थिति एवं ग्रामीण जीवन |
- तेजी से बढती जनसँख्या |

17.3.3 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा के संभावित समाधान

प्रारंभिक शिक्षा में नामांकन बडाने के लिए सार्थक प्रयास किये जाने चाहिए , नामांकन में वृदि होने से ही प्रारंभिक शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त हो सकेगा | इसके लिए शहरी एवं ग्रामीण छेत्रों में अभियान चलाये जाने की आवश्यकता है | विशेषकर कामकाजी श्रमिक एवं झुग्गी बस्ती में रहने वालों के बच्चों को विद्यालय तक लाने के प्रयास करना होगा | नामांकन में वृदि के लिए सरकार मध्याह्न भोजन, पाठ्य पुस्तक, विद्यालय गणवेश एवं छात्रवृती सहित बहुत सी योजनायें चला रही है , जिसका सार्थक परिणाम देखने को मिल रहा है | इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए सरकार ने शिक्षा का अधिकार अधिनियम भी लागू किया है | साथ ही समग्र शिक्षा कार्यक्रम वर्तमान में चलाया जा रहा है जिसे क्रियान्वित करना शिक्षा विभाग में कार्यरत सभी शिक्षकों एवं अधिकारियों की जिम्मेदारी है |

नामांकन में वृदि जितनी आवश्यक है उतना ही आवश्यक है कि बच्चे विद्यालय में प्रवेश लेने के उपरान्त विद्यालय छोड़कर (dropout) तब तक ना जांए जब तक वे बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा के अंतर्गत कक्षा 8 उत्तीर्ण न हो जांए | यदि कोई बच्चा किसी भी कक्षा से छोड़कर जाता है तो विद्यालय छोड़ने के कारणों का पता लगाकर उसे पुन: नामांकित किये जाने का प्रयास किया जाना चाहिए | भारत सरकार का 2030 तक पूर्व- विद्यालय से माध्यमिक स्तर में 100 % सकल नामंकन अनुपात प्राप्त करने का लक्ष्य है | बच्चों को उनकी रूचि के अनुसार व्यवसाय चुनने हेतु व्यवसायिक शिक्षा पाठ्यक्रम बेसिक स्तर पर प्रारम्भ करने होंगे | विद्यालयी शिक्षा के अंतर्गत शिक्षण व्यवस्था को आकर्षक बनाना होगा जिससे की बच्चे विद्यालय आने में रूचि दिखाएँ और विद्यालय छोड़कर जाने वाले बच्चों की संख्या में निरंतर कमी आती रहे | यदि कोई बच्चा विद्यालय छोड़कर जा रहा है तो उसे वापस विद्यालय में लाने के ठोस उपाय करने होंगे और उसके विद्यालय वापस आने पर उसके पिछड़ने का मूल्यांकन करके उसे मुख्य धारा से जोड़ने के सफल प्रयास करने होंगे जिससे कि वह स्वयं को मुख्य धारा से जोड़ सके| सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े परिवारों के बच्चों के माता-पिता को उनके बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा हेतु विद्यालय भेजने के लिए प्रोत्साहित करना होगा | पर्याप्त प्रयासों में असफल रहने पर ड्रॉपआउट युवाओं को राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान (एन.आई.ओ.एस) के माध्यम से शिक्षित किया जाना चाहिए |

जैसा कि हम जानते हैं कि शिक्षा की प्रक्रिया त्रिआयामी होती है जिसमें शिक्षक, शिक्षार्थी एवं पाठ्यचर्या तीनों ही महत्वपूर्ण होते हैं | शिक्षार्थी को विद्यालय में बनाये रखने हेतु एक रुचिपूर्ण पाठ्यचर्या की आवश्यकता होती है जिससे कि विद्यार्थी विद्यालय आने एवं सीखने में अपनी रूचि दिखाए | विद्यालयी शिक्षा के बेसिक एवं प्रारम्भिक स्तर की प्रत्येक कक्षा के लिए विद्यार्थियों की रूचि को ध्यान में रखकर पाठ्यचर्या निर्माण करना होगा, साथ ही पाठ्यसहगामी क्रियाओं का भी ध्यान रखना होगा | राष्ट्रीय स्तर पर एनसीईआरटी एवं राज्य स्तर पर एससीईआरटी विद्यालयी शिक्षा की पाठ्यचर्या निर्धारित करती है| पाठ्यचर्या जितनी रुचिकर होगी विद्यार्थी उतनी ही गति से अधिगम कर पायेंगे | ऐसा माना जाता है कि 'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क रहता है' | बेसिक स्तर पर विद्यार्थियों के मस्तिष्क को स्वस्थ रखने के लिए उनको शारीरिक रूप से स्वस्थ रखना आवश्यक है| शारीरिक स्वास्थ्य हेतु खेल एवं व्यायाम को पाठ्यचर्या में शामिल करना होगा जिससे कि विद्यार्थी स्वस्थ तो रहेंगे ही साथ ही उनमें समूह में काम करने की भावना का विकास होगा| इनके अतिरिक्त निम्नलिखित समाधानों पर ध्यान देना होगा

- शिक्षा का बजट बढाकर ,शिक्षा पर व्यय को बढाया जाय |
- केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों द्वारा उपलब्ध कराये गये संसाधनों का सही प्रयोग होना चाहिए |
- भौगोलिक परिस्थितियों का ध्यान रखा जाय एवं संसाधन उपलब्ध कराया जाय |

- तेजी से बढती जनसँख्या पर नियंत्रण लगया जाय एवं जनसँख्या नियंत्रण हेतु जागरूकता फैलायी जाय |
- योग्य शिक्षकों की कमी को दूर किया जाय | शिक्षक- शिक्षार्थी अनुपात का ध्यान रखा जाय |
- निर्धन एवं खेतीहर मजदूरों को उनके बच्चों के शिक्षा के लिए प्रेरित किया जाय |
- अशिक्षा एवं पिछड़ेपन को दूर करने के भरसक प्रयास किये जांय |
- शिक्षा हेतु जन सहयोग लिया जाय |
- ब्लाक स्तर पर आवसीय विद्यालय खोले जा सकते हैं |
- सेवारत शिक्षको एवं प्रशासकों की जिम्मेदारी सुनिश्चित की जाय|
- शिक्षा अधिकार अधीनियम का कढ़ाई से पालन कराया जाय |
- अभिभावकों में शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ाई जाय |

17.3.4 बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा हेतु शिक्षक शिक्षा –

शिक्षक अपने विद्यार्थियों के भविष्य को आकार देते हैं और साथ ही राष्ट्र के निर्माण में अपना अमूल्य योगदान देते हैं | कोठारी आयोग द्वारा कहा गया है कि "भारत के भविष्य का निर्माण उसकी कक्षाओं में हो रहा है" जिससे शिक्षको के महत्व का अंदाजा लगाया जा सकता है, क्योंकि शिक्षक राष्ट्र निर्माता होता है | शिक्षक विद्यार्थियों को ज्ञान के साथ-साथ कौशल और नैतिक मूल्य प्रदान करते हैं | बेसिक शिक्षा, शिक्षा की नीव होती है, जो विद्यार्थी को अक्षर ज्ञान से प्रारम्भ कर आगे की शिक्षा प्राप्त करने के लिए मार्गदर्शन करती है, और सही मार्गदर्शन बच्चे के भविष्य को उज्जवल बनाता है | बच्चों के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता होती है | बेसिक अथवा प्रारम्भिक स्तर पर शिक्षकों को प्रशिक्षण देने के लिए सरकार ने जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्थानों (DIETs) को जिम्मेदारी दी है | जहां प्रशिक्षुओं को क्रियात्मक एवं प्रयोगात्मक पद्दति के आधार पर बाल मनोविज्ञान का ज्ञान कराया जाता है, जिसके अंतर्गत करके सीखना, खेल खेल में सीखना आदि का शिक्षण- प्रशिक्षण कराया जाता है तथा प्रशिक्षुओं को छोटे-छोटे समूहों में बिभाजित कर व्यवहारिक ज्ञान प्रदान किया जाता है| छात्र अध्यापक को इस प्रकार तैयार किया जाता है कि वह विद्यालय में जाकर बच्चों के अंतर्मन को समझ कर उनकी जन्मजात शक्तियों का विकास कर सके | बेसिक शिक्षा के अंतर्गत 6 से 14 आयु वर्ग के बच्चे आते हैं जो कक्षा 1 से 8 तक की कक्षाओं में शिक्षा ग्रहण करते हैं | इन्हीं कक्षाओं के अनुरूप, बाल मनोविज्ञान एवं विद्यार्थियों की रूचि के अनुसार शिक्षण कार्य हेतु प्रशिक्षुओं को

जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्थानों में प्रशिक्षित किया जाता है एवं उनमे पर्याप्त शिक्षण कौशलों का विकास किया जाता है| शिक्षण- प्रशिक्षण केन्द्रों एवं महाविद्यालयों को राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद (NCTE) द्वारा मान्यता प्राप्त होती है तथा निर्देशित एवं नियंत्रित किया जाता है |

एनईपी 2020 के अनुसार ' 5+3+3+4 शिक्षण सरंचना के आधार पर बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा, ईसीसीई (Early Childhood Care Education) के लिए शिक्षकों की व्यवस्था **एनसीईआर**[1] द्वारा विकसित पाठ्यक्रम के आधार पर करने की योजना है, जिसके अंतर्गत 10 + 2 या इससे अधिक योग्यता वाले आंगनबाडी कार्यकत्री/शिक्षक को ईसीसीई में 6 महीने का प्रमाणपत्र कार्यक्रम कराया जाएगा और कम शैक्षिक योग्यता रखने वालों को एक वर्ष का डिप्लोमा कार्यक्रम कराया जाएगा'|

वर्तमान में भारत में शिक्षक शिक्षा दो रूपों में दी जाती है |

1 –सेवा पूर्व शिक्षक शिक्षा

2-सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा

प्राथमिक स्तर पर सेवापूर्व शिक्षक शिक्षा दो भागों में दी जाती है

(a) पूर्व प्राथमिक शिक्षा – जिसके अंतर्गत नर्सरी टीचर ट्रेनिंग (NTT), पूर्व बेसिक अध्यापक प्रशिक्षण, किंडरगार्टन अध्यापक प्रशिक्षण आदि |

(b) प्राथमिक शिक्षक-शिक्षा- बर्तमान में डिप्लोमा इन एलीमेन्टरी एजुकेशन (D. El. Ed.) जो कि पूर्व में बी.टी.सी. के नाम से जाना जाता था, का प्रशिक्षण जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों(DIETs) में दिया जाता है | विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा हेतु सेवा पूर्व अध्यापकों के लिए विशेष शिक्षा में डिप्लोमा इन एलीमेन्टरी एजुकेशन (D.El.Ed.) का पाठ्यक्रम संचालित किया जाता है | वर्तमान में विशेष शिक्षा में यह पाठ्यक्रम नेशनल इंस्टिट्यूट फॉर द एम्पावरमेंट ऑफ पर्सनस विथ विजुवल डिसएबिलिटी (NIEPVD) देहरादून, उत्तराखंड जो कि पूर्व में (NIVH)के नाम से जाना जाता था, में दृष्टिबाधितों को शिक्षित करने के लिए चलाया जाता है | इसी प्रकार माध्यमिक शिक्षा के विद्यार्थियों के शिक्षण हेतु सेवा पूर्व शिक्षक शिक्षा के अंतर्गत बी०एड० पाठ्यक्रम राज्य के बहुत से महाविद्यालयों में संचालित होता है जबकि बी०एड०विशेष शिक्षा चार अलग- अलग तरह की दिव्यांगताओं (IDD, SLD,VI & HI) से सम्बंधित बच्चों के लिए उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्दवानी के शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा के अंतर्गत विशेष शिक्षा विभाग द्वारा यह पाठ्क्रम संचालित किया जाता है |

2- सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा –

सेवा कालीन शिक्षक-शिक्षा उन शिक्षकों को दी जाती है जो एक शिक्षक के रूप में सरकारी अथवा गैर सरकारी विद्यालयों में सेवारत हैं | सेवारत शिक्षकों में विभिन्न प्रकार के शिक्षण कौशलों का विकास करने के लिए एवं नयी योजनाओं/नीतियों से शिक्षकों को रूबरू कराने के लिए जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान के माध्यम से प्रशिक्षण दिया जाता है, जिसके अंतर्गत कार्यशालाओं का आयोजन ब्लॉक एवं जनपद स्तर पर किया जाता है |

स्व मूल्यांकन हेतु अभ्यास प्रश्न

(प्रश्न 9) प्रारम्भिक स्तर पर प्रत्येक विद्यालयों में शिक्षक- शिक्षार्थी अनुपात (पी. टी. आर.)कितना होना चाहिए ?

(प्रश्न 10) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ,पूर्व की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के कितने वर्षों के बाद लागु हुई ?

(प्रश्न 11) (DIET) डायट का पूर्ण रूप क्या है ?

(प्रश्न12) सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े बच्चों हेतु शिक्षक शिक्षार्थी अनुपात (पी.टी.आर.) कितना होना चाहिए?

17.4 सारांश-

इस ईकाई में आपने बेसिक एवं प्रारम्भिक शिक्षा के बारे में अध्ययन किया साथ ही बेसिक एवं प्रारम्भिक शिक्षा के वर्तमान परिदृश्य को जाना | बेसिक एवम प्रारंभिक शिक्षा हेतु शिक्षक-शिक्षा का अध्ययन किया | बेसिक एवं प्रारम्भिक शिक्षा की समस्याएं एवं संभावित समाधानों को जाना | यह ईकाई इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रारंभिक शिक्षा ही विद्यार्थी के भविष्य की नींव होती है | प्रारम्भिक शिक्षा के समय बालक के सीखने की गति सर्वाधिक होती है, इसी कारण इस आयु में बच्चे भाषा , गणित एवं अन्य विषयों को काफी तेजी से सीखते हैं |

बेसिक शिक्षा पद्दति एक राष्ट्रीय शिक्षा पद्दति है, जो गांधीजी के द्वारा सम्पूर्ण देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनायीं गयी थी, यह पद्दति गाँधी जी के आदर्श यथार्थवाद पर आधारित है| जिसमे गांधीजी ने व्यवसायिक तथा हस्त कला की शिक्षा बेसिक स्तर से ही विद्यार्थियों को देने पर बल दिया| ज्ञान के सन्दर्भ राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मानना है कि , "ज्ञान के परिदृश्य में पूरा विश्व तेजी से परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है | बिग डेटा, मशीन लर्निंग और आर्टिफीसियल इंटेलीजेंस जैसे क्षेत्रों में हो रहे बहुत से बैज्ञानिक और तकनीकी विकास के कारण शिक्षा की आवश्यकता एवं सञ्चालन का तरीका भी बदल जायेगा|

वर्तमान में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, 10 + 2 स्कूली व्यवस्था को 3 से 18 वर्ष के सभी बच्चों के लिए पाठ्यचर्या और शिक्षण शास्त्रीय आधार पर '5+3+3+4' की एक नई व्यवस्था में पुनर्गठित करने की बात करती है | शिक्षा की पूर्व व्यवस्था में 3 से 6 वर्ष के बच्चों को 10 + 2 व्यवस्था में शामिल नहीं किया गया था | नई व्यवस्था में 3 वर्ष के बच्चों को शामिल कर प्रारंभिक शिक्षा के अंतर्गत बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा ईसीसीई (Early Childhood Care and Education) की एक मजबूत बुनियाद को शामिल किया गया है | इसका उद्देश्य यह है कि पहली कक्षा में प्रवेश के लिए बच्चे पूरी तरह से तैयार हों | ऐसा माना गया है कि बच्चे के मष्तिष्क का 85 प्रतिशत भाग का विकास 6 वर्ष की आयु तक हो जाता है इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि 6 वर्ष तक के बच्चों की देखभाल ईसीसीई के अनुरूप हो | बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा हेतु शत प्रतिशत नामांकन के प्रयास करने होंगे जिससे कि राष्ट्रीय स्तर पर साक्षरता दर शत प्रतिशत हो सके| प्रारंभिक शिक्षा में नामंकन वृदि से ही उच्च शिक्षा में भी नामांकन में वृद्दि संभव हो पाएगी|

17.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1) 5+3+3+4 **(2)** Early Childhood Care and Education **(3)** वर्धा में **(4)** जाकिर हुसैन समिति **(5)** Sustainable Development Growth, शिक्षा से

(6) 2030 तक **(7)** पांच वर्ष तक के लिए **(8)** नेशनल काउन्सिल फॉर एजुकेसन रिसर्च एंड ट्रेनिंग **(9)** 30:1 **(10)** 34 वर्षों केबाद **(11)** District Institute of Education and Training **(12)** 25:1

17.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

लाल, रमन विहारी, शर्मा,कृष्ण कान्त (2014) भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं , मेरठ : आर० लाल बुक डिपो|

मिश्रा, संत कुमार (2012). भारत में शिक्षा व्यवस्था, मेरठ : आर० लाल बुक डिपो|

शर्मा, आर० ए० (2019) भारतीय शिक्षा प्रणाली का विकास, मेरठ : आर० लाल बुक डिपो|

Aggarwal, J.C.(2012).Development of Education system in India, New Delhi : Shipra Prakashan

https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final_HINDI_0.pdf

17.7 निबंधात्मक प्रश्न

(1) बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा के अंतर्गत शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम किस प्रकार संचालित किया जाता है ?

(2) प्रराम्भिक स्तर पर शिक्षा की मुख्य समस्याएं कौन कौन सी हैं ? इनका समाधान किस प्रकार किया जा सकता है ?

(3) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसार शिक्षा की सरंचना किस प्रकार की है ? प्रारंभिक शिक्षा के सञ्चालन के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने क्या-क्या योजनायें बनायीं हैं?

(4) बेसिक एवं प्रारंभिक शिक्षा के वर्तमान परिदृश्य पर एक विस्तृत निबंध लिखिए |